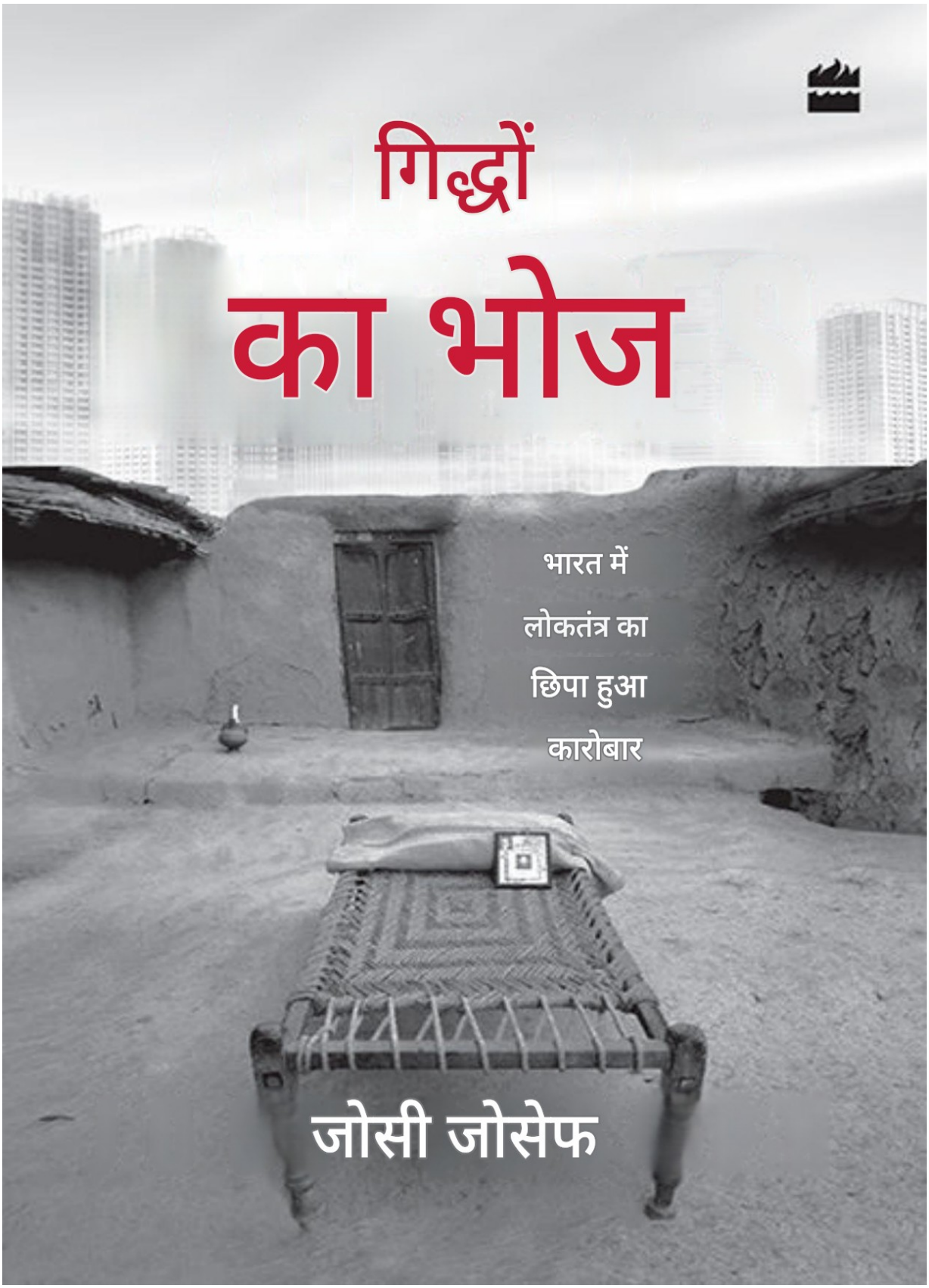
गिद्धों
का भोज
भारत में
लोकतंत्र का
छिपा हुआ
कारोबार
जोसी जोसेफ

Table of Contents

प्रस्तावना
खण्ड एक
भाग दो
भाग तीन
उपसंहार
परिचय
बिचौलिए
1. गली के उस पार रहने वाला मरम्मत करने वाला
2. द माइटी टाइपिस्ट
3. हथियार और बिचौलिए
4. अंदरूनी लोग और अपराधी
अत्यंत निजी निजी क्षेत्र
5. आसमान के लिए लड़ाई
6. हत्या का विश्लेषण
7. अस्थायी ऑपरेटर
बड़ी लीग
8. खेल के उस्ताद
9. असाधारण सज्जनों की लीग
10. श्री अंबानी के लिए एक घर नोट्स
स्वीकृतियाँ
किताब के बारे में
लेखक के बारे में
कॉपीराइट
जहां मुर्दे भी डरते हैं
1
शीर्षक पेज

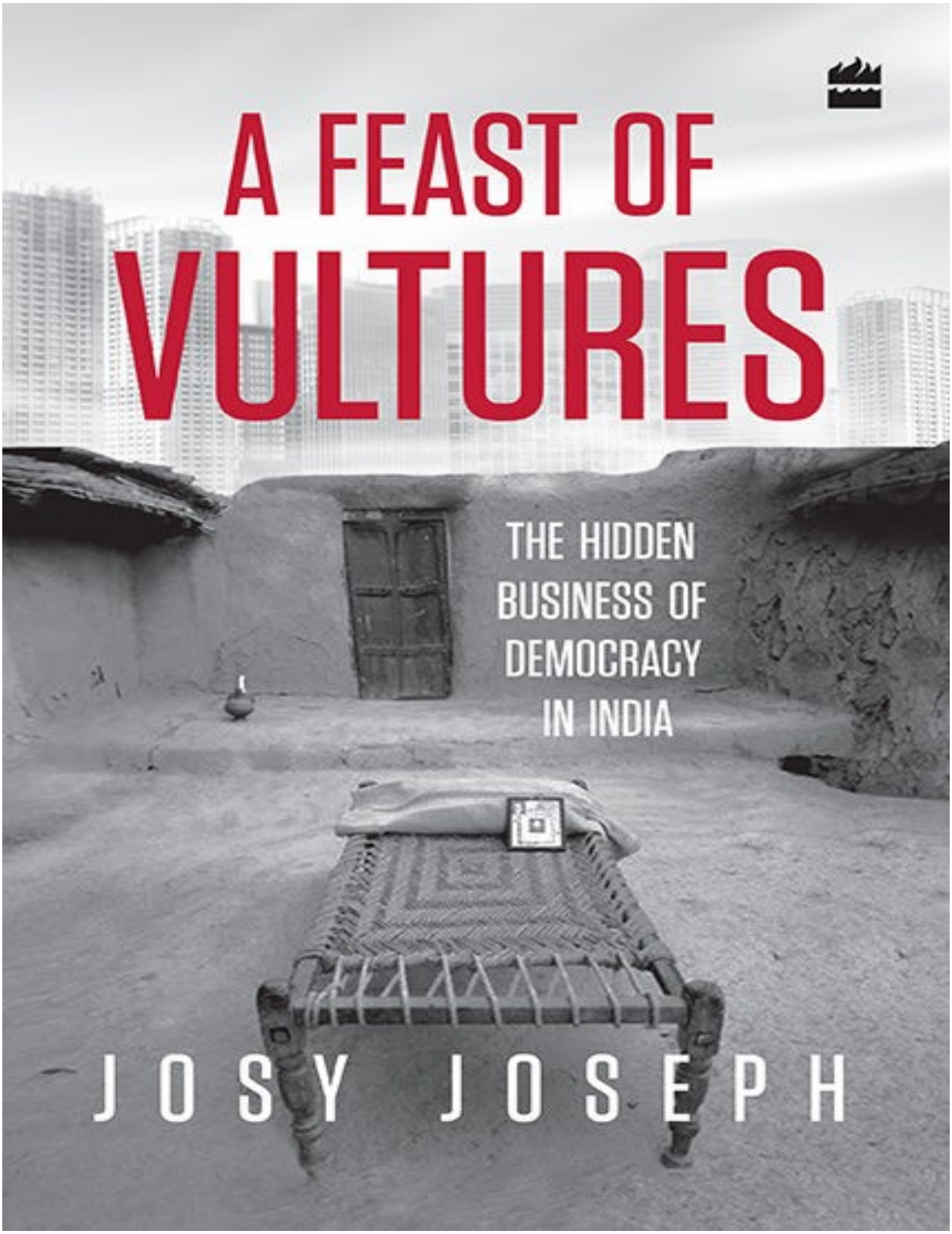
A FEAST OF
VULTURES
THE HIDDEN
BUSINESS OF
DEMOCRACY
IN INDIA
JOSY JOSEPH

[redacted]

[redacted]

[redacted] [redacted] [redacted] [redacted] [redacted] [redacted] [redacted]

[redacted] [redacted]

[redacted] [redacted] [redacted]

[redacted] [redacted] [redacted] [redacted] [redacted]
[redacted] [redacted] [redacted] [redacted] [redacted] [redacted]

अंतर्वस्तु

परिचय
प्रस्तावना
खण्ड एक
बिचौलिए
1. गली के उस पार रहने वाला मरम्मत करने वाला
2. द माइटी टाइपिस्ट
3. हथियार और बिचौलिए
4. अंदरूनी लोग और अपराधी
भाग दो
अत्यंत निजी निजी क्षेत्र
5. आसमान के लिए लड़ाई
6. हत्या का विश्लेषण
7. अस्थायी ऑपरेटर
भाग तीन
बड़ी लीग
8. खेल के उस्ताद
9. असाधारण सज्जनों की लीग
10. श्री अंबानी के लिए एक घर उपसंहार
नोट्स
स्वीकृतियाँ
किताब के बारे में
लेखक के बारे में
कॉपीराइट

परिचय

बहु-लेन राजमार्ग, धरती के गर्भ से निकली मेट्रो, आलीशान रिहायशी कॉलोनियां और जगमगाते शॉपिंग मॉल, ये सब मेरी रियर-व्यू मिरर में पीछे छूटते चले गए। जहां सड़क खत्म होती थी, वहीं से अनधिकृत गांव शुरू होता था। मैं दिल्ली के उत्तरी छोर पर था।
एक संकरा रास्ता झोंपड़पट्टियों के इस विशाल समूह को बाहरी दुनिया से जोड़ता था। हाल ही में बारिश हुई थी, और फटे-पुराने कपड़ों में छोटे बच्चे पानी के गड्ढों में खेल रहे थे। कई आदमी छोटी दुकानों के पास यूं ही खड़े थे। मैंने एक ऐसी खोज शुरू की जो व्यर्थ ही साबित होने वाली थी।
दिल्ली को 2010 के राष्ट्रमंडल खेलों (सीडब्ल्यूजी) की मेजबानी करनी थी। कंपनी के दस्तावेजों के अनुसार, सीडब्ल्यूजी से जुड़े आकर्षक अनुबंध हासिल करने वाली एक खेल विपणन कंपनी के कई निवेशक करल्ला गांव के निवासी थे। मैं उन्हीं भाग्यशाली लोगों की तलाश में था।
उन्नीसवीं चैंपियनशिप विश्व चैंपियनशिप में इकहत्तर देशों के 6,000 से अधिक एथलीटों ने 21 खेलों और 272 स्पर्धाओं में भाग लिया, जो भारत द्वारा आयोजित अब तक की सबसे बड़ी खेल प्रतियोगिता थी। प्रधानमंत्री डॉ. मनमोहन सिंह के नेतृत्व वाली केंद्र सरकार इसे एक भव्य आयोजन बनाना चाहती थी, जिस पर विभिन्न अनुमानों के अनुसार लगभग 50,000 करोड़ रुपये खर्च किए गए थे। दिल्ली के भीड़भाड़ वाले इलाकों पर बहु-लेन वाली एलिवेटेड सड़कें बनाई गईं, शहर के नीचे और ऊपर नई मेट्रो लाइनें बिछाई गईं, यमुना नदी के किनारे खिलाड़ियों के लिए विशेष अपार्टमेंट बनाए गए, जर्जर स्टेडियमों का शानदार जीर्णोद्धार किया गया, और जैसे-जैसे खेल नजदीक आते गए, बदसूरत हिस्सों को दृश्य अवरोधकों से ढक दिया गया और हजारों भिखारियों को शहर के बाहर सरकारी छात्रावासों में भेज दिया गया। एक स्वच्छ भारत ने विदेशी आगंतुकों का स्वागत किया।
जुबली स्पोर्ट्स टेक्नोलॉजी प्राइवेट लिमिटेड, जिसके कई प्रमोटर करल्ला में रहने का दावा करते थे, ने शहर को खेलों के लिए तैयार करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई। मुझे इस कंपनी के बारे में तब जिज्ञासा हुई जब मुझे पता चला कि इसे एक ऐसे व्यक्ति ने शुरू किया था जिसे अतीत में सरकारी जांचकर्ताओं ने अपने दिवंगत पिता, जो उस समय एक वरिष्ठ सरकारी अधिकारी थे,

की ओर से रिश्वत लेने के आरोप में गिरफ्तार किया था। स्थानीय निवासियों की सक्रिय सहायता से घंटों की खोज के बाद भी मैं जुबली स्पोर्ट्स के पीछे के लोगों को नहीं ढूंढ पाया और लापता लोगों के बारे में एक समाचार लिखने के लिए वापस लौट आया।
यह कोई असाधारण घटना नहीं थी। पिछले कई वर्षों में, भारत में लगभग हर बड़ा वित्तीय लेन-देन फर्जी शेयरधारकों और प्रॉक्सी निदेशकों द्वारा संदिग्ध सौदों, कर आश्रयों में नकदी हस्तांतरण और अक्सर सीधे-सीधे आपराधिक साजिश के माध्यम से किया गया है। वास्तव में, यह कार्यप्रणाली केवल वित्तीय जगत तक ही सीमित नहीं है।
यदि आप काल्पनिक शेयरधारकों और प्रॉक्सी मतदाताओं के पीछे छिपी असली शक्तियों का पता लगाने के लिए आवश्यक फोरेंसिक कौशल जुटाने में सक्षम हैं, तो यह आपको भारत के काले सच का एक अंतरंग, घृणित दृश्य दिखाएगा, जो प्रभावशाली उपलब्धियों और वैश्विक महत्वाकांक्षाओं वाले स्वच्छ, लोकतांत्रिक भारत को निगल जाएगा।
इस पुस्तक का जन्म भारत के उस अंधकारमय समाज के भयावह स्वरूप, भारतीय संस्थाओं की दयनीय स्थिति और हमारे लोकतंत्र के मूल में व्याप्त गहरी अनैतिकता के प्रति मेरे गहरे दुख से हुआ। ये सभी कारक मिलकर भारत के अधिकांश नागरिकों को स्थायी रूप से असहायता की स्थिति में धकेल देते हैं, और उनमें से कई आत्महत्या करने पर विवश हो जाते हैं। इन मौतों के बारे में बार-बार पढ़ने की नीरसता और भारत के अभिजात वर्ग की असंवेदनशीलता ने मुझे 2007 के आसपास इस पुस्तक पर शोध करने के लिए प्रेरित किया।
आधुनिक भारत में खेल के नियम बहुत सरल हैं, भले ही इससे बनी संरचना एक बेहद उलझी हुई भूलभुलैया जैसी हो। इस देश में लगभग कुछ भी करना जायज़ है: फर्जी प्रमोटरों का इस्तेमाल करना, रिश्वत लेना, हत्याएं करवाना, मीडिया को डराना-धमकाना, अदालतों में हेरफेर करना और सत्ता हथियाना। एक ही बड़ा नियम है: पकड़े न जाना। यह किताब उस वास्तविकता के बारे में है जिसका अनुभव हर नागरिक और सभी पर्यटक अनेक तरीकों से करते हैं। वर्षों तक मैंने उस भारत के बारे में लिखने के लिए एक ढांचा खोजने का प्रयास किया, और यह वर्णन भी उस जटिल जाल का एक अधूरा चित्रण ही है।
उस व्यवस्था के हर सदस्य का इसमें हित निहित है, और उनमें से प्रत्येक लोकतंत्र के साधनों तक गरीबों की पहुँच को बाधित करने में योगदान देता है।

दुनिया के सबसे बड़े लोकतंत्र में अदालतें भीड़भाड़ वाली और खर्चीली हैं, पुलिस भ्रष्ट और क्रूर है, शक्तिशाली टेलीविजन और अंग्रेजी भाषा के मीडिया का प्रभाव शहरी क्षेत्रों तक ही सीमित है, और राजनीतिक वर्ग सत्ता हथियाने की साजिश रचने में व्यस्त है।
जब आप भारत की सत्ता संभालने वाले और इसकी अर्थव्यवस्था को चलाने वाले लोगों के घिनौने दोहरे खेल का पर्दाफाश करने का प्रयास करते हैं, और उनके कपट के सबूत जुटाते हैं, तो वे आपको चुप कराने के लिए चालाकी भरे तरीके अपनाएंगे। यह हमेशा क्रूर धमकी ही नहीं होती।
मैं दिल्ली के खान मार्केट की पहली मंजिल पर स्थित एक कॉफी शॉप में एक पूर्व पत्रकार से मिल रहा था। खान मार्केट दुनिया के सबसे महंगे खुदरा बाजारों में से एक है। सर्दियों की धूप लंबी कांच की खिड़की से अंदर आ रही थी, जिससे दोपहर का मौसम बेहद सुहावना लग रहा था। हालांकि, इससे मेरे साथी को सहज महसूस करने में कोई मदद नहीं मिली। कुछ समय पहले तक एक हिंदी समाचार चैनल में कार्यरत रहे उन्होंने मुंबई के एक विवादित अरबपति के प्रवक्ता के रूप में एक अच्छी तनख्वाह वाली नई जिम्मेदारी संभाली थी।
फरवरी की हल्की ठंड का राष्ट्रीय राजनीति पर कोई असर नहीं पड़ा, जहाँ हालात बेकाबू थे। एक और घोटाला सामने आ चुका था और डॉ. मनमोहन सिंह के नेतृत्व वाली संयुक्त प्रगतिशील गठबंधन (यूपीए) सरकार विवादों में घिरी हुई थी। यह 2011 का साल था और सरकार के कार्यकाल में अभी तीन साल बाकी थे, लेकिन चारों ओर निराशा का माहौल छाया हुआ था। कुछ ही महीनों में, देश के विभिन्न शहरों में भ्रष्टाचार के खिलाफ विरोध प्रदर्शनों के रूप में भारी आक्रोश देखने को मिलेगा।
अरबपति के प्रवक्ता मुझसे मिलने के लिए उस सुबह भारत की वाणिज्यिक राजधानी मुंबई से दो घंटे की उड़ान भरकर आए थे। कुछ ही दिन पहले, उनके बॉस के वकीलों ने मुझे और मेरे अखबार को मानहानि का नोटिस भेजा था, क्योंकि मैंने खबर दी थी कि उनका आपराधिक गिरोह से सीधा संपर्क है। हमने कानूनी नोटिस का जवाब देते हुए कहा कि हमारे पास अपने दावों को साबित करने के लिए आधिकारिक दस्तावेज हैं और हम उन्हें उचित कानूनी मंच पर प्रस्तुत करेंगे। हमारे शांत जवाब ने संभवतः उस दिग्गज व्यवसायी को अपनी रणनीति बदलने के लिए प्रेरित किया। जनसंपर्क प्रबंधक ने अपने बॉस की ओर से हार्दिक माफी

मांगते हुए बात शुरू की। “यह एक गलती थी। दरअसल, बॉस ने अपनी कानूनी टीम को आपको नोटिस न भेजने के लिए कहा था,” उस युवक ने कहा।
हम दोनों जानते थे कि यह कोई गलती नहीं थी, बल्कि भारत के अमीर और मशहूर लोगों की यह मानक कार्यप्रणाली थी, जब उनके बारे में कोई आलोचनात्मक लेख प्रकाशित होता था। पिछले कुछ वर्षों में, मुझे भारत की कुछ सबसे बड़ी कंपनियों और सबसे शक्तिशाली लोगों से दर्जनों नोटिस मिले हैं। दिल्ली की बिजली वितरण कंपनियों पर बड़े पैमाने पर वित्तीय अनियमितताओं का आरोप लगाने वाली एक गुप्त ऑडिट रिपोर्ट प्रकाशित करने पर, उनमें से एक ने मुझे लगभग एक अरब डॉलर के मुआवजे की मांग करते हुए नोटिस भेजा। एक पूर्व सेना प्रमुख हर बार मेरे द्वारा उनके बारे में कुछ भी आलोचनात्मक लिखने पर मानहानि के नोटिस भेजते थे। मुंबई कांग्रेस नेता कृपाशंकर सिंह, जिनका सब्जी विक्रेता से करोड़पति बनने का आश्चर्यजनक परिवर्तन एक आधिकारिक जांच का हिस्सा था, मानहानि के नोटिस भेजने में उतने ही तत्पर थे। जब मैंने एक सांसद के बारे में रिपोर्ट किया, जो गंभीर सुरक्षा मामलों पर संसदीय समिति की बैठक से अचानक चले गए, जिसकी अध्यक्षता वे कर रहे थे, तो उन्होंने मुझे अपने संसदीय विशेषाधिकार के उल्लंघन का आरोप लगाते हुए नोटिस भेजा। डांवाडोल प्रतिष्ठा की रक्षा करना एक फलता-फूलता उद्योग है। कुछ जनसंपर्क सलाहकार होते हैं जिनका काम समाचार पत्रों में अमीर और मशहूर हस्तियों के खिलाफ पनप रही किसी भी संभावित प्रतिकूल खबरों के बारे में उन्हें सचेत करना होता है। कुछ वकील मानहानि के नोटिस तैयार करते हैं और कुछ ऐसे होते हैं जो अगर कोई और उपाय काम न करे तो स्थिति को संभालते हैं। ये सभी अपने मशहूर मुवक्किल की संभावित शर्मिंदगी का फायदा उठाकर खूब मुनाफा कमाते हैं।
माफी मांगने के बाद जब हम सब शांत हुए, तो प्रवक्ता ने कहा, 'वह चाहते थे कि मैं आपसे अनुरोध करूं कि आप उनके संबंधों के बारे में और कुछ न लिखें क्योंकि आपके लेख के कारण प्रत्यक्ष विदेशी निवेश (एफडीआई) बढ़ाने के हमारे प्रयासों को भारी झटका लगा है।' उनकी कंपनी, जिसने हेराफेरी करके दूसरी पीढ़ी के मोबाइल नेटवर्क संचालित करने के लिए लाइसेंस और रेडियो स्पेक्ट्रम हासिल किया था और आपराधिक जांच का सामना कर रही थी, अरब जगत के एक निवेशक से लगभग 3,000 करोड़ रुपये जुटाने की कोशिश कर रही थी।

इसके बाद प्रवक्ता ने आसपास की मेजों पर नजर डाली और माथे से पसीना टपकते हुए फुसफुसाया: 'बॉस चाहते हैं कि मैं आपको बताऊं कि आपकी जो भी जरूरत हो - कार, घर, कुछ भी - वह उसका ख्याल रख सकते हैं।'
मैंने चुप्पी को कुछ देर तक रहने दिया, फिर सड़क के उस पार बने एक विशाल औपनिवेशिक बंगले की ओर इशारा करते हुए पूछा, 'क्या आपका मतलब उन घरों में से एक से है?'
परिचित माहौल में लौटकर उन्होंने जवाब दिया: 'मेरे बॉस को कम मत आंकिए। वह सब कुछ संभाल सकते हैं।'
मुझे याद नहीं कि कॉफी का बिल किसने दिया था, लेकिन मैंने मीटिंग को जल्द ही रद्द कर दिया।
नई दिल्ली में हर कोई इस तरह के प्रस्ताव देने में असहज महसूस नहीं करता। एक बार, एक मशहूर वकील मुझसे होटल अशोका में मिले, जिसके जिम के सदस्यों में गांधी परिवार समेत कई जानी-मानी हस्तियां शामिल हैं। वकील नई दिल्ली के प्रभावशाली लोगों के साथ व्यायाम करने के लिए खूब पैसा खर्च कर रहे थे। वे अपने एक मुवक्किल की ओर से मुझसे मिल रहे थे, एक ऐसी कंपनी जिसकी मैं जांच कर रहा था, जिस पर आरोप था कि उसने अपने प्रतिद्वंद्वियों को परेशान करने के लिए पुलिस का दुरुपयोग किया था। कंपनी को उत्तरी राज्यों में से एक पर शासन करने वाले एक राजनीतिक परिवार का समर्थन प्राप्त था, और उस पर मनी लॉन्ड्रिंग और अन्य आपराधिक गतिविधियों के आरोप थे। उन्होंने कहा, 'अगर आप लेख लिखेंगे, तो वे बर्बाद हो जाएंगे। अगर आप इसे छोड़ देंगे, तो सिर्फ आपको और मुझे पता चलेगा।' उन्होंने यह भी कहा कि कहानी छोड़ने के लिए मेरे पास 3 करोड़ रुपये का बजट उपलब्ध है। जब मैंने जाने का समय बताया, तो उन्होंने ताना मारते हुए कहा कि वे नियमित रूप से भारत की न्यायपालिका और राजनीति के बड़े-बड़े नेताओं से मिलते हैं। उन्होंने आश्चर्य जताया कि मैं ऐसा मौका क्यों जाने दूंगा? इस बार मुझे पता है कि मैंने बिल का इंतजार नहीं किया।
मुख्यधारा के मीडिया में मेरी नौकरी ने मुझे हमेशा उस वास्तविक भारत के पहलू पर रिपोर्टिंग करने की स्वतंत्रता नहीं दी, जिससे मैं बंद दरवाजों के पीछे और आलीशान होटलों में मिलता था। अंततः इसी बात ने मुझे भारत के आधुनिक राष्ट्र राज्य की पड़ताल करने के लिए प्रेरित किया। इसकी लोकतंत्र कितनी मजबूत है? कितनी निष्पक्ष है? क्या वर्षों से इसकी संस्थाएं

परिपक्व हुई हैं? क्या पारदर्शिता और निष्पक्ष चुनावों की लहरें इसके गरीबों की स्थिति में सुधार ला रही हैं? क्या इसकी संस्थाओं के बीच की दरारें गहरी हो रही हैं, या कम हो रही हैं? अन्य संस्थाएं राजनीतिक वर्गों के दोहरेपन को अक्सर चुनौती क्यों नहीं देतीं? क्या हर कोई गणतंत्र को नष्ट करने की एक बड़ी साजिश में शामिल है? क्या आत्म-नियंत्रित और बनावटीपन से मुक्त, अपने बचपन के गांव को भुलाए बिना, दोस्तों को छोड़े बिना, और भव्य राजधानी शहर की चकाचौंध से प्रभावित हुए बिना, इस आधुनिक भारत का आकलन और रिपोर्टिंग करने का कोई तरीका है?
शहरी भारत की वो कहानियाँ जो वास्तव में इस संप्रभु, समाजवादी, धर्मनिरपेक्ष, लोकतांत्रिक गणराज्य का भविष्य तय करती हैं, अनकही और अनसुनी ही रह जाती हैं। संवैधानिक वकील लगभग हर मुद्दे पर मीडिया कवरेज और जनता की राय को नियंत्रित और हेरफेर करते हैं; रिश्वत और धमकियाँ ही काम आती हैं; अरबों डॉलर के सौदे तभी पूरे होते हैं जब सही लोगों को रिश्वत दी जाती है; राजनीतिक दल अपने संचालन के लिए काला धन इकट्ठा करते हैं; मीडिया में कवरेज शुल्क लेकर मिलती है और सशुल्क समाचार आधिकारिक तौर पर एक व्यवसाय है; सरकारी कर्मचारी व्यवस्था को भ्रष्ट करने में राजनीतिक वर्ग की सहायता करते हैं; फलती-फूलती अर्थव्यवस्था में 'सुविधा प्रदान करना' सबसे सफल व्यवसाय है। कुछ सम्मानित अपवादों को छोड़कर, सब कुछ और हर कोई बिकता है। आपको बस सही मध्यस्थ ढूंढना है और सही रिश्वत देनी है। खस्ताहाल सरकारी तंत्र तभी चलता है जब रिश्वत दी जाती है।
इस व्यवस्थागत भ्रष्टाचार का संचयी परिणाम भयावह है। भारत के अव्यवस्थित शहर प्रदूषण से घुट रहे हैं। बाल कुपोषण विश्व में सबसे अधिक है (पांच वर्ष से कम आयु के 42 प्रतिशत से अधिक बच्चे अल्पवयस्क हैं)। देश की युवा आबादी, जो विश्व में सबसे बड़ी है, गुणवत्तापूर्ण शिक्षा तक बहुत सीमित पहुंच रखती है। 60 प्रतिशत से अधिक लोगों के पास शौचालय नहीं हैं। 33 करोड़ से अधिक भारतीयों को स्वच्छ पेयजल नहीं मिलता। हजारों आम नागरिक दमनकारी और स्त्री-द्वेषी संस्थाओं द्वारा प्रतिदिन उत्पीड़न और अपमान का शिकार होते हैं। हिंसा आज एक सामान्य वास्तविकता बन गई है।
अधिकांश भारतीयों के लिए, उनका देश न तो पूरी तरह से गणतंत्र है और न ही लोकतांत्रिक। भला उद्यमियों की एक पीढ़ी खुलेआम सत्ता का दुरुपयोग करके भी कैसे फल-फूल सकती है? इतने सारे लोग अपने निजी लाभ के लिए सार्वजनिक

प्रक्रियाओं में हेरफेर करने के लिए विधानसभाओं और संसद में रिश्वत देकर कैसे प्रवेश कर सकते हैं? जिन नेताओं की अनैतिक राजनीति जगजाहिर है, वे सत्ता की बागडोर कैसे संभाले रख सकते हैं? भारतीय विधि जगत में 'बेंच हंटिंग' एक स्वीकृत शब्द कैसे है? और पेड न्यूज़ इतना फलता-फूलता उद्योग कैसे है? एक अरबपति बेफिक्री से ध्वस्त अनाथालय पर घर कैसे बना सकता है? यह एक ऐसा संकट है जिसे विशेषाधिकार प्राप्त भारतीय स्वीकार नहीं करते, क्योंकि हम सभी इससे लाभान्वित होते हैं। भारत एक ऐसा समृद्ध देश बन गया है जिसमें बहुत सारे गरीब लोग हैं। प्रमुख हितधारकों की कल्पनाओं से नैतिकता और जनहित पूरी तरह गायब हो गए हैं: यही एकमात्र समान बात है जो मैंने वर्षों से रिपोर्ट की गई सभी खबरों में देखी है। एक मुख्यमंत्री जिसने दिल्ली में प्रतिबंधित पहाड़ी भूमि अपने मित्रों को आवंटित कर दी; नौसेना अधिकारी जिन्होंने युद्ध कक्ष के गुप्त दस्तावेज़ रिश्वत के बदले बेच दिए; राजनेता, जनरल और नौकरशाह जिन्होंने युद्ध विधवाओं के नाम पर अपने लिए एक अपार्टमेंट कॉम्प्लेक्स बनाने की साजिश रची - मैं दो दशकों से अधिक समय से काम कर रहा हूं, सूची बहुत लंबी है।
जब भी कोई घोटाला सामने आता है, आक्रोश और सार्वजनिक बहसें मच जाती हैं, लेकिन स्टूडियो की बत्तियाँ बुझते ही, शो के प्रतिभागी अगली साजिश की रूपरेखा तैयार करने बैठ जाते हैं। लगभग हर चर्चित घोटाले के पीछे एक बड़ी और कहीं अधिक भयावह कहानी छिपी होती है।
अनकही और अनकही बातें, वो कहानियां जो आधुनिक भारत की सच्चाई को उजागर करती हैं, इस पुस्तक को लिखने का मेरा मुख्य कारण हैं। खुफिया एजेंसियां जिन्होंने प्रधानमंत्री के लिए आतंकवादी खतरे की झूठी कहानी गढ़ी और निर्दोषों को फंसाया; केंद्र सरकार जिसने एक अरबपति के इशारे पर जाली बैंक गारंटी स्वीकार की और उसके करीबी लोगों पर भारी एहसान किए; एक नेता जिसने काले धन के खिलाफ जोरदार अभियान चलाया, वो भी ऐसे व्यक्ति के पैसों से जिस पर भारी मात्रा में मनी लॉन्ड्रिंग का आरोप है: हर समाचार कक्ष में अनगिनत कहानियां हैं जो विभिन्न कारणों से कभी प्रकाशित नहीं होतीं, लेकिन ये दबी हुई कहानियां 125 अरब लोगों के इस राष्ट्र का भयावह चेहरा सामने लाती हैं।
आगे के पन्नों में, मैं उस अनकहे भारत की वास्तविकताओं को दर्ज करने का प्रयास करता हूँ, जो देश के कामकाज और उसकी संस्थाओं द्वारा आम लोगों की

सेवा (या सेवा करने में विफलता) पर दो दशकों के पत्रकारिता कार्य पर आधारित है। मुझे हर जगह ऐसे प्रमाण मिले जो मेरे सिद्धांत की पुष्टि करते हैं: सब कुछ बिक रहा है, आपको बस सही सुविधादाताओं से जुड़ने के लिए संसाधनों की आवश्यकता है।

विडंबना यह है कि बिचौलियों का असली युग 1990 के दशक के आरंभ में भारत के आर्थिक सुधारों के बाद शुरू हुआ, भले ही इससे पहले लाइसेंस राज के दौरान यह व्यवस्था पूरी तरह से विकसित हो चुकी थी। उदारीकरण से पहले, भारत एक समाजवादी राज्य था जो आयात प्रतिस्थापन और राज्य एकाधिकार का पालन करता था। उस पुराने भारत की अपनी कुछ बुराइयाँ थीं, जिनमें सबसे प्रमुख जीवन के हर क्षेत्र में राज्य नियंत्रणों का एक जटिल जाल था। वाहन खरीदने या व्यवसाय शुरू करने के लिए, यहाँ तक कि सपने देखने या ताजी हवा में साँस लेने के लिए भी, आपको राज्य की अनुमति की आवश्यकता होती थी। नौकरशाह और राजनीतिक नेता बेहद शक्तिशाली और बेहद भ्रष्ट हो गए थे। आर्थिक विकास दर औसतन लगभग 3.5 प्रतिशत वार्षिक थी, राज्य और कुछ ही परिवार आर्थिक और औद्योगिक गतिविधियों के अधिकांश क्षेत्रों पर हावी थे, और उपभोक्ता के पास बहुत सीमित विकल्प थे। मध्यम वर्ग के भारतीय एयरेटेड ड्रिंक्स और टेलीविजन सेटों की तस्करी करके देश में लाते थे।
दिवालियापन और अंतरराष्ट्रीय स्तर पर बदनामी का सामना करते हुए, भारत को 1991 में अपनी अर्थव्यवस्था को उदार बनाने के लिए मजबूर होना पड़ा। रातोंरात एक नई ऊर्जा का संचार हुआ।
1991 में, मैं भी अचानक वयस्क हो गया, सैन्य सार्वजनिक विद्यालय की सुरक्षित सीमाओं से निकलकर भारत की नागरिक वास्तविकताओं में आ गया। कई मायनों में, एक उदार अर्थव्यवस्था के रूप में भारत की यात्रा मेरे जीवन, कार्य, प्रेम, असफलताओं और मूल्यों की खोज के समानांतर थी। भारत के अधिकांश लोगों के साथ, मेरी पीढ़ी ने टाइपराइटर से टच स्क्रीन की ओर, गांवों से महानगरों की ओर, समाजवादी अर्थव्यवस्था से एक समृद्ध बाजार अर्थव्यवस्था की ओर - यह सब दो दशकों के भीतर हुआ। हमारे जीवन में एक ही चीज़ स्थिर रही, वह था बिचौलिया, जो हमें सरकार द्वारा देय चीजें दिलवाता

था: जन्म प्रमाण पत्र, ड्राइविंग लाइसेंस, पंजीकरण, नियुक्ति, नाम परिवर्तन, पासपोर्ट आदि।
भारत में आर्थिक उदारीकरण की लहर चलने के साथ ही उद्यमियों ने बड़े सपने देखना शुरू कर दिया; साहसिक निवेश और साहसिक प्रस्ताव आम बात हो गई। कुछ ही वर्षों में, भारत चीन के बाद सबसे तेजी से बढ़ती प्रमुख अर्थव्यवस्था बन गया। वैश्विक निवेशक भारत की सराहना करने लगे और भीषण गर्मी में भी विश्व नेता नई दिल्ली आने के लिए कतार में खड़े रहने लगे।
भारत बदल रहा था, और कितना तेजी से!

1970 के दशक में, जिस शिक्षक ने मुझे अपने गाँव की ढीली सिलिका रेत पर दाहिने हाथ की तर्जनी उंगली का इस्तेमाल करने के लिए मजबूर किया था (मैं जन्म से बाएँ हाथ का था), वह सेवानिवृत्त हो चुके थे। मैंने एक अस्थायी झोपड़ी में बैठकर, जिसकी छत फूस की थी और जो मेरा पहला स्कूल था, ज़मीन पर स्वर 'अ' के समानार्थक अक्षर और बाकी अक्षर उकेरे। यहीं से मेरी शैक्षिक यात्रा शुरू हुई। मेरे गाँव के बालवाड़ी केंद्रों में अब अंग्रेज़ी को प्राथमिकता दी जाती है। सरकारी प्राथमिक विद्यालय, जहाँ मैंने चौथी कक्षा तक पढ़ाई की, अब अपने पुराने स्वरूप का एक धुंधला सा रूप मात्र रह गया है। उसके छोटे से परिसर के सामने वाली पक्की सड़क पर निजी बसें बच्चों को निजी स्कूलों तक ले जाती हैं। अब केवल सबसे गरीब बच्चे ही उस पुराने स्कूल में जाते हैं।
क्रिसमस की सुबह मेरी तीन साल की बहन को तेज बुखार के कारण दौरे पड़ने पर जिस सरकारी अस्पताल में भर्ती कराया गया था, वह अब हमारे कस्बे का पसंदीदा स्वास्थ्य केंद्र नहीं रहा। पिछले कुछ वर्षों में निजी अस्पतालों की संख्या तेजी से बढ़ी है। हालांकि, सरकारी अस्पताल की हालत आज भी अच्छी है – जो भारत में एक दुर्लभ बात है।
चमकीले सफेद सिलिका-रेत के टीले लगभग गायब हो चुके हैं। एक टूटी-फूटी सड़क और एक अकेली टेलीफोन लाइन उन टीलों के बीच से होकर हमारे घर तक जाती थी, जो शांत जलधाराओं के किनारे स्थित था। हम ढीली रेत में से रास्ता बनाते हुए स्थानीय स्कूल तक पैदल जाते थे। लेकिन मेरे गाँव और आसपास के इलाकों के कई

लोग अंधाधुंध और गैर-जिम्मेदाराना तरीके से सिलिका रेत का खनन कर रहे हैं। वह अवास्तविक सफेद गाँव जिसे मैं याद करता हूँ, अब कंक्रीट के घरों और उथले गड्ढों की नीरसता से बदल गया है, जो अक्सर बारिश के पानी से भर जाते हैं। प्राकृतिक संसाधनों का अंधाधुंध, और अधिकतर अवैध, खनन सिर्फ मेरे गाँव की कहानी नहीं है। बल्कि, यह भारत की उदारीकृत अर्थव्यवस्था की प्रमुख विशेषताओं में से एक है। मध्य भारत में, जहाँ आदिवासी समुदाय देश के कुछ सबसे महत्वपूर्ण जैव विविधता संरक्षण क्षेत्रों में अपने परिवेश के साथ शांतिपूर्वक सह-अस्तित्व में थे, वहीं व्यवसायी प्रशासन के सक्रिय समर्थन से कोयला, लौह अयस्क और अन्य खनिजों का खनन कर रहे हैं। इस अवांछित घुसपैठ और भारतीय राज्य की विफलताओं के खिलाफ एक सशस्त्र वामपंथी विद्रोह ने जड़ पकड़ ली है। आदिवासी लोग फँसे हुए हैं, जबकि विद्रोही, एक असंवेदनशील राज्य तंत्र के एजेंट और एक नया निर्दयी उद्यमी वर्ग, अपने खेल और महत्वाकांक्षाओं को अंजाम दे रहे हैं।
ये विद्रोह देश में बढ़ती असमानताओं की प्रतिक्रिया भी हैं। अशांति और असंतोष भारत के एक स्वतंत्र राष्ट्र के रूप में विकास का अभिन्न अंग रहे हैं। दुनिया के कई सबसे पुराने सशस्त्र संघर्ष यहीं चल रहे हैं, और इनमें लाखों लोग मारे गए हैं - सुरक्षाकर्मी, विद्रोही, अपहरणकर्ता, गुंडे, मुखबिर, साथ ही वे लोग भी जो सीधे तौर पर संघर्ष में शामिल नहीं थे। देश के उत्तर-पूर्वी हिस्से में कुछ विद्रोह लगभग उतने ही पुराने हैं जितने कि स्वतंत्र भारत, और कश्मीर तीन दशकों से अधिक समय से अशांत है। मध्य भारत में, वामपंथी उग्रवादी दशकों से सुरक्षा बलों से लड़ रहे हैं।
इन विद्रोहों को हवा देने वाली शिकायतों से निपटने के बजाय, राजनेताओं, मुख्यधारा के मीडिया और सुरक्षा विश्लेषकों ने इनके इर्द-गिर्द एक गलत जानकारी से भरा, अक्सर अपमानजनक और असहिष्णु माहौल बनाने का काम किया है। जवाबदेही तय करने वाला कोई न होने के कारण, सुरक्षा प्रतिष्ठान और उसकी कई शाखाएँ मानवाधिकारों का बेरोकटोक उल्लंघन करती हैं। यह प्रतिष्ठान भारतीय लोकतंत्र की सभी कमियों के लिए आसानी से पाकिस्तान, चीन, अमेरिका और अन्य बाहरी ताकतों को दोषी ठहराता है। जब 2015 में यह पुस्तक पूरी हो रही थी, तब नई दिल्ली सरकार ने एक पुराने मुद्दे - गैर सरकारी संगठनों - को फिर से उठाया और उन पर भारतीय अर्थव्यवस्था और सरकार को गिराने के लिए एक बड़ी अंतरराष्ट्रीय साजिश रचने का आरोप लगाया।

शिक्षा क्षेत्र की स्थिति भी उतनी ही चिंताजनक है। इंजीनियरिंग या चिकित्सा में चार वर्षीय स्नातक डिग्री में सीट पाना – जो समाजवादी युग में हमारे बचपन के सपनों में से एक था – अब आसानी से मिल जाता है। देश भर में तेजी से फैल रहे कई व्यावसायिक कॉलेजों में छात्र आसानी से प्रवेश पा सकता है, बशर्ते वह ट्यूशन फीस वहन कर सके। राजनेता, बैंक घोटालेबाज, पेशेवर जालसाज, तस्कर, दलाल और शराब व्यापारियों से लेकर मिठाई विक्रेताओं तक, हर तरह के कारोबारी शिक्षा के आकर्षक व्यवसाय में उतर चुके हैं – एक ऐसा क्षेत्र जो मंदी से अछूता रहता है। हालांकि, उच्च शिक्षा के विस्तार के बावजूद, इसकी गुणवत्ता संदिग्ध होती जा रही है।
मेरे बचपन में जो फिक्स्ड लाइन फोन आया था, वो आज भी मेरे माता-पिता के घर में शान से रखा है, एक धुंधली सी याद जो आज भी जीवंत है। अब वो बहुत कम बजता है। हम अब निजी कंपनियों के मोबाइल फोन पर बात करते हैं। टेलीफोन सेवा देने वाली सरकारी कंपनी दुनिया के सबसे लाभदायक और जीवंत दूरसंचार बाजारों में से एक में टिके रहने के लिए संघर्ष कर रही है।
टेलीफोन, सरकारी प्राथमिक विद्यालय, सरकारी अस्पताल, ये सभी भारत के नए आकाओं की नई महत्वाकांक्षाओं के शिकार हैं। ये नए आका राजनेता, व्यापारी, नियामक और अन्य लोगों का एक ढीला-ढाला समूह है, जो किसी तरह सत्ता में पैर जमाने में कामयाब हो गए हैं। सुनियोजित लूट ने भारत के कई सार्वजनिक संस्थानों और कंपनियों को उनके पूर्व स्वरूप की मात्र छाया मात्र बना दिया है। सरकारी कंपनियों की महंगी संपत्तियों को विनिवेश के नाम पर सस्ते दामों में बेच दिया गया है।
होटल उद्योग के दिग्गज अजीत बी. केरकर एयर इंडिया के बोर्ड के सदस्य थे और उस उप-समिति में भी शामिल थे जिसने एयर इंडिया की सहायक कंपनी होटल कॉर्पोरेशन ऑफ इंडिया के स्वामित्व वाले होटलों के विनिवेश का निर्णय लिया था। विनिवेश का निर्णय लिए जाने के एक दिन बाद ही केरकर ने बोर्ड से इस्तीफा दे दिया, लेकिन बाद में एक खरीदार के रूप में वापसी की। उनके द्वारा स्थापित एक कंपनी ने इसे खरीदा और फिर कुछ ही वर्षों में काफी अधिक कीमत पर बेच दिया। संक्षेप में, भारत में विनिवेश की प्रक्रिया कुछ इस प्रकार रही है।

क्या भारत की कहानी पूरी तरह निराशाजनक है? नहीं, ऐसा बिल्कुल नहीं है। अपने शहरी केंद्रों और आलीशान इलाकों में, सुरक्षित आवासीय समुदायों और ऊंची इमारतों में, भारतीय वैश्विक सफलता की कहानियां गढ़ रहे हैं, गंभीर प्रलोभनों के बावजूद ईमानदारी से व्यापार करने के लिए दृढ़ संकल्पित हैं। अपने गांवों में, सामुदायिक प्रयास सशक्तिकरण की नई कहानियां लिख रहे हैं। सूचना का अधिकार अधिनियम और कई निस्वार्थ कार्यकर्ता धीरे-धीरे, बहुत धीरे-धीरे, सरकारी कामकाज में एक निश्चित पारदर्शिता ला रहे हैं। दलित जैसे शोषित समूहों के संगठन क्रूर सरकारी तंत्र के खिलाफ बार-बार लामबंद होते रहे हैं।
जब मैंने इस पुस्तक पर काम शुरू किया, तब भारतीय राजनीति में एक नई पीढ़ी के धनी लोगों का उदय हो चुका था। जब मैं पुस्तक के आधे हिस्से तक पहुंचा, तब भ्रष्टाचार विरोधी आंदोलन शुरू हुआ और उससे अरविंद केजरीवाल के नेतृत्व में एक नई राजनीतिक पार्टी, आम आदमी पार्टी का जन्म हुआ, जो शीघ्र ही भारतीय राजनीति का एक महत्वपूर्ण हिस्सा बन गई। हालांकि, भ्रष्टाचार विरोधी आंदोलन का सबसे बड़ा लाभार्थी नरेंद्र मोदी थे, जिनकी हिंदुत्ववादी साख और कॉरपोरेट जगत के समर्थन ने उन्हें सत्ता विरोधी लहर पर सवार होकर 2014 में प्रधानमंत्री बनने में मदद की। लेकिन इससे भी भारत में शांति नहीं आई। यह युवा देश आज भी उथल-पुथल के दौर से गुजर रहा है।
जब तक यह पुस्तक तैयार हुई, हैदराबाद सेंट्रल यूनिवर्सिटी (एचसीयू) के छात्र रोहित वेमुला की आत्महत्या के विरोध में दलित संगठन और समुदाय एकजुट हो चुके थे। यह एक ऐसा संवेदनशील मुद्दा था, जिस पर भारत के वामपंथी उदारवादी भी सार्थक रूप से विचार करने में विफल रहे। एचसीयू से परे, भारतीय राजनीति में छात्रों की आवाज़ें गूंज रही हैं - ऐसी आवाज़ें जो ताजगी भरी समानतावादी और करुणामय हैं। जवाहरलाल नेहरू विश्वविद्यालय (जेएनयू) के छात्रों पर राजद्रोह के आरोप और फिर एचसीयू में हुई हिंसा ने एक ऐसा आक्रोश और एकजुटता पैदा की, जिससे मुझे यह विश्वास हो गया कि भारत एक महान युवा आंदोलन की ओर अग्रसर है। शायद अगली पीढ़ी मुख्यधारा की राजनीति की उन अनेक कमजोरियों के खिलाफ लड़ाई जीतेगी, जिनका मैंने अगले पृष्ठों में वर्णन किया है।

'अ फीस्ट फॉर वल्चर्स' आम नागरिकों के लिए भारत को समझने और इसके साथ व्यापार करने का एक मार्गदर्शक है; और यहाँ आने वाले आगंतुकों को यहाँ व्याप्त अराजकता को समझने में मदद करता है। यह एक सैद्धांतिक, अकादमिक ढाँचा नहीं, बल्कि एक पत्रकार द्वारा राष्ट्र की स्थिति की पड़ताल है। फिर भी, यह किसी गंदगी की जाँच-पड़ताल करने वाले की रिपोर्ट नहीं है। यह भारत की उस वास्तविकता का विवरण है जिसे मैं जानता हूँ।

प्रस्तावना

जहां मुर्दे भी डरते हैं

शाहदा की चीखें हवा में गूंज रही थीं, लड़कों के कदमों की आहट फसल कटाई के बाद खेतों में गूंज रही थी, चारों ओर सन्नाटा पसरा हुआ था। वह लकड़ी के पलंग पर लेटी थी, अत्यधिक गर्भवती और बेहद दुखी। कुछ किशोरों ने पलंग को अपने कंधों पर उठाया था और खाली खेतों में जल्दी-जल्दी चल रहे थे। बारिश से भीगे गांव में अंधेरा छा रहा था और मिट्टी के तेल के दीपक टिमटिमा रहे थे। कुछ देर पहले ही मोहम्मद अनवर हुसैन जब अपने दोस्तों के साथ फुटबॉल खेलकर लौटे, तो उन्होंने अपने घर के आसपास महिलाओं की भीड़ देखी। उन्हें आशंका हुई कि कुछ बुरा होने वाला है, लेकिन पता चला कि उनकी छोटी बहन शाहदा, जिसकी बहुत कम उम्र में शादी हो गई थी, को प्रसव पीड़ा शुरू हो गई थी। कुछ महिलाओं ने कहा कि उसे गांव में ही रुककर जो भी सुविधाएं उपलब्ध हों, उनसे बच्चे को जन्म देना चाहिए, जबकि अन्य ने जोर देकर कहा कि उसे तुरंत किसी आधुनिक अस्पताल ले जाया जाए क्योंकि गर्भावस्था में जटिलताएं साफ दिख रही थीं।
बहस करने का समय नहीं था। अनवर और उसके दोस्तों ने तुरंत कार्रवाई की। वे उसे तीन किलोमीटर तक खेतों से होते हुए पास की सड़क तक ले गए, जहाँ से उन्होंने एक बस पकड़ी और उसे अस्पताल पहुँचाया। बिहार के हृदयचक गाँव के निवासियों के लिए इस तरह की हताश यात्राएँ अक्सर बुरी तरह विफल हो जाती हैं। वर्षों से, इतने सारे लोग मर चुके थे और इतनी नीरस एकरसता के साथ कि बीमारी और मृत्यु वहाँ बस क्षणिक ध्यान भटकाने वाली चीज़ें थीं।
'यह बीस साल से भी पहले की बात है, लेकिन मेरी बहन की चीखें आज भी मेरे कानों में गूंजती हैं,' अनवर ने मुझे बताया जब हम आईटीओ (आयकर कार्यालय) के पास स्थित उनके कार्यालय में मीठी कॉफी की चुस्कियां ले रहे थे, जो नई दिल्ली के सबसे व्यस्त यातायात जंक्शनों में से एक है, जिसके आसपास मीडिया कार्यालय और कई सरकारी प्रतिष्ठान स्थित हैं।
सौभाग्य से, जब वे निकटतम सड़क मार्ग कलेर पहुँचे, तो एक बस आ गई और वे उसमें बैठकर लगभग 15 किलोमीटर दूर दाऊद नगर चले गए, जहाँ एक सुसज्जित सरकारी अस्पताल था। शाहदा, जिसका अरबी में नाम 'गवाह' होता है, असाधारण रूप

से भाग्यशाली थी। शाम को देर से ही सही, डॉक्टर उपलब्ध थे और उसने एक स्वस्थ बच्चे को जन्म दिया, जो अब बीस वर्ष का एक युवक है।
उस घटना और इसी तरह की अन्य घटनाओं ने अनवर को आश्वस्त कर दिया कि उसके गाँव में दो चीजें अवश्य होनी चाहिए: राष्ट्रीय राजमार्ग से सड़क संपर्क और एक आधुनिक अस्पताल। लगभग 2006 में, जब वह दिल्ली में बस गया था, अनवर ने अपने गाँव तक सड़क के निर्माण की मंजूरी प्राप्त करने के लिए प्रयास शुरू किए। यह एक मूर्खतापूर्ण महत्वाकांक्षी प्रयास था: अपने गाँव से हज़ार किलोमीटर दूर राजधानी में सत्ता के शीर्ष पर पहुँचना। लगभग एक दशक बाद जिस पक्की सड़क पर टैक्सी मुझे हृदयचक ले गई, वह उसकी लगन का प्रमाण है।
अनवर ने अपने क्षेत्र के सांसद से मिलने की कोशिश से शुरुआत की। यहीं से सरकारी दफ्तरों के नियमित दौरे का सिलसिला शुरू हुआ। इस दौरान उन्होंने एक अनोखी भारतीय कला विकसित की: भारत के जटिल सरकारी विभागों से निपटने की क्षमता और हर जगह सही मध्यस्थों की पहचान करने की कुशलता।
वह रघुवंश प्रसाद सिंह के कार्यालय में नियमित रूप से जाते थे, जो तत्कालीन केंद्रीय ग्रामीण विकास मंत्री थे और स्वयं बिहार से थे। जैसे- जैसे सप्ताह बीतते गए, सिंह के कर्मचारी अनवर के इस प्रयास में व्यक्तिगत रूप से शामिल हो गए। बिहार में प्रधानमंत्री ग्रामीण सड़क योजना के तहत सड़कें बनाने का काम सौंपी गई सरकारी कंपनी आईआरकॉन (इंडियन रेलवे कंस्ट्रक्शन कंपनी) ने कहा कि सड़क बनाना संभव नहीं है। उन्होंने स्वीकार किया कि एक हजार से अधिक आबादी वाली बस्ती को सड़क बनाने की अनुमति दी गई थी, लेकिन हृदयचक जाने वाली सड़क को पहले ही मंजूरी मिल चुकी थी। अनवर को आश्चर्य हुआ।
पता चला कि उस इलाके में कोई और सड़क बनाने का काम कर रहा था। हैरानी की बात यह थी कि जिस सड़क को मंज़ूरी मिली थी, वह हृदयचक के एक अलग हिस्से को कई गांवों से होते हुए मुख्य राजमार्ग से जोड़ती, जिससे कलेर तक पहुंचने में लगभग 18 किलोमीटर का रास्ता तय करना पड़ता, जबकि कलेर पैदल केवल 3 किलोमीटर दूर था। अनवर ने कहा, 'यह सड़क बेकार थी, इसका कोई उपयोग नहीं था।' 2008 तक, मंज़ूर की गई सड़क स्थानीय लोगों से बिना किसी सलाह-मशविरे के बन चुकी थी। इससे हृदयचक के लोगों को कोई फायदा नहीं हुआ। भारत की अधिकांश सार्वजनिक परियोजनाओं की तरह, अगर इससे गांव वालों को कोई फायदा नहीं हुआ,

तो इससे किसी और को ज़रूर फायदा हुआ होगा - ठेकेदारों, इंजीनियरों और शायद राजनेताओं को।
अनवर ने हार नहीं मानी, और उनकी लगन के चलते हृदयचक का सड़क संपर्क वरिष्ठ स्तर की बैठकों का विषय बन गया। अनवर ने कहा, 'मुझे लगता है कि भले ही आपके पास पैसा और प्रभाव न हो, कभी-कभी इस देश में लगन काम आती है।' नई दिल्ली की वो भव्य इमारतें आम लोगों की पहुंच से बाहर हैं। वहां रेत की बोरियों के पीछे हथियारबंद पहरेदार तैनात रहते हैं और गंभीर चेहरे वाले रिसेप्शनिस्ट वहां मौजूद रहते हैं। ऐसे स्थानों में लगन एक महत्वपूर्ण गुण हो सकता है - और अनवर जैसे व्यक्ति के लिए यह मददगार साबित होता है। एक मुस्लिम संगठन के प्रवक्ता के रूप में उनकी पहले से ही कुछ सार्वजनिक छवि थी, और इससे उन्हें उन विभागों में कुछ हद तक प्रभाव मिला, जहां वे लगातार प्रयास कर रहे थे।
2008 में बिहार के ग्रामीण सड़क कार्यक्रम की समीक्षा के लिए आयोजित एक बैठक में, मंत्री रघुवंश प्रसाद सिंह ने आईआरकॉन के उस इंजीनियर को जमकर फटकार लगाई थी जिसने कहा था कि हृदयचक तक नई सड़क बनाना संभव नहीं है। मंत्री ने घोषणा की थी कि यदि भूमि उपलब्ध है, तो सड़क का निर्माण अवश्य किया जाना चाहिए।
इसी दौरान बिहार परियोजनाओं का काम संभालने वाले IRCON के एक वरिष्ठ इंजीनियर का तबादला दिल्ली हो गया। अनवर उनसे मिलने गए। इंजीनियर ने हथकड़ी लगाने का इशारा करते हुए कहा, 'अगर सड़क बनी तो हम जेल जाएंगे।' उन्होंने ग्रामीण सड़क योजना के नियमों को समझाया - यह एक स्पष्ट स्वीकारोक्ति थी कि कल्याणकारी योजनाएं बेजान नियमों से ऊपर नहीं हो सकतीं। हृदयचक तक सड़क बन चुकी थी, कम से कम कागजों पर तो बन ही चुकी थी। जैसे-जैसे अनवर उनके जीवन में एक अपरिहार्य परेशानी बनता गया, और मंत्री कार्यालय से कभी-कभार दखलंदाजी भी होती रही, आईआरकॉन के इंजीनियरों ने एक चतुराई भरा भारतीय तरीका अपनाया। चूंकि वे हृदयचक तक एक और सड़क को मंजूरी नहीं दे सके, इसलिए उन्होंने एक दूसरे गांव से होकर गुजरने वाली सड़क को मंजूरी दे दी, जिसके माध्यम से यह अंततः हृदयचक पहुंचेगी।
2009 में, जब बिहार के लिए नई ग्रामीण सड़कों को मंजूरी देने के लिए अंतिम बैठक हो रही थी, तब यह निर्णय लिया गया कि सीमित संसाधनों के कारण केवल दो जिलों - औरंगाबाद और छपरा में ही काम शुरू किया जाएगा। अनवर का अरवल जिला

सूची में शामिल नहीं था। लेकिन आईआरकॉन के एक हमदर्द इंजीनियर, जो अनवर के लगातार दबाव का शिकार हो चुके थे, ने बैठक में उपस्थित सदस्यों को सड़क को अपवाद के रूप में शामिल करने के लिए मजबूर कर दिया।
फिर भी, IRCON द्वारा बनाई गई मूल योजना के अनुसार, अरवल जिले के लिए नई सड़कों की सूची में अनवर की सड़क पंद्रहवें स्थान पर थी। अनवर की सूझबूझ और लगन ने यह सुनिश्चित किया कि इसे बाकी सभी परियोजनाओं से प्राथमिकता मिले और 2010 तक यह सड़क बनकर तैयार हो गई। अरवल की बाकी चौदह सड़कें 2014 के अंत तक भी निर्माण के विभिन्न चरणों में थीं। अनवर ने दार्शनिक लहजे में कहा, 'मुझे लगता है कि भारत में काम करने का यही तरीका है।'
अपने गाँव में अनवर एक आदर्श व्यक्ति बन गए, सड़क बनवाने वाले शख्स के रूप में। गाँव में औपचारिक नेतृत्व की भूमिका निभाने को लेकर आशावादी अनवर ने 2011 के पंचायत चुनावों में ग्राम सरपंच पद के लिए स्वतंत्र उम्मीदवार के रूप में अपना नाम दर्ज कराया। मित्रों और रिश्तेदारों द्वारा दान किए गए कुछ हज़ार रुपयों से उन्होंने कम खर्च में चुनाव प्रचार किया। लेकिन गाँवों में निष्ठाएँ जटिल होती हैं। अनवर बुरी तरह हार गए, उन्हें 3,000 वोटों में से केवल 96 वोट ही मिले। उनसे अधिक खर्च करने वाले उम्मीदवार, मुस्लिम वोटों का बँटवारा और, अनवर के आरोप के अनुसार, किसी विशेष उम्मीदवार को वोट देने के लिए प्रलोभन के रूप में शराब का व्यापक वितरण – ये सभी कारक और अन्य कई कारक आज भी स्थानीय चुनावों में किसी उम्मीदवार की जीत तय करते हैं।
अनवर को लगा कि सरकार से बजट सहायता प्राप्त ग्राम निर्वाचित निकाय का मुखिया बनना विभिन्न समस्याओं का समाधान करने का एक तरीका होगा। दुर्भाग्य से, अधिकांश गांवों में स्थानीय निर्वाचित निकाय राज्य और केंद्र की भ्रष्ट और अक्षम सरकारों का ही विस्तार हैं। निर्वाचित सदस्यों को सरकारी अधिकारियों के साथ तालमेल बिठाना पड़ता है, जिनकी ठेकों और खर्चों को मंजूरी देने में महत्वपूर्ण भूमिका होती है, और वे मिलकर अधिकांश धनराशि का दुरुपयोग करते हैं। कई गांवों में, सरपंच जल्द ही एसयूवी और बड़े-बड़े घर खरीद लेते हैं और 'पेशेवर' राजनेता बन जाते हैं। हृदयचक के पास एक गांव में, ग्राम मुखिया को 'बोलेरो मुखिया' कहा जाता है क्योंकि पदभार संभालने के कुछ ही महीनों के भीतर उन्होंने एक बोलेरो एसयूवी खरीद ली।

चुनावी हार ने अनवर का मनोबल नहीं तोड़ा है। अब वे राज्य सरकार से अस्पताल बनवाने के लिए काम कर रहे हैं, जिसके लिए ज़मीन की पहचान हो चुकी है और कुछ साल पहले बजट भी आवंटित किया जा चुका है। सरकारें हमेशा नए कार्यक्रमों के लिए आकर्षक नारे लगाती हैं; इस अस्पताल का आवंटन 'आपकी सरकार, आपके द्वार' नामक योजना के तहत किया गया है।
अनवर ने मुझसे कहा, 'हर परियोजना एक थका देने वाला काम है। काश मेरे पास काम शुरू करने के लिए पैसे होते।'
जब 2008 में सड़क को मंजूरी मिली, तो एक अधिकारी ने उनसे कहा: 'अगर आपने 10 लाख रुपये खर्च किए होते, तो परियोजना को बहुत पहले ही मंजूरी मिल गई होती।' रिश्वतें भारत की खस्ताहाल सरकारी व्यवस्था को गति देने वाला एक जरिया हैं। बस आपके पास सही रकम होनी चाहिए और एक ऐसा बिचौलिए का पता होना चाहिए जो आपके लिए काम कर सके।

एक शाम जब मैं अपने दफ्तर से निकल रहा था, तभी मेरी पहली मुलाकात अनवर से हुई। वह रात के खाने के बाद बहादुर शाह ज़फर मार्ग पर टहलने निकले थे। जहाँ हम खड़े थे, उससे कुछ सौ मीटर की दूरी पर, भारत के सबसे पुराने क्रिकेट मैदानों में से एक, फिरोज शाह कोटला स्टेडियम की फ्लडलाइटें रात के आसमान में जगमगा रही थीं। इंडियन प्रीमियर लीग (आईपीएल) का क्रिकेट मैच चल रहा था। सड़कें दर्शकों से भरी हुई थीं, जो लगातार अंदर-बाहर आ-जा रहे थे, और स्टेडियम शाम के आसमान में किसी अंतरिक्ष यान की तरह खड़ा था।
अनवर ने स्टेडियम की ओर इशारा करते हुए मुझसे पूछा: ‘अगर कोई गरीब आदमी उस स्टेडियम पर बम गिराना चाहे तो इसमें क्या गलत है?’ मेरे पास कोई जवाब नहीं था; यह कार्यकर्ताओं द्वारा पूछे जाने वाले उन व्यंग्यात्मक सवालों में से एक था। अनवर ने पूछा, भारत रात में मैच खेलकर बिजली कैसे बर्बाद कर सकता है, जबकि हृदयचक जैसे हजारों गांवों में अभी तक बिजली नहीं है? वह इस बात को समझ ही नहीं पा रहा था। इसी समय हृदयचक गांव मेरे मन में बसने लगा।
अब चालीस की उम्र पार कर चुके अनवर की दाढ़ी चे ग्वेरा जैसी बिखरी हुई है। लेकिन जब उनसे उनके आदर्श के बारे में पूछा जाता है, तो वे तुरंत अपने चाचा मोटाली खान का नाम लेते हैं, जो कॉमरेड अर्जुन सिंह के छद्म नाम से जाने

जाते थे। खान उन अनेक कम्युनिस्टों में से एक थे जिन्होंने अरवल जिले में हथियार उठाए, जहाँ गरीबी, सरकारी भ्रष्टाचार और आधुनिक विचारों ने मिलकर सशस्त्र विद्रोह के लिए उपजाऊ ज़मीन तैयार की थी। अरवल जिले का हिंसक कम्युनिस्ट आंदोलनों का लंबा इतिहास रहा है और सरकार आज भी इसे वामपंथी उग्रवाद से प्रभावित जिला मानती है।
समय बीतने के साथ-साथ, जैसे-जैसे मैं गाँव की कार्यप्रणाली को समझने लगा, मुझे यह भी अहसास हुआ कि अनवर ही गाँव का लेखा-जोखा रखने वाला था। वह और कुछ अन्य व्यथित ग्रामीण याचिकाएँ दायर करके और राजनेताओं एवं सरकारी अधिकारियों से मुलाकात करके अपनी पीड़ा को दर्ज कर रहे थे। वे किसी भी मायने में अकेले नहीं थे।
भारत के 6,38,000 गांवों में रहने वाले अधिकांश लोग घिरे हुए हैं। इनमें से अधिकांश गांवों में, आक्रोशित नागरिक अपनी भ्रष्ट और अक्षम सरकारों के खिलाफ शिकायतें, याचिकाएं और अदालती मुकदमे तैयार कर रहे हैं, और कभी-कभी हताशा और गुस्से में हिंसक प्रतिक्रियाएं भी दे रहे हैं।

हालाँकि हृदयचक नाम हृदय से लिया गया हो सकता है, लेकिन कई ग्रामीणों का कहना है कि यह नाम संभवतः हरदेव नामक व्यक्ति से आया है, जिसके पास गाँव में एक बड़ा भूखंड था। समय के साथ, यह नाम बदलकर हृदयचक हो गया। इसका वास्तविक उद्गम चाहे जो भी हो, मुझे यहाँ के निवासियों के स्नेह और स्नेह के पर्याप्त प्रमाण मिले, और ऐसा कोई प्रमाण नहीं मिला जिससे यह पता चले कि यह गाँव भारत के किसी भी हिस्से को झकझोरता है। उदारीकृत, बाज़ार-आधारित अर्थव्यवस्था वाले भारत में, जनता के चुने हुए प्रतिनिधि महात्मा गांधी की इस चेतावनी को भूल जाते हैं कि यदि गाँव नष्ट हो जाएँगे, तो भारत भी नष्ट हो जाएगा।
जब अस्पताल परियोजना 2014 तक साकार नहीं हो पाई, तो अनवर अपने एक परिचित पूर्व पत्रकार से मिलने गए, जो उस समय केंद्रीय स्वास्थ्य मंत्री डॉ. हर्ष वर्धन के सलाहकार थे। मंत्री के कार्यालय ने तुरंत इस संबंध में बिहार राज्य सरकार को पत्र भेजा। लेकिन ज़मीनी स्तर पर कोई प्रगति नहीं हुई है। 'मैंने ऊपर से नीचे तक सभी से गुहार लगाई है और विनती की है। शायद मुझे वह सही व्यक्ति नहीं पता जो यह काम करवा सके,' अनवर ने मुझे बताया।

हालांकि मध्यस्थों की व्यवस्था का पर्याप्त अध्ययन नहीं किया गया है, फिर भी यह विश्वासपूर्वक कहा जा सकता है कि जनता और सरकारों के बीच मध्यस्थ का व्यवसाय भारत में सबसे फलता-फूलता उद्योग है। यह मंदी से अप्रभावित है और इसमें प्रवेश के लिए कोई बाधा नहीं है; इसके अलावा, यह इसमें शामिल लोगों को सामाजिक उन्नति के कई अवसर प्रदान करता है। इसके लिए किसी लाइसेंस की आवश्यकता नहीं है, न ही कर चुकाने की, और न ही कोई अनिवार्य योग्यता। सरकारी दफ्तर का चपरासी हो या किसी अधिकारी का सहायक, निचले स्तर का राजनीतिक कार्यकर्ता हो या प्रतिष्ठित विश्वविद्यालय से स्नातक की डिग्री धारक, सभी इसमें सहजता से फिट बैठते हैं। अनुकूल राजनीतिक माहौल होने पर, चतुराई से बात करने वाले उच्च स्तरीय कार्यकर्ता नई दिल्ली में अरबों डॉलर के सौदे करवा सकते हैं। यहां तक कि सफल व्यवसायी भी पेशेवर मध्यस्थ का काम काफी आकर्षक पा सकते हैं।
भारत की जीडीपी का एक महत्वपूर्ण हिस्सा और इसकी अधिकांश काली अर्थव्यवस्था इन दलालों द्वारा लोगों को उनके हक दिलाने या व्यापारियों को ऐसे सौदे दिलाने के लिए अर्जित शुल्क से बनी है, जो अन्यथा उन्हें नहीं मिल पाते। भारतीय राजनीतिक दल भी कई महत्वपूर्ण सेवाओं के लिए इन पर निर्भर हैं, विशेष रूप से धन के हेरफेर के लिए और सबसे निचले स्तर पर, भीड़ जुटाने और यहां तक कि मतदान कराने के लिए।

हर सुबह करीब 8:30 बजे, मोहम्मद सरफराज खान, जो लंबे कद के हैं, दाढ़ी रखते हैं और कंधों पर दुपट्टा ओढ़े रहते हैं, एक यूनानी चिकित्सा केंद्र के लकड़ी के दरवाजे खोलते हैं, उसकी दो अलमारियों, एक मेज और एक कुर्सी की धूल झाड़ते हैं और कमरे व बरामदे में झाड़ू लगाते हैं। फिर वे केंद्र को ताला लगाकर घर लौट जाते हैं, या गांव के चौक पर थोड़ी देर रुककर बातचीत करते हैं। पिछले पांच सालों से इस अधेड़ उम्र के क्लिनिक अटेंडेंट की यही दिनचर्या रही है। वे पूछते हैं, 'न डॉक्टर है, न दवा बनाने वाला, न दवा। मैं और क्या करूँ?' हर कुछ महीनों में, खान पास के शहर गया जाते हैं, जहाँ से वे सरकार से अपना वेतन लेते हैं।

लगभग दो दशक पहले तक, राज्य सरकार का एक यूनानी डॉक्टर हृदयचक में रहता था और खान के परिवार से एक कमरा किराए पर लेता था। संभवतः, अभी भी कोई नियुक्त डॉक्टर के रूप में वेतन ले रहा हो। इस गाँव में इतनी अनिश्चितताएँ हैं कि निश्चित रूप से कुछ नहीं कहा जा सकता।
मोहम्मद सैफुल्लाह अंसारी, जो पिछले पंद्रह वर्षों से चिकित्सा का अभ्यास कर रहे हैं, यूनानी केंद्र के बगल वाले कमरे में रहते हैं। वे पूर्ण रूप से योग्य चिकित्सक नहीं हैं, लेकिन उनके पंजीकृत चिकित्सा व्यवसायी लाइसेंस के तहत वे प्राथमिक स्वास्थ्य देखभाल कर सकते हैं। प्रतिदिन, उनके पास गाँव से लगभग एक दर्जन मरीज आते हैं, जिनमें से अधिकांश दस्त, टाइफाइड, मलेरिया, फाइलेरिया आदि से पीड़ित होते हैं, जो अधिकतर जलजनित रोग या कुपोषण के परिणाम होते हैं। गाँव में कम से कम दो और ऐसे चिकित्सक हैं, जिनमें से एक डाकघर का काम भी करते हैं।
कमरों और घरों की कतार के बाहर, जिनमें यूनानी चिकित्सा केंद्र और अंसारी का क्लिनिक शामिल हैं, एक खुला नाला बहता है, जो गंदे पानी, प्लास्टिक और अन्य कचरे से भरा हुआ है। इसमें ज़्यादा बदबू तो नहीं आती, लेकिन मच्छरों और अन्य कीड़ों का झुंड यहाँ मंडराता रहता है। नाले के बगल में राज्य सरकार द्वारा हाल ही में निर्मित एक संकरी सड़क है, जो घनी आबादी वाले गाँव से होकर गुजरती है और राष्ट्रीय राजमार्ग से जुड़ती है। नई दिल्ली में अनवर के प्रयासों के बदौलत, यह सड़क गाँव के लिए बाहरी दुनिया से जुड़ने का जीवन रेखा है।
यह सड़क हृदयचक को कालेर से जोड़ती है, जो पास का ही एक कस्बा है जहाँ एक छोटा अस्पताल, एक हाई स्कूल और इलाके का सबसे बड़ा बाज़ार है। यह गाँव को NH 98 से जोड़ती है, जो राज्य की राजधानी पटना को औरंगाबाद से जोड़ती है। यहाँ यह ग्रैंड ट्रंक रोड से मिलती है, जो 2,000 से अधिक वर्षों से दक्षिण एशिया के एक बड़े हिस्से से होकर गुज़रती रही है। हालाँकि, पटना से औरंगाबाद तक की टूटी-फूटी सड़क पर उस गौरवशाली इतिहास का कोई निशान नहीं दिखता।
यदि आप सड़क पर चलने वाले निजी वाहनों का खर्च वहन नहीं कर सकते, तो पैदल यात्रा ही एकमात्र विकल्प है, जो हृदयचक के अधिकांश छात्र हाई स्कूल जाने के लिए और ग्रामीण बाजार जाने के लिए आज भी करनी पड़ती है। अभी तक कोई सरकारी सब्सिडी वाली सार्वजनिक परिवहन व्यवस्था नहीं है।

मोटर योग्य संपर्क मार्ग इस समाज के भीतर मौजूद पारंपरिक विभाजनों को और भी मजबूत करता है। इसे उन रास्तों पर बनाया गया है जो गाँव को जाति और धर्म के आधार पर विभाजित करते थे। गाँव कई बस्तियों का समूह है। यूनानी चिकित्सा केंद्र मुस्लिम बस्ती में है, जो मध्य में स्थित है और ब्राह्मण, बनिया, भूमिहार और घनी आबादी वाली यादव बस्तियों से घिरी हुई है। यहाँ कुछ महादलित बस्तियाँ भी हैं - एक गाँव के अंत में मुस्लिम कब्रिस्तान से ठीक पहले और दूसरी माध्यमिक विद्यालय के पास। यहीं पर सबसे गरीब लोग रहते हैं, जाति और वर्ग के सभी भेदभावों से परे, उनकी बस्तियाँ खराब ढंग से साफ-सुथरी और बदबूदार हैं, उनके घर साबुन के डिब्बों जैसे हैं।
यह गाँव पानी की आपूर्ति के लिए हैंडपंपों पर निर्भर है और अधिकांश लोग खुले में नहाते हैं। अपेक्षाकृत धनी परिवारों के पास निजी हैंडपंप हैं और गरीब लोग कुछ सार्वजनिक पंपों पर निर्भर हैं। यहाँ धनवानों की स्थिति केवल गाँव के संदर्भ में ही धनवान मानी जाती है। व्यापक राष्ट्रीय संदर्भ में, यहाँ का एक भी परिवार मध्यम वर्ग की श्रेणी में नहीं आता।
यहां सरकार द्वारा पाइप से पानी की आपूर्ति नहीं होती, न ही पीने के साफ पानी का कोई अन्य स्रोत है। अधिकांश लोग भूजल पंप करके सीधे पीते हैं; कुछ लोग इसे उबालते हैं, लेकिन इससे भी यह गारंटी नहीं है कि इसमें रोगाणु नहीं होंगे। गांव में आगे जाने पर एक मीठा कुआं दिखाई देता है। वर्षों तक इसने पूरे गांव को पीने का पानी मुहैया कराया, लेकिन कुएं की देखभाल करने वाला कोई नहीं था, इसलिए यह बेकार हो गया। अब इसका इस्तेमाल कचरा फेंकने के लिए किया जाता है।
अंसारी ने कहा, ‘बीमारियां हमारी सबसे बड़ी समस्या हैं। सरकार को इसकी कोई परवाह नहीं है।’
हम अस्पताल के प्रस्ताव के बारे में बात कर रहे थे। अंसारी के क्लिनिक से कुछ सौ मीटर दूर, ब्राह्मण बस्ती के पास, हम खेतों के बगल में एक खुले मैदान में पहुँचे, जहाँ हाल ही में एक आंगनवाड़ी (किंडरगार्टन) खुली थी। ‘यह अस्पताल की जगह है,’ उसने आगे इशारा करते हुए कहा, जहाँ बंजर ज़मीन पर एक टूटा हुआ ट्रांसफ़ॉर्मर पड़ा था। यह ट्रांसफ़ॉर्मर गाँव को बिजली पहुँचाने के एक और नाकाम सरकारी कार्यक्रम का अवशेष था। एक दिन, राज्य बिजली बोर्ड के इंजीनियर और कर्मचारी खेतों के बीच से बिजली की लाइनें बिछाकर गाँव पहुँचे। उन्होंने गाँव वालों की इस अपील को अनसुना कर दिया कि

लाइनों को खेतों से दूर, कच्चे रास्ते से गाँव तक ले जाया जाए, और अपनी मूल योजना पर अड़े रहे। उन्होंने इस मौसम की धान, मक्का और सब्ज़ियों की फसल बर्बाद कर दी, जो ज़्यादातर परिवारों की आमदनी का एकमात्र ज़रिया थी। फिर अधिकारियों ने कंक्रीट के खंभे लगाए, उन्हें ट्रांसमिशन लाइनों से जोड़ा और गायब हो गए। यह लगभग चार साल पहले की बात है, लेकिन यहाँ अभी तक बिजली नहीं है।
हृदयचक अकेले इस अंधकार में नहीं हैं। भारत की ग्रामीण आबादी के 56 प्रतिशत से अधिक हिस्से में बिजली नहीं है। मोटे तौर पर कहें तो, लगभग 300 से 400 करोड़ भारतीय, जो लगभग संयुक्त राज्य अमेरिका की आबादी के बराबर हैं, बिना बिजली के जीवन व्यतीत करते हैं और उनकी रातें कभी-कभार मिट्टी के तेल के लैंप से रोशन होती हैं। ऐसा नहीं है कि बाकी भारत में पर्याप्त बिजली है; शहरों में अधिकांश आवासीय परिसर निजी डीजल जनरेटरों पर निर्भर हैं।
2015 के अंत तक, हृदयचक के कुछ हिस्सों में बिजली पहुँच गई थी। निवासियों ने राज्य सरकार के कई कार्यालयों के चक्कर लगाए और सही मध्यस्थों की तलाश की, जिससे उनके जीवन में रोशनी आई। फिर भी, काम आसान नहीं था। सरकार द्वारा नियुक्त पहला ठेकेदार भुगतान में देरी होने पर अधिकांश उपकरण लेकर भाग गया। दूसरे ठेकेदार ने ग्रामीणों को कुछ हज़ार रुपये इकट्ठा करने और कुछ उपकरण खरीदने के लिए मजबूर किया, जो उसे खुद उपलब्ध कराने चाहिए थे। इसके बावजूद, उसने विद्युतीकरण का केवल 40 प्रतिशत काम ही पूरा किया। जुलाई 2016 में जब यह पुस्तक प्रकाशित हुई, तब भी गाँव का अधिकांश भाग अंधेरे में डूबा हुआ था। हालांकि, केंद्र सरकार के रिकॉर्ड में, जिसके पास अब बिजली विहीन गाँवों पर नज़र रखने के लिए एक ऐप है, हृदयचक एक विद्युतीकृत गाँव है, क्योंकि उसके आँकड़ों में कम से कम 10 प्रतिशत घरों में बिजली आपूर्ति वाले किसी भी गाँव को विद्युतीकृत माना जाता है।
हृदयचक की नीची छतों के ऊपर से गुजरती बिजली की लाइन उस दूरस्थ सरकार की याद दिलाती है जिसे ग्रामीण शायद ही कभी देख पाते हैं। जब कभी सरकार का थोड़ा-बहुत सा भी साया उन पर पड़ता है, तो वह अक्षम, भ्रष्ट और निरंकुश साबित होती है। लोकतंत्र चुनावों के माध्यम से नियमित रूप से आता है; बाकी सभी कामों के लिए ग्रामीणों को दलालों और बिचौलियों की तलाश करनी पड़ती है। यही स्थिति भारत के अधिकांश हिस्सों में भी है।

अंसारी कहते हैं, 'किसी को नहीं पता कि अस्पताल कब बनेगा। तब तक हममें से कई और लोग असमय मर जाएंगे।'
हाल के अनुमानों के अनुसार, ग्रामीण क्षेत्रों में रहने वाले लगभग 66 प्रतिशत लोगों को ज़रूरी दवाइयाँ नहीं मिल पाती हैं, जबकि 31 प्रतिशत भारतीयों को स्वास्थ्य सेवा प्राप्त करने के लिए 30 किलोमीटर से अधिक की यात्रा करनी पड़ती है। शहरी क्षेत्रों में रहने वाले केवल 28 प्रतिशत भारतीय ही भारत में उपलब्ध 66 प्रतिशत अस्पताल बिस्तरों पर कब्ज़ा जमाए हुए हैं। ध्यान रहे, भारत अभी भी मुख्य रूप से एक ग्रामीण देश है, जिसकी लगभग 70 प्रतिशत आबादी ग्रामीण क्षेत्रों में रहती है। इसलिए, अगर आप सोचें तो हृदयचक वास्तव में बहुत भाग्यशाली है; निकटतम स्वास्थ्य सुविधा केवल 3 किलोमीटर दूर है।
2 अक्टूबर 2014 को हृदयचक के सेवानिवृत्त पुलिस कांस्टेबल जमील खान को पेट में दर्द की शिकायत हुई। गांव या कलेर में उपलब्ध कोई भी दवा काम नहीं आई और उनकी हालत तेजी से बिगड़ने लगी। अंततः, ग्रामीणों ने उन्हें पटना के अस्पताल ले जाने का फैसला किया। 90 किलोमीटर का यह सफर काफी ऊबड़-खाबड़ था। चार घंटे बाद जब वे पटना के अस्पताल पहुंचे, तब तक खान की मृत्यु हो चुकी थी। उस दिन महात्मा गांधी की जयंती थी।

दोपहर लगभग 1 बजे, जब सर्दियों की धूप तेज़ चमक रही थी, कुछ ग्रामीण मेरे साथ स्थानीय स्कूल गए। इमारत जर्जर थी, बच्चे बाहर खेल रहे थे, शिक्षक एक ऐसे स्टाफ रूम में ठसाठस भरे हुए थे जिसका फर्श ऊबड़-खाबड़ और दीवारें टूटी-फूटी थीं। छत से छनकर धूप अंदर आ रही थी; अगर बारिश होती, तो कमरे में भी पानी भर जाता। एक कोने में बच्चों के दोपहर के भोजन के लिए चावल और दाल से भरे बोरे रखे थे। कक्षा एक से आठ तक, लगभग 470 बच्चे स्कूल में पढ़ते थे।
स्कूल के प्रधानाध्यापक मोहम्मद फकरुद्दीन के पैर बचपन में पोलियो संक्रमण के कारण कमजोर थे। फिर भी, वे काम पर जाने के लिए हर दिन 10 किलोमीटर साइकिल चलाते थे। उन्होंने दुख जताते हुए कहा, ‘स्कूल शिक्षक सरकार के हर काम के लिए एक उपकरण हैं; जनगणना से लेकर चुनाव तक, हमें हर जगह

मौजूद रहना पड़ता है।’ उन्हें दोपहर के भोजन पकाने, मरम्मत कार्यों, सरकार द्वारा आवंटित पुस्तकों के वितरण आदि सहित कई प्रशासनिक कार्यों की भी देखरेख करनी पड़ती थी। उन्हें सामान्य प्रशासनिक खर्चों के लिए प्रति वर्ष 24,000 रुपये मिलते थे। चाक, डस्टर और अन्य सामान इसी से खरीदे जाते थे, और संभव हो तो मरम्मत कार्यों का खर्च भी इसी से उठाया जाता था। उन्होंने कहा, ‘जब समय मिलता है तो मैं पढ़ाता भी हूं।’
राज्य सरकार में हर राजनीतिक और प्रशासनिक बदलाव से स्कूल में हलचल मच जाती है। मई 2014 में जब बिहार के मुख्यमंत्री नीतीश कुमार ने इस्तीफा दिया, तो परिणामस्वरूप हुए फेरबदल और अफरा-तफरी के कारण स्कूल के वेतन भुगतान में तीन महीने की देरी हो गई। संविदा शिक्षकों की बात करें, जो नियमित सरकारी कर्मचारी नहीं हैं, लेकिन राज्य के शिक्षण समुदाय का एक महत्वपूर्ण हिस्सा हैं, तो उनके मामूली वेतन का भुगतान आमतौर पर पांच या छह महीने के चक्र में किया जाता है।
गांव के एक व्यक्ति ने बताया कि स्कूल की इमारत की मरम्मत बीस साल पहले पूरी तरह से करवाई गई थी। उन्होंने कहा, “बारिश में इमारत बुरी तरह क्षतिग्रस्त हो गई थी और हमारे बच्चों के पढ़ने के लिए कोई जगह नहीं थी। हम सबने मिलकर इमारत की मरम्मत की।” जब मैं वहां गया, तो फर्श पूरी तरह से गायब थे, दीवारें फटी हुई थीं, पीला रंग काफी समय पहले उखड़ चुका था, छत टपक रही थी और पूरी इमारत धूल से ढकी हुई थी।
उस साल, छात्रों के लिए मुफ्त पाठ्यपुस्तकें अप्रैल 2014 में शैक्षणिक सत्र शुरू होने पर भी नहीं पहुँचीं। वे अक्टूबर-नवंबर तक ही पहुँचीं। स्कूल के ग्यारह शिक्षकों में से एक ने मुझे बताया, 'लगभग आधा शैक्षणिक सत्र बर्बाद हो गया। हमने वरिष्ठ छात्रों की पुरानी पाठ्यपुस्तकों से काम चलाया।' शिक्षकों ने कहा कि इस स्कूल के बच्चे वास्तव में भाग्यशाली हैं, क्योंकि आस-पास के कई गाँवों में केवल एक या दो शिक्षक हैं। उनमें से एक ने कहा, 'पहाड़पुर में एक प्राथमिक विद्यालय (कक्षा एक से पाँच तक) है जिसे केवल एक महिला शिक्षिका चलाती हैं।'
राष्ट्रीय शिक्षा योजना एवं प्रशासन संस्थान (एनआईईपीए) द्वारा किए गए एक हालिया सर्वेक्षण में पाया गया कि भारत के एक लाख से अधिक प्राथमिक विद्यालयों में केवल एक ही कक्षा है। बिहार में 1,200 से अधिक विद्यालयों में तो भवन ही नहीं है। पूरे भारत में, इन बिना कमरे वाले या एक कमरे वाले

विद्यालयों में से 90 प्रतिशत ग्रामीण क्षेत्रों में स्थित हैं। बिहार के लगभग 27 प्रतिशत विद्यालय एकल शिक्षक वाले संस्थान हैं, जिनमें औसतन प्रत्येक में सौ छात्र हैं।
हृदयचक में शिक्षक-छात्र अनुपात चालीस से अधिक है, जो शिक्षा के अधिकार अधिनियम के तहत सरकार द्वारा निर्धारित अनुपात (प्रति शिक्षक तीस छात्र) से कहीं अधिक है। बाल शिक्षा का अधिकार अधिनियम, 2009 के तहत प्रत्येक भारतीय बच्चे को चौदह वर्ष की आयु तक संतोषजनक और समान गुणवत्ता वाली पूर्णकालिक प्राथमिक शिक्षा प्राप्त करने का अधिकार दिया गया है। अनुमान भिन्न-भिन्न हैं, लेकिन भारत में लगभग पांच लाख शिक्षकों की कमी है और आठ मिलियन से अधिक प्राथमिक विद्यालय जाने योग्य बच्चे अभी भी स्कूल नहीं जाते हैं। यह कानून कागज़ पर तो प्रभावशाली लगता है, लेकिन इस महान गणतंत्र के कई अन्य वादों की तरह, यह भी इस गाँव के लोगों की अपेक्षाओं का मज़ाक उड़ाता है।
हृदयचक के शिक्षकों ने शिकायत की कि इस अधिनियम ने शिक्षा की गुणवत्ता को बुरी तरह प्रभावित किया है। एक मुखर शिक्षक ने कहा, 'पहले हम नियमित परीक्षाएं लेते थे, छात्रों का कड़ाई से मूल्यांकन करते थे और यदि कोई छात्र कमजोर होता था, तो हम यह सुनिश्चित करते थे कि वह सुधर जाए।' अधिनियम में यह प्रावधान है कि प्राथमिक शिक्षा पूरी होने तक किसी भी बच्चे को रोका नहीं जा सकता, निष्कासित नहीं किया जा सकता या बोर्ड परीक्षा उत्तीर्ण करने के लिए बाध्य नहीं किया जा सकता।
तो फिर वे छात्रों का मूल्यांकन कैसे करते हैं? उन्होंने कहा, 'हम उन्हें ग्रेड देते हैं।'
एक महिला कमरे में आई, चूल्हा जलाया और पानी उबाला। उसने उसमें दूध, चाय और चीनी मिलाई और फिर से उबालने लगी। हमें चाय तो परोसी गई, लेकिन बच्चों का दोपहर का खाना कहीं नज़र नहीं आ रहा था। प्रधानाचार्य ने बचाव करते हुए समझाया, 'खाना परोसने का समय थोड़ा आगे-पीछे हो सकता है।'
उसके दाहिनी ओर एक छोटी सी खिड़की थी जिससे गाँव के बंजर खेत दिखाई देते थे। खिड़की की लोहे की रेलिंग मुड़ी हुई थी। प्रधानाचार्य ने बताया, 'एक रात किसी ने खिड़की का लकड़ी का दरवाजा तोड़ दिया, रेलिंग को मोड़ दिया और इस कमरे में घुस गया। वे डेढ़ बोरी चावल चुरा ले गए।' मैंने सोचा, चोर कितना बेताब रहा होगा कि बच्चों के लिए रखे चावल चुरा लिए।

कमरे में मौजूद हर व्यक्ति इस बात पर मुखर था कि सरकार और उसकी उदासीन नौकरशाही किस प्रकार हृदयचक के बच्चों के हक से उनका हनन कर रही है। सरकार इतनी दूर और पहुंच से बाहर है - और यही उनकी सामूहिक शिकायत का मूल कारण था।
नई दिल्ली में आजकल सारी चर्चा भारत को विनिर्माण केंद्र में बदलने, स्मार्ट शहरों का निर्माण करने और देश की आईटी क्षेत्र में शक्ति को मजबूत करने पर केंद्रित है। नई सरकार भारत के पुराने गौरव और वैश्विक व्यवस्था में उसके उचित स्थान को पुनः प्राप्त करने की बात कर रही है। लेकिन हृदयचक में इन शब्दों का कोई अर्थ नहीं है।
जब यहाँ के बच्चे आठवीं कक्षा में मिडिल स्कूल से पास होकर पास होते हैं, तो नज़दीकी हाई स्कूल कलेर में तीन किलोमीटर से भी ज़्यादा दूर है, और वो भी खेतों और सुनसान ज़मीन से होकर पैदल चलकर। मानसून के दौरान, उन्हें अपने पायजामे और पैंट को मोड़कर रुके हुए पानी में से गुज़रकर वहाँ पहुँचना पड़ता है, और वो भी बारिश में भीगते हुए। यहाँ के ज़्यादातर परिवारों के लिए छाता भी एक विलासिता है। गर्मियों में, स्कूल के बाद, हृदयचक के छात्र अपने रुमालों को पानी में भिगोकर सिर पर रखते हैं ताकि चिलचिलाती धूप से बच सकें, फिर वे घर के बीच में पड़ने वाले एक छोटे से गाँव की ओर चलते हैं। जब तक वे वहाँ पहुँचते हैं, रुमाल सूख चुके होते हैं। वे प्यास बुझाते हैं, रुमालों को फिर से पानी में भिगोते हैं और दौड़कर घर पहुँच जाते हैं। हृदयचक के माता-पिता का मानना था कि यह सफ़र सिर्फ़ लड़के ही तय कर सकते हैं, और इसीलिए हाल तक गाँव की लगभग कोई भी लड़की हाई स्कूल नहीं जाती थी।
सड़क बनने और कुछ निजी वाहनों के चलने के बाद, जो माता-पिता परिवहन का खर्च उठा सकते थे, उन्होंने अपनी बेटियों को कलेर के हाई स्कूल में भेजना शुरू कर दिया। अन्यथा, माध्यमिक विद्यालय के बाद लड़कियाँ घर पर ही रहती थीं और कुछ वर्षों में उनकी शादी हो जाती थी। इस सड़क से गाँव की लड़कियों के जीवन में मामूली सुधार आया है।
दिल्ली में अपनी बेटी के जीवन के बारे में सोचकर मुझे गहरा दर्द और अपराधबोध हुआ। एक स्कूल बस उसे हमारे अपार्टमेंट कॉम्प्लेक्स के बाहर से लेने आती है और उसे 12 किलोमीटर दूर एक स्कूल ले जाती है, जहाँ उसके लिए पुस्तकालय, विज्ञान प्रयोगशालाएँ और कई शौक के क्लब हैं। उस स्कूल में

ज़रूरत से ज़्यादा शिक्षक हैं और नियमित रूप से उत्सव आयोजित किए जाते हैं और छात्रों को भारत के भीतर और यहाँ तक कि विदेशों में भी भ्रमण के लिए भेजा जाता है। वह हैरी पॉटर पढ़ती है, मास्टरशेफ ऑस्ट्रेलिया देखती है और हमारे साथ राजनीति पर चर्चा करती है। वह एक अलग ही दुनिया में रहती है। हृदयचक के बच्चों की दुर्दशा के लिए केवल सरकार ही ज़िम्मेदार है; न तो धन की कमी, न ही बच्चों में उत्साह की कमी, बल्कि सरकार की इच्छाशक्ति और करुणा की पूर्ण कमी। यही आधुनिक भारत की कहानी है। शहरों में रहने वाले कुछ विशेषाधिकार प्राप्त लोगों को छोड़कर, अधिकांश भारतीय, जो देश के उपेक्षित गाँवों में रहते हैं, वास्तव में उभरती हुई वैश्विक शक्ति के आर्थिक उछाल का लाभ नहीं उठा पाए हैं।
हृदयचक के बच्चों को रोज़ाना स्कूल आने-जाने में कई चुनौतियों का सामना करना पड़ता है, जिनमें से एक है रोज़ाना की यात्रा। ये बच्चे रोज़गार पाने और संभव हो तो आधुनिक भारत की सफलताओं में अपना योगदान देने की कोशिश में लगे रहते हैं। एक शिक्षक कहते हैं, 'हमारे पास कई प्रतिभाशाली छात्र हैं, लेकिन वे IIT में दाखिला नहीं ले पाते।' वे भारतीय प्रौद्योगिकी संस्थानों (IIT) का जिक्र कर रहे थे, जिनमें राष्ट्रीय प्रतियोगी परीक्षा के माध्यम से प्रवेश पाना भारत के स्कूलों से स्नातक होने वालों के लिए सबसे प्रतिष्ठित उपलब्धियों में से एक है।
विडंबना यह है कि हृदयचक, नालंदा से तीन घंटे से भी कम की दूरी पर स्थित है, जो मानव इतिहास के महानतम उच्च शिक्षा केंद्रों में से एक का स्थल है। पांचवीं शताब्दी में स्थापित यह विश्वविद्यालय तेरहवीं शताब्दी तक अस्तित्व में रहा, जब यूरोप के महान विश्वविद्यालयों का स्वरूप निखरना शुरू ही हुआ था।
अपने चरम उत्कर्ष पर नालंदा में 10,000 से अधिक छात्र, 2,000 से अधिक शिक्षक और अनेक तीर्थयात्री थे। वे चीन, जापान, कोरिया, इंडोनेशिया, फारस, तुर्की और अन्य स्थानों से आते थे। विश्वविद्यालय परिसर स्थापत्य कला का एक अद्भुत नमूना था, जिसमें आठ अलग-अलग परिसर, दस मंदिर, अनेक ध्यान कक्ष और कक्षाएँ थीं। 12 हेक्टेयर में फैले परिसर में झीलें और पार्क थे। पुस्तकालय नौ मंजिला इमारत थी। यह केवल बौद्ध धार्मिक शिक्षा का केंद्र ही नहीं था, बल्कि यहाँ चिकित्सा, इतिहास, कानून और वास्तुकला जैसे आधुनिक विषय भी पढ़ाए जाते थे।

पर्यवेक्षकों – जिनमें नालंदा मेंटर ग्रुप के सदस्य जॉर्ज येओ भी शामिल हैं – का कहना है कि नालंदा का पतन दूसरी सहस्राब्दी में एशिया के पतन और पश्चिम के उदय का प्रतीक है। यह पश्चिम को सत्ता हस्तांतरण और आधुनिक औपनिवेशिक युग की शुरुआत के बाद हुआ। 2007 में, फिलीपींस के सेबू में आयोजित पूर्वी एशियाई शिखर सम्मेलन में, सदस्य देशों ने नालंदा विश्वविद्यालय को पुनः स्थापित करने का निर्णय लिया। न्यूयॉर्क टाइम्स ने कहा कि नालंदा ‘आज एशिया को जिस चीज की सबसे ज्यादा जरूरत है, उसका प्रतिनिधित्व करता है – एक महान वैश्विक विश्वविद्यालय जो क्षेत्र की अंतर्निहित सांस्कृतिक विरासत में गहराई तक पहुंचता है, लोगों और संस्कृतियों के बीच कभी मौजूद रहे कई शांतिपूर्ण संबंधों को पुनर्स्थापित करता है, और एशिया को प्रभाव और आकर्षण की वह सौम्य शक्ति प्रदान करता है जो उसके पास अभी नहीं है’।
आधुनिक नालंदा विश्वविद्यालय की स्थापना 2010 में हुई थी, और इसके शासी निकाय में अर्थशास्त्री अमर्त्य सेन (जिन्हें कुलाधिपति नियुक्त किया गया था), सिंगापुर के पूर्व विदेश मंत्री जॉर्ज येओ, बीजिंग विश्वविद्यालय के प्रोफेसर वांग बांगवेई और क्योटो सिटी यूनिवर्सिटी ऑफ आर्ट्स के प्रोफेसर सुसुमु नाकानिशी जैसे प्रख्यात व्यक्ति शामिल थे। सेन ने बताया, 'जब यूरोप का सबसे प्राचीन विश्वविद्यालय, बोलोग्ना विश्वविद्यालय, स्थापित हुआ था - यह 1088 में हुआ था - तब नालंदा में उच्च शिक्षा का केंद्र पहले से ही 600 वर्ष से अधिक पुराना था।' नोबेल पुरस्कार विजेता और एक प्रसिद्ध बुद्धिजीवी के रूप में उनकी वैश्विक प्रतिष्ठा भी सेन को विश्वविद्यालय के कुलाधिपति पद को बनाए रखने में मदद नहीं कर सकी, जब 2014 की गर्मियों में नई दिल्ली में राजनीतिक परिवर्तन हुआ। कुछ महीनों बाद, नरेंद्र मोदी सरकार ने यह सुनिश्चित किया कि सेन, जिन्होंने मोदी के सांप्रदायिक अतीत के बारे में खुलकर अपनी असहमति व्यक्त की थी और ऐसा करना जारी रखा है, को इस परियोजना से बाहर कर दिया जाए।
हृदयचक में ये सभी नाटकीय घटनाएँ अनसुनी और अनकही रह गईं। सुदूर अतीत, जब चीन या जापान के विद्वान नालंदा से भटकते हुए हृदयचक आए होंगे, का तो यहाँ तक उल्लेख भी नहीं है। गाँव के वर्तमान निवासियों में केवल अपनी दैनिक आवश्यकताओं को पूरा करने की ही ऊर्जा बची है।

दोपहर के लगभग 2:30 बज चुके थे और दोपहर के भोजन का अभी तक कोई नामोनिशान नहीं था। तीन महिलाएं स्कूल की रसोई के बाहर दुबकी बैठी थीं। खाना तैयार था, लेकिन मुझे समझ आ गया कि वे मेरे सामने उसे परोसना नहीं चाहती थीं। अगर मैंने खाना चख लिया तो क्या होगा? अगर खाना उतना पौष्टिक न हो जितना होना चाहिए था तो क्या होगा? अगर मैंने स्कूल के कर्मचारियों को बच्चों के लिए बने खाने में मिलावट करते हुए पकड़ लिया तो क्या होगा?
बच्चे आपस में बातें करते रहे। उन्हें अपनी भूख या सुविधाओं की कमी की कोई परवाह नहीं थी। मैं उनके दोपहर के भोजन में और देरी नहीं करना चाहता था। जाते समय मैंने एक बच्चे से पूछा, 'तुम क्या बनना चाहते हो?' फटी हुई स्वेटर और अपर्याप्त सर्दियों के कपड़ों में लिपटे उस लड़के ने मेरी तरफ देखा और फिर अपने दोस्तों की तरफ। वे सब हंसने लगे।
हृदयचक की परिस्थितियाँ जितनी दयनीय थीं, उससे कहीं अधिक भयावह गाँव की महादलित बस्तियाँ थीं। माचिस की डिब्बी के आकार के घर, एक या दो कमरे जिनमें इंसान और मवेशी ठसाठस भरे रहते थे। एक कोने में रसोईघर था, दूसरे में बच्चे को नहलाया जाता था, तीसरे कोने में स्कूली बच्चे पढ़ते थे, और इन सबके बीचोंबीच सोने का कमरा था। सर्दियों में, इस बस्ती के निवासी थोड़ी सी गर्मी पाने की उम्मीद में चावल के छिलके से खुद को ढक लेते थे।
भारतीय संविधान के निर्माता और आधुनिक दलित राजनीति के प्रवर्तक डॉ. बी.आर. अंबेडकर ने अस्पृश्यता को ‘गुलामी का दूसरा नाम’ कहा था। संविधान द्वारा जाति व्यवस्था को समाप्त किए जाने के बावजूद, भारत में जाति व्यवस्था और उसके आधार पर होने वाला भेदभाव, जो अवैध और दंडनीय है, आज भी फल-फूल रहा है। इस पुस्तक के संपादन कार्य को अंतिम रूप देते समय ही एक दलित परिवार को किराने का सामान खरीदते समय गलती से एक ब्राह्मण का हाथ छूने पर पीटा गया। भारत भर से दलितों के विरुद्ध अत्याचारों की खबरें लगातार आ रही हैं। महादलित इस व्यवस्था में सबसे निचले पायदान पर हैं, दलितों में सबसे निचले स्तर पर।
उनका इलाका हृदयचक के बाहरी किनारे पर है, ताकि उनके घर और उनकी परछाईं गांव के उच्च जातियों को 'अपवित्र' न करें। हाल ही में बनी सड़क इन घरों के बीच से होकर गुजरती है, एक पीपल के पेड़ को पार करती है और मुस्लिम कब्रिस्तान के पास से जाती है। इन घरों में से किसी में भी शौचालय नहीं है। इसलिए हर सुबह, सूर्योदय से पहले, पुरुष, महिलाएं और बच्चे कब्रिस्तान

जाने वाली सड़क के किनारे बैठकर शौच करते हैं। उनमें से अधिकांश अपने साथ पानी की बोतल रखते हैं ताकि वे खुद को साफ कर सकें। कई लोग सूर्यास्त के बाद भी शौच करते हैं। हालांकि, यह सड़क उनके मुस्लिम पड़ोसियों के लिए लगभग पवित्र है क्योंकि यह विश्वासियों की अंतिम यात्रा का मार्ग है। सड़क के अपवित्र होने के कारण अक्सर मुसलमानों और महादलितों के बीच तनाव पैदा होता रहा है।
महादलितों ने एक समाधान सुझाया है: उनके इलाके से गाँव के बाहर दूसरी दिशा में एक सड़क बनाई जाए। उनके लिए, यह सड़क शौचालय के समान ही बाहरी दुनिया से जुड़ने का साधन है। लेकिन इसके लिए कुछ ज़मींदार मुसलमानों और उच्च जाति के हिंदुओं को अपनी कुछ ज़मीन छोड़नी पड़ेगी, और वे ऐसा करने से इनकार करते हैं। इसलिए, फिलहाल पवित्र कब्रिस्तान वाली सड़क पर मल-मूत्र फैला हुआ है।
भारत में लगातार आने वाली सरकारों ने शौचालयों की कमी की सच्चाई को औसत और कुल संख्या के आधार पर छिपाया है। मोदी सरकार का दावा है कि वह 2019 तक खुले में शौच को समाप्त कर देगी। इससे पहले भी कई सरकारों ने इसी तरह के महत्वाकांक्षी लक्ष्य निर्धारित किए हैं। फिर भी, यूनिसेफ के अनुसार, लगभग 65 प्रतिशत ग्रामीण भारतीय खुले में शौच करते हैं - कभी-कभी कब्रिस्तान जाने वाली सड़क पर, जिससे सांप्रदायिक तनाव और हिंसा का खतरा बना रहता है। लगभग 6 करोड़ भारतीय, जिनमें से अधिकांश ग्रामीण क्षेत्रों में रहते हैं, शौचालयों से वंचित हैं, और यह समस्या तेजी से केवल भारत तक ही सीमित नहीं रह गई है। उदाहरण के लिए, बांग्लादेश ने हाल ही में घोषणा की है कि उसने खुले में शौच को लगभग समाप्त कर दिया है। हर सुबह और सूर्यास्त के बाद, भारत ऊपर से देखने पर एक विशाल खुले शौचालय जैसा दिखता होगा - रेलवे ट्रैक के किनारे, झाड़ियों के पीछे, सड़कों के किनारे, कब्रिस्तानों के पास और जहाँ भी थोड़ी बहुत खुली जगह होती है, वहाँ नंगे नितंब दिखाई देते हैं।
2011 की पिछली राष्ट्रीय जनगणना पर नज़र डालें तो उत्तरी राज्यों, विशेषकर बिहार और उत्तर प्रदेश में स्थिति और भी चिंताजनक है। 2 करोड़ से अधिक आबादी वाले उत्तर प्रदेश में, चौंका देने वाले 77 प्रतिशत ग्रामीण घरों में शौचालय नहीं था। बिहार में, 81.4 प्रतिशत ग्रामीण घरों में बाथरूम नहीं थे। भारत के ग्रामीण क्षेत्रों का राष्ट्रीय औसत दर्शाता है

कि 67 प्रतिशत से अधिक लोगों के पास शौचालय की सुविधा नहीं थी, जबकि शहरी भारत में यह आंकड़ा 12.6 प्रतिशत है। बिहार और उत्तर प्रदेश में मोबाइल फोन रखने वाले लोगों की संख्या काफी अधिक है।
नई दिल्ली सरकार ने स्वच्छ भारत अभियान शुरू किया है और प्रधानमंत्री समेत कई नेताओं को प्रतीकात्मक रूप से फुटपाथ के एक छोटे से हिस्से की सफाई करते देखा गया है। फिल्म सितारों, सामाजिक कार्यकर्ताओं और अन्य मशहूर हस्तियों ने भी सोशल मीडिया पर या विशेष रूप से आयोजित फोटो सेशन के दौरान फुटपाथ के छोटे-छोटे हिस्सों की सफाई की है। लेकिन हृदयचक में, घातक बीमारियों से निरंतर लड़ाई में स्वच्छता जीवन और मृत्यु का सवाल है।
शौच या पेशाब करने के लिए बाहर जाना भी जानलेवा हो सकता है। शौच के दौरान हमला, छेड़छाड़ या बलात्कार का शिकार होने वाली महिलाओं की संख्या हजारों में है, लेकिन ऐसी घटनाओं की रिपोर्ट बहुत कम दर्ज की जाती है। क्षेत्रीय भाषा के मीडिया में लगभग हर दूसरे दिन ऐसी खबरें आती रहती हैं। भारत के महानगरों में अंग्रेजी प्रेस तो इस तरह की खबरों को तवज्जो देने लायक भी नहीं समझता।
2016-17 के केंद्रीय बजट में, मोदी सरकार ने स्वच्छ भारत मिशन के लिए 11,300 करोड़ रुपये आवंटित किए हैं, जिसका लक्ष्य 2019 तक भारत को खुले में शौच मुक्त बनाना है। सरकार ने ग्रामीण क्षेत्रों के लिए मिशन के बजट में 150 प्रतिशत की वृद्धि की है – 2015-16 में 3,600 करोड़ रुपये से बढ़ाकर 2016-17 में 9,000 करोड़ रुपये कर दिया गया है। ग्रामीण क्षेत्रों में, लक्ष्य प्रति वर्ष 1.25 करोड़ शौचालयों का निर्माण करना और 2019 तक कुल 12 करोड़ शौचालयों का निर्माण करना है। 2016 की शुरुआत तक, कम से कम कागजों पर, केवल 95.23 लाख शौचालय ही पूरे हुए थे। यह सोचने वाली बात है कि इनमें से कितने उपयोग में हैं – या वास्तव में कितने मौजूद हैं। भारत के सामाजिक कल्याण कार्यक्रम कागजों पर तो बहुत प्रभावशाली लगते हैं, लेकिन जमीनी हकीकत बिल्कुल अलग है।

चमकलो पासवान एक मुखर और गुस्सैल बुज़ुर्ग महिला हैं, जिनका चेहरा झुर्रियों से भरा है और आंखें धंसी हुई हैं। हम महादलित बस्ती में उनके घर

के सामने खड़े थे। उन्होंने पूछा, ‘सरकार कहां है? क्या ऐसी कोई संस्था है भी?’ जीवन भर उन्हें सरकार से कोई सहायता नहीं मिली। उन्होंने कहा, ‘हमारे बच्चों को छात्रवृत्ति और यूनिफॉर्म नहीं मिलती, उनके लिए बने बोर्डिंग स्कूल होटल बन गए हैं। हमारे बच्चों को कुछ नहीं मिलता।’
ऐसा नहीं है कि सरकार का उनके जीवन पर कोई असर नहीं पड़ता। सरकारी आंगनवाड़ी से, जहाँ उनका पोता पढ़ता है, परिवार को महीने में एक बार 1.5 किलोग्राम चावल और 500 ग्राम दाल मिलनी चाहिए। यह सरकार द्वारा परिवार को अपने बच्चों को आंगनवाड़ी भेजने के लिए दी जाने वाली प्रोत्साहन राशि है। लेकिन उन्हें केवल 1 किलोग्राम चावल और 250 ग्राम दाल मिलती है। सार्वजनिक वितरण प्रणाली के तहत, उन्हें हर महीने 25 किलोग्राम रियायती चावल भी मिलना चाहिए; लेकिन केवल 18 किलोग्राम ही उन तक पहुँचता है। वे पूछती हैं, 'हमें पता है कि हमें क्या मिलना चाहिए, लेकिन हम किससे शिकायत करें?'
सितंबर 2014 में, चम्कालो की बहू को प्रसव के लिए पास के एक कस्बे के सरकारी अस्पताल में भर्ती कराया गया। प्रसव के बाद उन्हें राज्य सरकार से 1,480 रुपये की सहायता राशि मिलनी थी। चम्कालो कहती हैं, 'हमें बताया गया था कि पैसा हमारे खाते में आ जाएगा। हम अभी भी इंतजार कर रहे हैं।'
गांव के अधिकांश लोग इस बात से अवगत हैं कि उन्हें क्या-क्या अधिकार प्राप्त हैं, लेकिन उन्हें किसी ऐसे संस्थान के बारे में जानकारी नहीं है जिस पर वे भरोसा कर सकें और शिकायत कर सकें।
2015 में, जब नई केंद्र सरकार ने भूमि अधिग्रहण विधेयक में संशोधन किया और कई मामलों में स्थानीय लोगों की सहमति और सामाजिक प्रभाव आकलन अध्ययन की आवश्यकता को समाप्त कर दिया, तो झारखंड में आदिवासियों के एक समूह ने एक दिन विधेयक की प्रतियों पर सार्वजनिक रूप से शौच किया। उन्होंने कहा कि महिलाएं भी इस विरोध में शामिल होना चाहती थीं। प्रदर्शनकारियों में से एक ने स्थानीय मीडिया को बताया, 'यह हताशा का एक कदम था।' भारत के ग्रामीण क्षेत्रों में ऐसे विरोध प्रदर्शन लगभग आम बात हैं, लेकिन इनमें से अधिकांश राष्ट्रीय समाचारों में प्रकाशित नहीं होते, जब तक कि कोई ऐसी सनसनीखेज घटना न हो जो इसे 'खबर लायक' बना दे: जैसे महिलाओं का नग्न होना या पुरुषों का एक साथ शौच करना।

चाहे वह सरकारी नौकरियों में आरक्षण की मांग को लेकर आंदोलन हो या किसी खनन परियोजना को रद्द करना हो, इन सबके मूल में भारत को चलाने वाले विशाल, जर्जर और गहरे भ्रष्टाचार से ग्रस्त शासन तंत्र के सामने आम भारतीय की बढ़ती हुई बेबसी है।
हृदयचक कई लोगों से ज़्यादा भाग्यशाली प्रतीत होती हैं। आख़िरकार, पासवान को तो अपने हिस्से का आधा राशन मिल रहा है। आस-पास के गाँवों और ज़िलों में सब्सिडी वाले खाद्य पदार्थ अक्सर अनुपलब्ध रहते हैं और भुखमरी से मौतें होने की खबरें आई हैं। 2010 में, जब गया ज़िले में भुखमरी से कुछ मौतें दर्ज की गईं, तो अनौपचारिक अनुमानों के अनुसार, अकेले बिहार में ही उस वर्ष लगभग सौ महादलितों की भुखमरी से मृत्यु हो गई थी। ये मौतें अभी भी जारी हैं।
ऐसा नहीं है कि ग्रामीण गरीब, और विशेष रूप से दलित, भारतीय राज्य परियोजना का हिस्सा कभी नहीं रहे। स्वतंत्रता के बाद के शुरुआती वर्षों में, दलित वर्गों को भूमि का स्वामित्व दिलाने के लिए ठोस प्रयास किए गए थे, और यह एक क्रांतिकारी बदलाव ला सकता था। भूमि स्वामित्व ग्रामीण गरीबों, विशेषकर दलितों द्वारा सामना की जाने वाली कई समस्याओं का समाधान होता, जैसे कि अपनी फसल उगाना और अपने शौचालय होना। हालांकि उपलब्ध आंकड़े, भले ही अधूरे हों, यह दर्शाते हैं कि बिहार जैसे राज्यों में दलितों और महादलितों के पास भूमि का स्वामित्व बहुत कम है, जबकि राज्य के पास हजारों एकड़ भूमि है जो इन्हीं लोगों को वितरित करने के लिए आरक्षित है।
महात्मा गांधी के आध्यात्मिक अनुयायी आचार्य विनोबा भावे ने 1951 में दक्षिण भारत के एक गाँव से भूदान आंदोलन शुरू किया था। उनका उद्देश्य भारत के धनी जमींदारों को स्वेच्छा से अपनी जमीनों का कुछ हिस्सा भूमिहीनों को देने के लिए राजी करना था। यह आंदोलन बेहद सफल रहा और इसके तहत लाखों एकड़ जमीन एकत्रित की गई, तथा कई राज्य सरकारों ने भूदान अधिनियम पारित किए। समय के साथ, आंदोलन की गति धीमी पड़ गई और भ्रष्टाचार ने इस पर अपना प्रभाव जमा लिया, जैसा कि स्वतंत्र भारत की शुरुआती पहलों के साथ हुआ था।
बिहार सरकार ने 2006 में डी. बंद्योपाध्याय की अध्यक्षता में बिहार भूमि सुधार आयोग का गठन किया, जिन्हें लगभग तीन दशक पहले पड़ोसी राज्य पश्चिम बंगाल में भूमि सुधार करने का श्रेय दिया जाता है। आयोग की अंतरिम रिपोर्ट ने मौजूदा स्थिति को स्पष्ट रूप से उजागर किया।

भूदान आंदोलन के लगभग पांच दशक बाद, आयोग ने पाया कि गरीबों को वितरित की जाने वाली भूमि की सटीक मात्रा का कोई विश्वसनीय रिकॉर्ड उपलब्ध नहीं था। इस मुद्दे को संभालने वाली राज्य सरकार की एक समिति के अनुसार, कुल 6,48,476 एकड़ भूमि उपलब्ध थी, जिसमें से 2,55,347 एकड़ भूमि 3,15,454 परिवारों को वितरित की जा चुकी थी।
सरकार ने कहा कि लगभग 2,78,320 एकड़ ज़मीन 'अनुचित भौगोलिक विशेषताओं' के कारण वितरण के लिए अनुपयुक्त पाई गई, लेकिन वह आयोग को यह नहीं बता सकी कि यह निर्णय किसने लिया कि इतनी सारी ज़मीन अनुपयोगी है। उन रहस्यमय भूखंडों को भी हटा दें तो भी समिति के पास वितरण के लिए 1,14,708 एकड़ ज़मीन दर्ज थी। आयोग ने कहा कि यह ज़मीन भी अभी तक गरीबों को नहीं दी गई थी। आयोग ने सिफारिश की कि समिति और राजस्व विभाग के कर्मचारियों को अभियान चलाने के लिए लगाया जाए ताकि ज़रूरतमंदों को ज़मीन दी जा सके। आयोग ने यह भी पाया कि भूमिहीनों के लिए आरक्षित 11,130 एकड़ से कुछ अधिक भूमि उनसठ संस्थानों में वितरित की गई थी। आयोग ने कहा, 'विश्लेषण से स्पष्ट है कि कोई व्यक्ति भूदान भूमि का उपयोग अपनी निजी जमींदारी के रूप में कर रहा है।' रिपोर्ट में आगे कहा गया है कि 15,000 एकड़ भूमि का 'औपचारिक रूप से वितरण नहीं किया गया था', और इसलिए किसी को नहीं पता था कि 'कोई व्यक्ति या व्यक्तियों का समूह इस विशाल क्षेत्र का उपयोग अपने निजी लाभ के लिए कर रहा है या नहीं।'
आयोग ने बताया कि ऐतिहासिक रूप से भूदान आंदोलन को लालची जमींदारों द्वारा किए गए कई घोटालों का सामना करना पड़ा था। बिहार में ऐसे सभी मामलों में, सारण जिले के एक विशाल जमींदार हथुआ राज का मामला प्रसिद्ध है। एक साधारण पत्र के माध्यम से, इस परिवार के मुखिया ने भूदान आंदोलन को 1,00,000 एकड़ भूमि दान करने की पेशकश की। इसका उद्देश्य गांधीवादी नेता के दबाव से बचना और आंदोलन के परिणामस्वरूप लागू हुए भूमि सीमा प्रतिबंधों से बचना था। सारण जिला अधिकारियों ने एक राजपत्र अधिसूचना के माध्यम से सूचित किया कि अप्रैल 1959 तक जिले में गरीबों के लिए 1,03,903 एकड़ भूमि उपलब्ध थी। आयोग ने कहा कि हथुआ राज ने 'एक बहुत बड़ा घोटाला' किया था। आयोग ने कहा, 'यह सवाल उठता है कि ऐसी अपुष्ट भूमि का क्या किया जाए।'

एक दशक पहले पेश की गई आयोग की व्यापक सिफारिशों से राज्य सरकार को कोई राहत नहीं मिली, क्योंकि शक्तिशाली जमींदार और कपटी धनी लोग उसके खिलाफ खड़े थे। यह जानकर किसी को आश्चर्य नहीं होगा कि रिपोर्ट को प्रभावी रूप से दरकिनार कर दिया गया है।
दिल्ली में, अनवर और मैंने उसके गाँव की महिलाओं को जिन समस्याओं का सामना करना पड़ता है, उन पर चर्चा की। लेकिन उसने तुरंत बताया कि उसके परिवार में महिलाएं विशेषाधिकार प्राप्त भूमि मालिक हैं: उसकी दादी के पास पारिवारिक खेत का एक हिस्सा था, और उसकी माँ और बहनों के पास भी था।
भारत के ग्रामीण इलाकों में और हर जगह गरीबों के लिए, ज़मीन सबसे सशक्त संपत्ति है जो उनके पास हो सकती है, और एक ऐसी संपत्ति जिससे महिलाओं को ऐतिहासिक रूप से वंचित रखा गया है। यह इस तथ्य के बावजूद है कि वे ग्रामीण अर्थव्यवस्था और कृषि में महत्वपूर्ण भूमिका निभाती हैं। शिक्षाविद और कार्यकर्ता लगातार इस बात पर ध्यान दे रहे हैं कि भूमि स्वामित्व का किसी व्यक्ति, विशेष रूप से महिलाओं और हाशिए पर रहने वाले समुदायों के समग्र कल्याण पर क्या प्रभाव पड़ सकता है। सरकार के अपने आंकड़ों के आधार पर, भूमि अधिकारों पर काम करने वाली एक अंतरराष्ट्रीय गैर-सरकारी संस्था, लैंडेसा ने 2015 में अनुमान लगाया था कि यद्यपि 85 प्रतिशत ग्रामीण महिलाएं कृषि में लगी हुई हैं, उनमें से केवल 13 प्रतिशत के पास ही ज़मीन है। बिहार में स्थिति कहीं अधिक खराब है, जहां केवल 7 प्रतिशत महिलाओं को ही भूमि अधिकार प्राप्त हैं।
अनवर ने कहा, 'हमारे गांव में भी कहानी कुछ अलग नहीं है। ज्यादातर महिलाओं के पास जमीन या किसी भी तरह की संपत्ति नहीं है। वे पुरुषों की दया पर निर्भर हैं।'
महादलित बस्ती के बीचोंबीच, अपने बच्चों से घिरे हुए, पैंतीस वर्षीय उदित राज बंसी नंगे बदन खड़े हैं, उनके दाहिने कंधे पर एक तौलिया पड़ा है। उनकी लंबाई पाँच फीट से कुछ इंच अधिक है और शरीर पर जरा भी चर्बी नहीं है। उनके भाई और वे गाँव के उन पहले महादलितों में से थे जिन्होंने 1987 में दसवीं कक्षा पास की थी। लगभग पाँच साल पहले, दोनों को उनके समुदाय के लिए आरक्षित कोटे के तहत संविदा शिक्षक के रूप में नौकरी की पेशकश की गई थी। बंसी आँखों में आँसू भरते हुए कहते हैं, 'हमने एक अधिकारी को प्रति व्यक्ति 2,500 रुपये रिश्वत के तौर पर भी दिए थे।' उन्हें 8,000 रुपये मासिक वेतन मिलना

था और वे एक सुखमय जीवन का सपना देख रहे थे। वे आगे कहते हैं, 'मैंने हर संभव व्यक्ति से शिकायत की है, लेकिन हमें नहीं पता कि हमें नौकरी कब मिलेगी।'
बंसी की शिक्षा ने उन्हें अपना हक जताने की हिम्मत दी है। करीब तीन साल पहले वे पटना गए और मुख्यमंत्री व अन्य वरिष्ठ अधिकारियों से कुछ पल मिले। उन्होंने शिकायत की कि उन्हें इंदिरा आवास योजना के तहत अभी तक घर नहीं मिले हैं। यह केंद्र सरकार की 1980 के दशक से चली आ रही योजना है, जिसका वार्षिक बजट लगभग 13,000 करोड़ रुपये है और जिसका उद्देश्य बेघरों को आर्थिक सहायता प्रदान करना है। बंसी कहते हैं, 'उन्होंने हमें अगले आवंटन में घर देने का वादा किया है।' लेकिन यह मौका अभी आना बाकी है।
बंसी के कुछ पड़ोसी थोड़े ज़्यादा भाग्यशाली रहे हैं। कुछ साल पहले, उन्हें अपने घर बनाने के लिए पहली किस्त के तौर पर 20,000 रुपये मिले और उन्होंने निर्माण शुरू कर दिया। अगली किस्त कभी नहीं आई और उनके पास पैसे खत्म हो गए। घर कई महीनों तक बिना छत के रहे। फिर उन्होंने लकड़ी और स्थानीय रूप से उपलब्ध चावल के भूसे का इस्तेमाल करके छत बनाई और उसमें रहने लगे। वे सरकार का अनिश्चित काल तक इंतज़ार नहीं कर सकते थे। इसके अलावा, कौन जानता है कि सरकारी रिकॉर्ड में आवास योजना की पूरी धनराशि का वितरण दर्ज है या किसने सारी रकम हड़प ली?
बंसी के घर की तुलना में उनके अधूरे बने घर भी कहीं अधिक आरामदायक हैं। बंसी और उसका भाई, उनकी पत्नियाँ और कई बच्चे, सभी एक कमरे के घर में ठसाठस भरे रहते हैं। इस इलाके में, जहाँ नालों का पानी जमा रहता है और भविष्यहीन बच्चे दिखाई देते हैं, अंबेडकर के ये शब्द कितने सटीक प्रतीत होते हैं: भारत में लोकतंत्र केवल 'उस भारतीय भूमि पर एक ऊपरी परत है, जो मूल रूप से अलोकतांत्रिक है'।
बंसी फूट-फूटकर रोते हुए कहता है, “हम चूहों की तरह जी रहे हैं।” वह अपने बच्चों की खातिर भी शांत रहने का दिखावा नहीं कर पाता। मेरा हाथ पकड़कर वह रोते हुए कहता है, “कृपया हमारी मदद कीजिए।”
महादलित बस्ती के अंत में, जमुना यादव खेतों के सामने एक मिट्टी के घर में रहते हैं। वे और उनकी पत्नी, जो अन्य पिछड़ा वर्ग या बहुजन श्रेणी से संबंधित हैं, मिट्टी की दीवारों और घास-फूस की छत वाले दो कमरों के छोटे से घर में रहते हैं। बाहरी दीवारें गोबर के उपलों से ढकी हुई हैं। दंपति अपनी

गायों की देखभाल करते हैं और गांव में दूध बेचते हैं। उनके पास शौचालय नहीं है, इसलिए वे हर सुबह पानी की एक छोटी बोतल लेकर खुले खेतों में जाते हैं।
यादव बताते हैं, ‘कुछ साल पहले कोई आया और उसने हमें बताया कि सरकार शौचालय बनवाने में हमारी मदद करेगी। उन्होंने सीमेंट के कुछ पैकेट और कुछ सौ रुपये दिए। हमने जहाँ भी उन्होंने कहा, वहाँ अंगूठे का निशान लगा दिया।’ यह शायद सरकार के संपूर्ण स्वच्छता अभियान का हिस्सा था, जिसके तहत मूल रूप से 2012 तक सभी को शौचालय उपलब्ध कराने की योजना थी।
तो आपने शौचालय क्यों नहीं बनवाया? ‘क्या यह मजाक है? क्या कुछ पैकेट सीमेंट से शौचालय बन सकता है?’ बूढ़ा आदमी हँस पड़ा।
यादव के लिए, दो साल पहले तक, सरकार एक दूर का सपना मात्र थी। फिर सरकार ने उन्हें वृद्धावस्था पेंशन के रूप में प्रति माह 100 रुपये देना शुरू किया। सरकार का कोई कर्मचारी उन्हें हर महीने 100 रुपये देता है और उनसे एक आधिकारिक दस्तावेज़ पर अंगूठे का निशान लगवाता है।
मैंने उससे पूछा, 'क्या आपको यकीन है कि पेंशन सिर्फ 100 रुपये ही है?' ‘मुझे नहीं पता। कम से कम मुझे कुछ तो मिल रहा है।’ यादव मुस्कुराते हैं। शौचालय की कमी और नाममात्र की वृद्धावस्था पेंशन में भारत के सामाजिक कल्याण कार्यक्रमों और संस्थागत भ्रष्टाचार की कहानी छिपी है, जो लोकतंत्र को खोखला कर रहा है। बिहार सरकार के समाज कल्याण विभाग के अनुसार, इंदिरा गांधी राष्ट्रीय वृद्धावस्था पेंशन योजना के तहत यादव को हर महीने 300 रुपये मिलने चाहिए। उन्हें तो अपनी पेंशन का दो-तिहाई हिस्सा भी नहीं मिल रहा है। नवंबर 2011 में विभाग के अनुमानों के अनुसार, अकेले बिहार में ही 30 लाख से अधिक लोग वृद्धावस्था पेंशन प्राप्त कर रहे हैं।
अगर यादव को एक सामान्य उदाहरण मान लें, तो विभाग के अधिकारियों और उनके राजनीतिक आकाओं द्वारा पेंशन के रूप में ली जा रही रकम लगभग 60 करोड़ रुपये प्रति माह होगी। और यह भारत के उनतीस राज्यों और सात केंद्र शासित प्रदेशों में से केवल एक राज्य की सामाजिक कल्याण योजना है।
भारत सरकार के पास गरीबों के कल्याण के लिए लगभग चालीस योजनाएँ हैं: उनकी आर्थिक स्थिति में सुधार, शौचालय, पेयजल, सड़कें, स्कूल और अस्पताल उपलब्ध कराना, रोजगार की गारंटी देना और अन्य सहायता प्रदान करना। सरकार अपने सकल

घरेलू उत्पाद (जीडीपी) का लगभग 1.7 प्रतिशत सामाजिक क्षेत्र पर खर्च करती है – स्वास्थ्य और शिक्षा क्षेत्रों को जीडीपी का 1 प्रतिशत मिलता है, जबकि ग्रामीण विकास को 0.7 प्रतिशत मिलता है। 2016-17 के बजट में यह राशि 2,53,356 करोड़ रुपये थी। सभी योजनाओं के नाम बड़े-बड़े हैं, अधिकतर अतीत के प्रसिद्ध भारतीय नेताओं के नाम पर रखे गए हैं, लेकिन इनमें से कोई भी भारतीय गरीबों के लिए बेहतर भविष्य की गारंटी नहीं देती।
भारत जैसी तेजी से बढ़ती अर्थव्यवस्था के बावजूद, कुपोषण, गरीबी उन्मूलन, निरक्षरता आदि में इतनी धीमी प्रगति दर्ज करना किसी अन्य अर्थव्यवस्था का लक्ष्य नहीं है। 2014 के वैश्विक भूख सूचकांक में भारत पचपनवें स्थान पर था, जो पड़ोसी देशों श्रीलंका और नेपाल से भी पीछे था और पिछले वर्ष की तुलना में इसमें मामूली सुधार ही हुआ था।
सामाजिक कल्याण योजनाओं में भ्रष्टाचार के रिसाव की सीमा का समय-समय पर अध्ययन किया गया है। 2009 में, भारत के योजना आयोग द्वारा सार्वजनिक वितरण प्रणाली (पीडीएस) के माध्यम से रियायती खाद्य पदार्थों के वितरण पर किए गए एक अध्ययन में पाया गया कि एक रुपये में से केवल 16 पैसे ही लक्षित गरीबों तक पहुँचे। शेष 84 पैसे वेतन भुगतान और भ्रष्टाचार, रिश्वत और देश की भ्रष्ट सरकार के कमीशन के रूप में खर्च हो गए।

हृदयचक से होकर एक संकरी कंक्रीट की सड़क गुजरती है, जो इसके एक छोर पर स्थित मुस्लिम कब्रिस्तान तक जाती है। यह सड़क महादलित बस्ती और एक गंदे तालाब के पास से होकर जाती है, जिस पर कई बेघर महादलितों ने कब्जा कर लिया है और जिसमें गांव का अधिकांश मल बहता है। कुछ मीटर नीचे एक लंबा पीपल का पेड़ खड़ा है, जिसके चारों ओर की जमीन लगभग पूरी तरह से मानव मल से ढकी हुई है। यह जगह बेहद दुर्गंधयुक्त है।
कब्रिस्तान की चारदीवारी के पास एक छोटा मंदिर बनाया गया है – यह इस बात का शुरुआती संकेत है कि सांप्रदायिक तनाव से ग्रस्त नया भारत हृदयचक तक अपनी पैठ बना रहा है। लंबी दाढ़ी, चौड़ी मुस्कान और हर समस्या का जादुई इलाज करने की क्षमता रखने वाले लंबे कद के मोहम्मद तैयब कहते हैं, 'हम वहां गए और

उनसे (मंदिर बनाने वाले हिंदुओं से) इस बारे में बात करने की कोशिश की कि भविष्य में यह हमारे समुदायों के बीच अनावश्यक तनाव पैदा कर सकता है।'
आप जानते हैं, कब्रिस्तान केवल मृतकों के विश्राम का स्थान नहीं है, बल्कि जादू और शक्ति की भूमि है। तैयब कुछ वर्ष पहले अपने बूढ़े माता-पिता की देखभाल करने के लिए गाँव लौटा था। किसी का ध्यान आकर्षित किए बिना, वह रात में चुपके से कब्रिस्तान में घुस गया, एक कोने में बैठ गया और एक छोटी सी आग जला ली। फिर उसने अरबी प्रार्थना का पाठ करना शुरू किया और बीच-बीच में आग में पवित्र धूप डालता रहा। तीन रातों में, तैयब ने सैकड़ों-हजारों बार प्रार्थना दोहराई, और अंततः उसने अपने उपचार के लिए विशेष शक्तियाँ प्राप्त कर लीं। कम से कम उसके मरीज़ और गाँव वाले यही मानते हैं।
तैय्यब अब गठिया के दर्द से पीड़ित मरीजों का इलाज करते हैं, प्रभावित हिस्सों पर एक विशेष छड़ी से मारते हैं। नेपाल जैसे दूर-दराज के इलाकों से भी लोग उनसे मिलने आते हैं। इलाज पूरा होने तक तैय्यब और उनका मरीज भूखे रहते हैं। वे इलाज के लिए कोई शुल्क नहीं लेते। तैय्यब नीले आकाश की ओर देखते हुए कहते हैं, 'यह अल्लाह का आशीर्वाद है,' वे उस समय कब्रिस्तान में हुई घटना का ब्योरा देने में हिचकिचाते हैं। एक ऐसे गाँव में जहाँ अभी भी आधुनिक अस्पताल का इंतज़ार है, तैय्यब का इलाज ही शायद कुछ लोगों के लिए एकमात्र सहारा हो। वे गाँव की कई कहानियाँ सुनाते हैं - एक जादुई अतीत से लेकर दयनीय वर्तमान तक की कड़ी - और गाँव की परेशानियों को हँसी के साथ भुला देते हैं।
कब्रिस्तान एक खुला, लहरदार मैदान है जिसमें ऊंचे पेड़ और हरी घास है, और यह एक सफेद दीवार से घिरा हुआ है। यह दीवार लगभग चार साल पहले राज्य सरकार की एक योजना के तहत बनाई गई थी, जब अनवर और अन्य ग्रामीणों ने सही मध्यस्थों की मदद से बिहार सरकार से परियोजना की मंजूरी प्राप्त की थी। निर्माण कार्य के दौरान, ग्रामीणों ने विरोध किया कि दीवार वादे के अनुसार 10 इंच मोटी नहीं, बल्कि केवल 5 इंच मोटी है। राज्य की राजधानी के कई चक्कर लगाने के बाद, वे योजना के प्रभारी राज्य मंत्री से शिकायत करने में सफल रहे, और अंततः आधी बनी दीवार को पूरी तरह से ध्वस्त कर दिया गया, लेकिन नींव को नहीं। हृदयचक के लोगों का मानना है कि कुछ वरिष्ठ अधिकारी इस घोटाले में शामिल थे, लेकिन उनके पास इसका कोई सबूत नहीं है। दीवार को निर्धारित 10 इंच चौड़ाई में फिर से बनाया गया, लेकिन संकीर्ण और उथली

नींव पर। निर्माण कार्य पूरा होने के बाद ठेकेदार और उसके मजदूर चले गए, और ठेकेदार को भुगतान किए जाने के बाद अधिकारियों का आना-जाना बंद हो गया। कुछ महीनों बाद, दीवार का एक हिस्सा ढह गया। मानसून और कुछ महीनों बाद, दूसरा हिस्सा भी गिर गया। भारत की जंग लगी सरकारी मशीनरी की तरह, दीवार भी धीरे-धीरे ईंट-दर-ईंट टूट रही है। दूर से टूटे हुए हिस्से दिखाई नहीं देते; लंबी घास और झुके हुए पेड़ उन्हें ढक लेते हैं। फिलहाल, कब्रिस्तान की सुरक्षा के लिए बड़े-बड़े ताले और एक हरा गेट लगा हुआ है। हृदयचक में, शायद पूरे भारत में, यहां तक कि मृत भी सुरक्षित नहीं हैं। वहीं, छह साल पहले हृदयचक तक जाने वाली सड़क 2016 में जब मैंने किताब पूरी की, तब खस्ता हालत में थी। घटिया निर्माण, उचित रखरखाव की कमी और सरकार की निष्क्रियता, ये सभी मिलकर गांव के बाहरी दुनिया से संपर्क के मुख्य मार्ग को खत्म करने की साजिश रच रहे हैं।
अब ग्रामीणों को सड़क की मरम्मत और दीवार के पुनर्निर्माण के लिए सरकार को मनाने के लिए सही मध्यस्थों की तलाश करनी होगी, ठीक वैसे ही जैसे वे अस्पताल और बिजली उपलब्ध कराने के लिए सही लोगों की खोज कर रहे हैं। अनवर और उनके साथी ग्रामीण नई दिल्ली और पटना में, स्थानीय बाजारों में और राजनीतिक नेताओं के बीच उन मध्यस्थों की तलाश करेंगे। उपयुक्त मध्यस्थ का मिलना हृदयचक और उसके निवासियों के लिए क्रांतिकारी साबित होगा। तब तक, वे
- करोड़ों अन्य भारतीयों की तरह - अपनी खोज जारी रखेंगे। ऐसे किसी व्यक्ति की तलाश में जो उन्हें सरकारी अस्पताल में बिस्तर दिला सके, पुलिस में शिकायत दर्ज कराने में मदद कर सके, बिजली या पीने का पानी उपलब्ध करा सके, या शौचालय बनवा सके।

ISTOCKPHOTO

खण्ड एक

बिचौलिए

कहीं न कहीं कोई बिचौलिए जरूर होगा जो...
मैं आपका काम कर सकता हूँ – जन्म प्रमाण पत्र प्राप्त करना।
सरकारी सब्सिडी का आयोजन करना, हेरफेर करना
अनुबंध या सरकार को सत्ता से हटाना।
यह खंड एक झलक प्रस्तुत करता है, उम्मीद है कि यह एक अंतर्दृष्टिपूर्ण झलक होगी।
भारत का सबसे फलता-फूलता उद्योग। देश के हर कोने में।
इस देश में एक बिचौलिए हैं। लगभग हर जगह।
अन्य बड़े व्यवसायी या प्रसिद्ध राजनेता या
सलाहकार महज एक मध्यस्थ है। प्रबंधक
आपकी इमारत या आपका वकील मध्यस्थ का काम कर सकते हैं। शायद आप खुद ही मध्यस्थ हों।

1

गली के उस पार मिस्टर फिक्स-इट

जिस घर में मैं था, उसके बाहर अफरा-तफरी मची हुई थी। खनन उद्योग के लिए अयस्क और उपकरण ले जाने वाले ट्रक दिन-रात सड़क पर चलते रहते थे। गुलाबी दीवारों वाले ड्राइंग रूम में, तेज हॉर्न की आवाजें अक्सर बातचीत में खलल डालती थीं। रेलवे लाइन का कुछ ही मीटर दूर होना भी स्थिति को और खराब कर रहा था। सड़क और रेलवे लाइन के मिलन स्थल पर बना सुरक्षा घेरा अक्सर बंद रहता था, जिससे हालात और बिगड़ जाते थे।
इन सबके बीच, अभय नारायण राय लगातार बज रहे दो मोबाइल फोनों का जवाब देते रहे, धीमी आवाज़ में अपनी बेबसी बयां करने वाले लोगों की बातें सुनते रहे और सरकारी दफ्तरों के अधिकारियों को फोन करते रहे, और कभी-कभी निजी क्षेत्र के अधिकारियों को भी। सुबह करीब 7 बजे से लेकर दोपहर करीब 12 बजे तक घर से निकलने तक, यही उनकी दिनचर्या थी।
फरवरी की एक सुबह, दिन भर के सभी आगंतुकों को विदा करने के बाद, राय ने कहा, “मुख्य रूप से तीन तरह की समस्याएं हैं – स्वास्थ्य, राजस्व और सरकारी योजनाएं।” मोहल्ले में सभी जानते थे कि राय अपने बेटे की शादी में व्यस्त हैं; अगले दिन रिसेप्शन की योजना थी। फिर भी, चार लोग अपनी शिकायतें लेकर आए थे। राय ने सहज भाव से कहा, “उनकी शिकायतें बहुत जरूरी थीं – एक व्यक्ति की मां गंभीर रूप से बीमार थीं और उन्हें सरकारी अस्पताल में भर्ती कराना पड़ा, इसलिए मैंने वहां के डॉक्टर को फोन किया। दूसरे व्यक्ति का बेटा एक निजी अस्पताल में है, जिसका बिल 30,000 रुपये है। वह कुछ छूट मांग रहा था, इसलिए मैंने अस्पताल के मालिक को फोन किया। तीसरा व्यक्ति अपनी खेती की जमीन छोटे-छोटे टुकड़ों में बेचना चाहता है, लेकिन यह कानून के खिलाफ है, इसलिए वह राजस्व अधिकारियों को दूर रखने में मेरी मदद चाहता है।” उन्होंने रसोई से चाय के लिए आवाज लगाई।
उनके परिवार के अधिकांश सदस्य बेटे के विवाह की सफलता के लिए प्रार्थना करने स्थानीय मंदिर गए हुए थे। राय ने बजते हुए फोन को उठाया और अपने बेटे से पुजारी को अपना नाम बताने को कहा, शायद इसलिए ताकि कोई देरी न हो।
स्थानीय देवताओं तक भी उनकी विशेष पहुँच थी।

‘इन लोगों के पास दो विकल्प हैं। पहला यह कि वे मेरे पास आएं और मैं संबंधित अधिकारी को फोन करके यह सुनिश्चित कर दूंगा कि उनका काम जल्दी हो जाए। या फिर, वे कई दिनों तक उन दफ्तरों के चक्कर लगा सकते हैं, रिश्वत दे सकते हैं और समय बर्बाद कर सकते हैं।’ राय थोड़ी देर रुके और फिर बोले, ‘दैनिक मजदूरी करने वाले मजदूर के लिए, एक दिन की कमाई का नुकसान भी उसके बच्चों को भूखा सुला सकता है।’
मैंने पूछा, 'क्या आप यह कह रहे हैं कि उन्हें रिश्वत देने की जरूरत नहीं है क्योंकि आप इसमें शामिल हैं?'
राय ने खेल के नियमों को समझाते हुए कहा, 'जब मैं शामिल होता हूं, तो अधिकारी आमतौर पर रिश्वत नहीं मांगते। हालांकि, अगर लाभार्थी स्वेच्छा से अधिकारियों को कुछ पैसे देने का फैसला करता है, तो वे इसे अस्वीकार नहीं करेंगे।'
वह छत्तीसगढ़ राज्य के एक प्रमुख शहर बिलासपुर के बाहरी इलाके में स्थित एक घनी आबादी वाले शहरी गांव में रहते हैं। बिलासपुर में खनन उद्योगपतियों और सरकारी कंपनियों की नई पीढ़ी कोयला, लौह अयस्क, चूना पत्थर और अन्य प्राकृतिक संसाधनों का अंधाधुंध खनन कर रही है। कांग्रेस पार्टी की स्थानीय शाखा के प्रवक्ता राय, देश के सबसे बड़े ब्लॉकों में से एक, भील्हा के कुछ हज़ार निवासियों के लिए एक महत्वपूर्ण संपर्क सूत्र और कभी-कभी संकटमोचक भी हैं। भील्हा में लगभग दस लाख लोग रहते हैं, जहां सस्ते अपार्टमेंट सरकारी जमीन पर अतिक्रमण करने वाली छोटी-छोटी झुग्गियों के साथ सटे हुए हैं। यह एक विशिष्ट भारतीय शहर का एक विशिष्ट उपनगर है। और राय इस शहर के जीवन-रेखाओं में से एक हैं।
भील्हा के गरीब लोग अपनी शिकायतें दर्ज कराने या अपना हक मांगने के लिए सरकारी दफ्तरों या पुलिस थानों में नहीं जाते। वे राय के पास जाते हैं। राय ने मुझे बताया कि लोग अपने गंभीर रूप से बीमार मरीजों को अस्पताल ले जाने से पहले भी उनसे मिलने जाते हैं। इस उपनगर के अधिकांश निवासियों के लिए, वह सरकार और कभी-कभी निजी क्षेत्र के बीच मध्यस्थ का काम करते हैं। उन्होंने कहा, 'सरकारी दफ्तर हमारे गरीबों को डराते हैं। आज भी आम लोगों की बात सुनने वाला कोई नहीं है। गरीबों को या तो पैसे की जरूरत है या मेरे जैसे किसी मददगार की।'

उन्होंने दो भारतीय राज्यों - राजस्थान और आंध्र प्रदेश - में दो चरणों में शोधकर्ताओं की एक टीम का नेतृत्व किया: राजस्थान में 1997-98 में और आंध्र प्रदेश में सात साल बाद। उन्होंने मुझसे कहा, 'ये परिणाम दर्शाते हैं कि लोकतंत्र में अत्यधिक विश्वास होने के बावजूद, अधिकांश नागरिकों को सार्वजनिक सेवा प्रदाताओं से जुड़ने में कठिनाई होती है।'
उन्होंने 2011 में प्रकाशित अपने लेख में लिखा, ‘लोगों के पिछले अनुभव ऐसे हैं कि दोनों राज्यों में अधिकांश लोग – राजस्थान में आंध्र प्रदेश की तुलना में कुछ अधिक अनुपात में – यह मानते हैं कि उनकी आवाज़ें सार्वजनिक अधिकारियों द्वारा अनसुनी कर दी जाएंगी, जिनमें सेवा वितरण के लिए जिम्मेदार अधिकारी भी शामिल हैं। परिणामस्वरूप, अपेक्षाकृत कम लोग ही सीधे अपनी मांगें व्यक्त करने का प्रयास करते हैं।’
कृष्णा ने एक समूह की पहचान की है जिसे वे 'नया नेता' कहते हैं, यानी नए नेता, जो आमतौर पर युवा होते हैं, अखबार पढ़ने लायक शिक्षित होते हैं और सरकारी नौकरशाही और अन्य स्थानीय संस्थानों से निपटने का अनुभव रखते हैं। कृष्णा ने अपने लेख में लिखा, 'नया नेता ग्रामीणों को सामाजिक कल्याण के विभिन्न पहलुओं पर प्रभाव रखने वाले प्रभावशाली लोगों तक पहुँचने में मदद करते हैं, जिनमें पुलिसकर्मी, राजनीतिक दल के आयोजक, डॉक्टर, स्वास्थ्य और शिक्षा अधिकारी, बैंकर और बीमा एजेंट शामिल हैं।' बिलासपुर के बाहर भीड़भाड़ वाली सड़क के किनारे स्थित अपने घर से राय ठीक यही काम करते हैं। कृष्णा ने एक मुलाकात के दौरान मुझसे कहा कि नए नेताओं की एक और महत्वपूर्ण भूमिका है: मतदाताओं और प्रमुख राष्ट्रीय दलों के बीच एक अहम कड़ी बनना। उन्होंने बताया, ‘बढ़ती शिक्षा के साथ-साथ पिछले पच्चीस वर्षों में चुनावी प्रतिस्पर्धा में आए तीव्र बदलाव ने नए ग्राम नेताओं के उदय में अहम योगदान दिया है। इस क्षेत्र की दो प्रमुख राजनीतिक पार्टियां, कांग्रेस और भारतीय जनता पार्टी (भाजपा), जमीनी स्तर पर कोई स्थायी संगठन विकसित नहीं कर पाई हैं और पार्टी कार्यालय अधिकतर राज्य और जिला मुख्यालयों में स्थित हैं। पार्टियां ग्रामीणों के बीच समर्थन जुटाने के लिए उपयुक्त स्थानीय मध्यस्थों पर निर्भर करती हैं। नए नेता (अन्य स्थानीय मध्यस्थों के साथ) इस संगठनात्मक शून्य को भरने के लिए आगे आए हैं।’

देश भर में इन नए नेताओं के काम करने का तरीका अलग-अलग है, और वे हमेशा संस्थागत शून्यता के दायरे में काम नहीं करते। उदाहरण के लिए, केरल में राजनीतिक दलों के जमीनी स्तर तक मजबूत नेटवर्क हैं, और अधिकांश लोग शिक्षित और मुखर हैं। फिर भी, इन नागरिकों को भी सरकार और उनके बीच मध्यस्थ की भूमिका निभाने के लिए स्थानीय राजनीतिक नेताओं की आवश्यकता होती है। केरल में स्थानीय राजनीतिक नेताओं के घरों के बाहर हर सुबह दर्जनों लोग अपनी बारी का इंतजार करते हैं। केरल जैसे उच्च साक्षरता वाले राज्य में भी आम लोग मध्यस्थों की तलाश क्यों करते हैं, इसके दो मुख्य कारण हैं। पहला, सरकारी संसाधन सीमित हैं और इसलिए मांग आपूर्ति से कहीं अधिक है, जैसे कि सरकारी अस्पतालों में। दूसरा, और महत्वपूर्ण बात यह है कि पुलिस जैसे कई सरकारी संस्थान क्रूर और भ्रष्ट हैं। स्थानीय मध्यस्थ किसी को कतार में आगे निकलने में मदद कर सकता है या सरकारी संस्थान द्वारा किए जाने वाले दुर्व्यवहार को कम कर सकता है।
दक्षिण दिल्ली में कॉफी पर मेरी मुलाकात कृष्णा से हुई, तो उन्होंने अपने तर्क को विस्तार से समझाया। उन्होंने बताया कि भारत में समस्या यह है कि अमेरिका और अन्य विकसित अर्थव्यवस्थाओं के विपरीत, यहाँ राज्य तंत्र ऊपर से नीचे की ओर बना हुआ है। इसका परिणाम यह है कि भारत में सरकार केवल जिला स्तर तक ही सक्रिय और कार्यरत है; ज़्यादा से ज़्यादा, एक पायदान नीचे। उससे नीचे, जनता एक अंधकारमय वातावरण में रहती है। कृष्णा ने आगे कहा कि केरल जैसे विकसित राज्यों को छोड़कर, राजनीतिक दल भी इसी खामी से जूझ रहे हैं।
भारत के नियंत्रक एवं महालेखा परीक्षक (सीएजी), शशि कांत शर्मा, जो भारत के सर्वोच्च सिविल सेवकों में से एक हैं, ने अभय नारायण राय जैसे स्थानीय नेताओं के महत्व को समझाने के लिए मुझसे कई बार मुलाकात की। शर्मा ने बिहार में उपमंडल मजिस्ट्रेट, जिला मजिस्ट्रेट और कई विभागों के प्रमुख के रूप में स्थानीय स्तर पर कई वर्ष बिताए हैं, जहां नया नेता विशेष रूप से प्रभावशाली हैं। उन्होंने मुझे बताया कि नए मध्यस्थों को आसानी से पहचाना जा सकता है। उन्होंने कहा, 'वे साइकिल पर आते हैं, सफेद कुर्ता-पायजामा पहनते हैं और अक्सर स्कूल छोड़ चुके होते हैं।'
‘वे गरीबों को कल्याणकारी योजनाओं जैसी सुविधाएं मुहैया कराते हैं और इस तरह उन पर उनका काफी नियंत्रण होता है। वे राजनीतिक दलों के लिए वोट

जुटाते हैं, राजनीतिक रैलियों में भीड़ इकट्ठा करते हैं और जमीनी स्तर पर राजनीतिक व्यवस्था को धन से संचालित करते हैं। उनकी नजर भविष्य में राजनीति में आने की संभावना पर रहती है।’ लंबे समय में, इनमें से कई मध्यस्थ मुख्यधारा की राजनीति में प्रवेश करते हैं और स्थानीय स्तर पर चुनाव लड़ते हैं। ‘जब मैंने अपना करियर शुरू किया था, तब भी ऐसे मध्यस्थ हुआ करते थे। पूर्णकालिक राजनेता भी मध्यस्थ के रूप में काम करते थे। कई अन्य स्वतंत्रता सेनानी या उत्साही लोग थे जो जनता के लिए कुछ अच्छा करना चाहते थे। उनमें से कुछ इस प्रक्रिया में पैसा भी कमाते थे। इसके विपरीत, आज ज्यादातर मामलों में मकसद पैसा होता है, कल्याणकारी योजनाएं गौण होती हैं और राजनीतिक करियर एक निश्चित भविष्य का विकल्प होता है,’ शर्मा ने समझाया। ‘ये मध्यस्थ उपयोगी तो हैं, लेकिन बेईमान जरूर हैं। अनजाने में ही वे गरीबों और राजनीतिक प्रक्रिया दोनों की मदद करते हैं।’
बिहार के कुछ हिस्सों में, मेरे लिए उभरते हुए नए बिचौलियों के जाल को पहचानना आसान था। इनमें से कई नेता बन चुके थे और ग्राम परिषदों के निर्वाचित सदस्य या मुखिया बन गए थे। स्थानीय लोगों ने उन्हें कई उपनाम दिए थे - बोलेरो मुखिया, इनोवा सरपंच - ये नाम उन एसयूवी गाड़ियों के थे जो उन्होंने पदभार संभालने के बाद खरीदी थीं। उनकी दौलत का राज किसी से छिपा नहीं है। स्थानीय निकायों के मुखिया होने के नाते, जनता को बड़ी मात्रा में नकद और ठेके वितरित करने में उनकी महत्वपूर्ण भूमिका होती है।
ग्राम स्तर पर सत्ता के विकेंद्रीकरण के भारतीय प्रयासों में मुखिया और सरपंच महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं: यह महात्मा गांधी के ग्राम स्वशासन के दृष्टिकोण का साकार रूप है। सत्ता के विकेंद्रीकरण की सिफारिश करने वाली कई समितियों और इसे लागू करने वाली सरकारों के अनुसार, पंचायती राज व्यवस्था जमीनी स्तर पर व्याप्त भ्रष्टाचार की भयावह स्थिति को दूर करने में सहायक सिद्ध हुई।
पंचायती राज तीन स्तरों पर संचालित होता है: ग्राम, ब्लॉक और जिला। लेकिन देश भर की कहानियाँ बताती हैं कि भारत के विकेंद्रीकरण के प्रयास उतने सफल नहीं हो सकते जितना इसके समर्थक हमें विश्वास दिलाना चाहते हैं। ग्राम परिषदों के स्थानीय सदस्य और मुखिया ज्यादातर मौजूदा सरकारी तंत्र में समाहित हो चुके हैं, इसलिए उनके पास इसका विरोध करने या इसमें सुधार करने का कोई प्रोत्साहन नहीं है। बेशक, यहाँ भी कई अपवाद हैं।

एक सर्दी की दोपहर, एक स्थानीय नेता और ग्राम परिषद के सदस्य, जो अपना सारा समय अपने लोगों के लिए योजनाओं को लागू करवाने में बिताते हैं, ने मुझे बताया कि उनकी भूमिका अपरिहार्य है। ‘जिला प्रशासन को ग्रामीण रोजगार गारंटी योजना के तहत एक निश्चित राशि मिलती है, और अधिकारी तय करते हैं कि किस गाँव को क्या मिलेगा। अगर मैं उन्हें अच्छे कमीशन का आश्वासन दे सकूँ, तो मैं वह पैसा अपने गाँव में भेज सकता हूँ। हमारे लोगों को कुछ दिनों का काम मिलेगा, कुछ पैसे कमाएँगे, और मुझे भी लाभ होगा।’ उन्होंने अपना नाम नहीं बताना चाहा। उन्होंने आगे कहा, ‘जब तक लोग सरकार, अधिकारियों और पुलिस से डरते रहेंगे, तब तक हम महत्वपूर्ण बने रहेंगे।’
मैं फरवरी 2015 में छत्तीसगढ़ की यात्रा कर रहा था। उस समय राज्य में स्थानीय निकाय चुनाव हो रहे थे। और यह स्पष्ट था कि ये चुनाव, भारतीय संसद और राज्य विधानसभाओं के चुनावों की तरह, खर्चीले बन गए थे। उम्मीदवार लोगों पर पैसे लुटा रहे थे। नशे में धुत भीड़ उनका उत्साह बढ़ा रही थी, रंग-बिरंगे पोस्टर और अनगिनत वाहन उनके नाम की घोषणा कर रहे थे।
मैंने जिन भी राजनीतिक नेताओं और उम्मीदवारों से मुलाकात की, उन सभी ने कहा कि वे चुनाव पर लाखों रुपये खर्च कर रहे हैं। मैंने उनमें से कई से पूछा, किसलिए?
एक उम्मीदवार ने जवाब दिया, 'सर, आप ऐसे सवाल नहीं पूछते।'
राय ने मुझे बताया कि उनके इलाके में सरपंच पद के लिए चुनाव लड़ रहे एक स्थानीय उम्मीदवार ने 35 लाख रुपये खर्च कर दिए। उन्होंने ये पैसा कहाँ से जुटाया? राय ने जवाब दिया, 'वह एक स्थानीय ट्रांसपोर्टर हैं और उन्होंने अपना पैसा खर्च किया है। पदभार संभालने के बाद वह इसे वसूल लेंगे।'
उन्होंने समझाया कि एक बार जब ये स्थानीय नेता निर्वाचित प्रतिनिधि बन जाते हैं और सत्ता हासिल कर लेते हैं, तो वे अपने निवेश की भरपाई करने और कुछ मुनाफा कमाने के तरीके खोजने लगते हैं, और इसका एकमात्र तरीका सरकारी ठेकेदारों से कमीशन वसूलना या कल्याणकारी कार्यक्रमों के लिए उनके क्षेत्रों को आवंटित सरकारी धन में से हिस्सा लेना होता है। ‘चुनाव हारने वाले भी अपने हिस्से की तलाश में रहते हैं। अगर उन्हें भुगतान नहीं किया जाता है, तो वे निर्वाचित प्रतिनिधियों द्वारा किए जा रहे किसी भी काम में बाधा डालते हैं।’

राय ने कहा, 'स्थानीय निकाय अब एक विशाल उद्योग बन गए हैं। हमारे इलाके में कई लोग अब पेशेवर राजनीतिज्ञ बन गए हैं।'
बिहार में एक पंचायत प्रमुख ने मुझे बताया कि संसद सदस्यों या राज्य विधायकों से उनकी मर्जी से खर्च करने के लिए उपलब्ध धन को कमीशन के बदले आवंटित करवाया जा सकता है। 'सब कुछ तय है, महोदय। आपको बस उन्हें उनका कमीशन देना है।'
नए साक्ष्य पंचायती राज व्यवस्था की प्रभावशीलता पर कई सवाल खड़े करते हैं। क्या सत्ता के विकेंद्रीकरण से शासन की दक्षता में सुधार हुआ है और जनता का कल्याण हुआ है? या इसने भ्रष्ट राजनीतिक-नौकरशाही तंत्र में कुछ नई परतें जोड़ दी हैं? उपलब्ध साक्ष्य बाद वाले की ओर इशारा करते हैं। भारत जैसे विशाल देश के लिए विकेंद्रीकरण अत्यंत महत्वपूर्ण है; लेकिन एक गहरे भ्रष्ट तंत्र में, ऐसा लगता है कि इसने नौकरशाहों और स्थानीय स्तर के बिचौलियों को और अधिक धन कमाने का एक नया अवसर ही प्रदान किया है।
राय ने कहा कि उनके क्षेत्र में गरीबों का दैनिक जीवन दयनीय बना हुआ है। केवल लगभग 50 प्रतिशत परिवारों के पास शौचालय हैं और शौच के लिए इस्तेमाल होने वाली खुली जगह तेजी से कम होती जा रही है। कई गरीब सरकारी जमीनों पर अतिक्रमण कर रहे हैं, जो पहले अन्य गरीबों के लिए खुले शौचालय के रूप में इस्तेमाल होती थीं, ताकि वे अपने लिए घर बना सकें।
राय ने अफसोस जताते हुए कहा, ‘हमारे पास प्राथमिक स्वास्थ्य केंद्र नहीं है, सिर्फ एक हाई स्कूल है, और सड़कें व अन्य सुविधाएं भी पर्याप्त नहीं हैं।’ हृदयचक के विपरीत, उनका इलाका बिलासपुर के बाहरी इलाके में है, जो एक समृद्ध शहर है जहां छत्तीसगढ़ का उच्च न्यायालय और दक्षिण पूर्वी कोयला क्षेत्र लिमिटेड (एसईसीएल) का मुख्यालय और भारतीय रेलवे का क्षेत्रीय मुख्यालय जैसी कई अन्य संस्थाएं स्थित हैं।
तो जमीनी स्तर पर इन बिचौलियों की वजह से व्यवस्था को कितना नुकसान होता है? कई अध्ययनों से पता चलता है कि गरीबों के लिए आवंटित धन का लगभग एक चौथाई हिस्सा ही वास्तव में उन तक पहुँच पाता है। फिर बिचौलियों के पास कितना पैसा चला जाता है? मुझे इस बारे में कोई सटीक आंकड़ा नहीं मिल पाया। अनुमान लगाया जा सकता है कि यह कुल बजट का एक बड़ा हिस्सा होगा।
मैंने राय से कहा, "आपके सार्वजनिक जीवन को बनाए रखना बहुत महंगा होगा, क्योंकि इतने सारे गरीब लोग हर समय आपके पास आते रहते हैं।"

राय ने कहा, ‘मेरा सामाजिक खर्च बहुत अधिक है; कभी-कभी लोग मुझसे अस्पताल का बिल चुकाने, आपातकालीन ऋण देने और अन्य कई चीजों की उम्मीद करते हैं। मैं मना नहीं कर सकता।’ फिर उन्होंने मुझे स्थानीय शराब ठेकेदार के बारे में बताया। ‘उसके पास यहाँ से 2 किलोमीटर दूर शराब की दुकान चलाने का लाइसेंस है, लेकिन वह इस इलाके में अवैध रूप से शराब बेचता है। मैं बस इसे अनदेखा कर देता हूँ।’ बदले में, शराब ठेकेदार उन्हें पैसे देकर उनकी मदद करता है।
राय ने पैसे कमाने के तरीके ढूंढ लिए हैं। उन्होंने दार्शनिक अंदाज़ में कहा, “हम सरकार और आम जनता के बीच तालमेल बिठा लेते हैं। मान लीजिए ज़िला प्रशासन ने किसी को सड़क चौड़ी करने का ठेका दिया है। मैं प्रशासन और ठेकेदार को स्थानीय लोगों के साथ मुद्दों को सुलझाने, भूमि अधिग्रहण पूरा करने आदि में मदद करता हूँ।” ठेकेदार बदले में उन्हें फीस देता है।
यह कहने की आवश्यकता नहीं है कि राय जैसे बिचौलियों द्वारा संचालित सरकारी कार्यक्रम गरीबों के लिए हमेशा लाभकारी नहीं होते। नवंबर 2014 की एक सुबह, स्थानीय बिचौलियों की मदद से दर्जनों महिलाओं को उठाया गया और राय के ठिकाने से कुछ ही दूरी पर स्थित नसबंदी शिविरों में ले जाया गया। हालांकि राय उस शिविर के आयोजन में शामिल नहीं थे, लेकिन यह उसी तरह का कार्यक्रम है जिसे वे नियमित रूप से जिला प्रशासन को आयोजित करने में सहायता करते हैं।
शिविर में महिलाओं पर अंधाधुंध तरीके से नसबंदी की जा रही थी – जनसंख्या नियंत्रण का एक और अतिरंजित प्रयास। ऑपरेशन के कुछ ही घंटों के भीतर, ऑपरेशन की शिकार महिलाएं बीमार पड़ने लगीं। सौ से अधिक महिलाओं को बिलासपुर के अस्पतालों में भर्ती कराया गया, और अगले कुछ घंटों में कम से कम पंद्रह की मौत हो गई। जांच में पता चला कि ऑपरेशन करने वाला डॉक्टर नसबंदी के सरकारी लक्ष्यों को पूरा करने के दबाव में था, और उसने अस्वच्छ परिस्थितियों में छह घंटे में 83 ऑपरेशन किए। यह भी पता चला कि दी गई दवाओं में से एक में चूहे मारने का जहर मिला हुआ था। कुछ भ्रष्ट अधिकारियों और मंत्रियों ने एक निर्माता से भारी कमीशन लेकर थोक में दवा खरीदी थी। निर्माता ने महंगे रसायनों की जगह चूहे मारने का जहर मिलाकर अपने खर्चों की भरपाई की। राय समेत कांग्रेस पार्टी के नेताओं ने भाजपा

शासित राज्य सरकार की लापरवाही के खिलाफ जोरदार विरोध प्रदर्शन किया। राय ने मुझे बताया, 'हमने कई विरोध मार्च आयोजित किए।'
हम सर्दियों की धूप और गाड़ियों के शोरगुल में बाहर निकले। मेरी मुलाक़ात के लिए हार्दिक धन्यवाद देते हुए, राय ने अगले दिन अपने बेटे की शादी के रिसेप्शन में शामिल होने पर ज़ोर दिया। जब मैं कार में बैठा, तो उनके विदाई के शब्द थे: 'मुझे हमेशा जनता का पक्ष लेना है। यह हमेशा आसान नहीं होता।'

2

द माइटी टाइपिस्ट

चमकीले पीले रंग की सूती साड़ी पहने, जिस पर काले-सफेद रंग का बॉर्डर था, और पैरों में सादी काली चप्पलें पहने, प्रधानमंत्री इंदिरा गांधी सुहावनी नई दिल्ली की सुबह में निकलीं। अपनी आदत के अनुसार, वे अपने आवास से अगले बंगले तक तेज़ी से पगडंडी पर चल रही थीं, जहाँ अकादमी पुरस्कार विजेता अभिनेता और स्तंभकार पीटर उस्तीनोव उनका साक्षात्कार लेने के लिए प्रतीक्षा कर रहे थे। उन्हें तीस मिनट की देरी हो रही थी।
सुबह 9:20 बजे जब वह दोनों परिसरों के बीच बने छोटे गेट से अंदर जा रही थीं, तभी लगभग एक दशक से उनकी सुरक्षा कर रहे सब-इंस्पेक्टर बींत सिंह ने मुड़कर उन पर गोली चला दी। तीन गोलियां लगने से जब वह जमीन पर गिर पड़ीं, तो प्रधानमंत्री की सुरक्षा में महज दस महीने से तैनात इक्कीस वर्षीय सतवंत सिंह ने उन पर तीस गोलियां दागीं। दोनों ने अपने हथियार नीचे रख दिए और उनमें से एक ने कथित तौर पर चिल्लाकर कहा, 'मैंने अपना काम कर दिया है। तुम जो चाहो करो।' ये दोनों सिख अंगरक्षक गांधी जी से बदला ले रहे थे, क्योंकि गांधी जी ने उसी साल गर्मियों में भारतीय सेना को स्वर्ण मंदिर, जो उनके धर्म का सर्वोच्च धार्मिक स्थल है, में घुसकर सशस्त्र सिख अलगाववादियों को खदेड़ने का आदेश दिया था।
राजेंद्र कुमार धवन गांधीजी से मात्र कुछ ही फीट की दूरी पर थे जब उन पर गोलियां चलाई गईं, लेकिन एक भी गोली उन्हें छूकर नहीं निकली। समकालीन भारत में धवन की यही स्वाभाविक स्थिति थी: इतिहास से कुछ कदम दूर। वे अपनी गुरु के इतने करीब थे कि उनकी फुसफुसाहट सुन सकते थे, उनके इशारों को समझ सकते थे, घुसपैठियों को दूर रख सकते थे और निर्देश लिख सकते थे। वे इतने करीब थे कि भारत के एक लोकतांत्रिक राष्ट्र के रूप में विकसित होने के संघर्षों को, उसकी तमाम साजिशों, नाटक और हिंसा को करीब से देख सकते थे। वे गांधीजी और उनके मंत्री सहयोगियों सहित अधिकांश लोगों के बीच संपर्क का एकमात्र माध्यम भी बन गए थे।
धवन इतिहास की भीड़ भरी गलियों में किसी तरह से अपनी मंज़िल तक पहुँचने की जद्दोजहद में लगे हुए व्यक्ति की तरह दिखते थे, न कि ऐसे व्यक्ति की तरह जो

अपने आस-पास इतिहास रच रहे रंगीन किरदारों का आनंद ले रहा हो। इस टाइपिस्ट की लगभग खामोश यात्रा भारत में सैकड़ों पुरुषों और महिलाओं, जिनमें से कई स्टेनोग्राफर हैं, की ताकत को दर्शाती है, जो सत्ता में बैठे लोगों के खास आदमी बनकर उभरते हैं। धवन शायद अपने जैसे लोगों में सबसे प्रसिद्ध हों, लेकिन उनके जैसे हजारों लोग आम भारतीय और शक्तिशाली निर्णयकर्ताओं के बीच खड़े हैं।
एक भरोसेमंद सहायक की प्राथमिक योग्यता अक्सर QWERTY कीबोर्ड पर शांतिपूर्वक, तेज़ी से और सटीकता से टाइप करने की उसकी कुशलता ही होती है। एक बार जब वह किसी शक्तिशाली बॉस के कार्यालय में पहुँच जाता है, तो वह अन्य कौशल भी सीख लेता है, जैसे कि राज़ रखना, बॉस की ओर से बातचीत करना, बॉस के मन की बात समझना और उसके लिए विभिन्न परिस्थितियों को संभालना।
ये सहायक आमतौर पर निर्णय लेने वाले व्यक्ति के कक्ष तक पहुँच की सुरक्षा करते हैं। वे लाभ चाहने वालों और उनके मालिकों के बीच संदेश पहुँचाते हैं, अक्सर सौदे करते हैं और अपने मालिकों की ओर से लाभ इकट्ठा करते हैं, कभी- कभी थोड़ा-बहुत हिस्सा खुद भी लेते हैं, और आवश्यकतानुसार महिलाएँ या शराब भी लाते हैं। उनसे यह अपेक्षा की जाती है कि वे चुप रहें और इन रहस्यों को अपने साथ कब्र तक ले जाएँ।
छोटे कद के, साधारण दिखने वाले धवन गांधी परिवार और कांग्रेस के वरिष्ठ नेताओं सहित शेष भारत के एक महत्वपूर्ण हिस्से के बीच सत्ता के मध्यस्थ बन गए। उनकी कहानी आधुनिक भारत और उसकी विशाल, खस्ताहाल शासन प्रणाली की कार्यप्रणाली को समझने में सहायक होती है।
कहानी 1947 में भारत के विभाजन से शुरू होती है। दस साल के लड़के धवन को 1947 में ग्रामीण पाकिस्तान में एक किसान परिवार के सुख-सुविधाओं से निकालकर भारत लाया गया। उपमहाद्वीप के विभाजन ने आधुनिक इतिहास के सबसे बड़े नरसंहारों में से एक को जन्म दिया। लाखों लोग नई खींची गई सीमाओं के पार पलायन कर गए, एक दर्दनाक पलायन जिसने भारत, पाकिस्तान और बांग्लादेश के इतिहास को आज भी प्रभावित किया है। धवन और उनके परिवार के दस अन्य सदस्यों ने दिल्ली तक की एक कठिन यात्रा की, पहले पाकिस्तान में एक शरणार्थी शिविर में रुके और फिर सीमा पार करके भारत में प्रवेश किया। लुधियाना में दूसरे पड़ाव पर, धवन को याद है कि शिविर मलेरिया और भूख से ग्रस्त था। कुरुक्षेत्र में, उन्हें फिर से रुकने के लिए मजबूर होना पड़ा,

क्योंकि राष्ट्रीय राजधानी शरणार्थियों से भरी हुई थी। कुछ दिनों बाद, परिवार एक मालगाड़ी में सवार हुआ और दो दिनों में 160 किलोमीटर की दूरी तय करके दिल्ली पहुंचा।
उनका परिवार करोल बाग में अपने मामा के घर में रहने लगा। यहीं धवन ने स्थानीय स्कूल में दाखिला लिया और अपनी पढ़ाई पूरी की। 1955 से 1957 के बीच उन्होंने टाइपिंग और शॉर्टहैंड सीखी और ऑल इंडिया रेडियो में स्टेनोग्राफर की नौकरी पा ली। फिर 1962 में इतिहास ने उन्हें अपनी ओर आकर्षित किया। उनके एक रिश्तेदार यशपाल कपूर, जो पहले से ही प्रधानमंत्री जवाहरलाल नेहरू के कार्यालय में नियमित रूप से काम करते थे, युवा धवन को प्रधानमंत्री के आधिकारिक निवास तीन मूर्ति भवन ले गए। नेहरू की बेटी इंदिरा गांधी को न्यूयॉर्क विश्व मेले की समिति का अध्यक्ष नियुक्त किया गया था। धवन को उनका निजी सहायक नियुक्त किया गया – और इस तरह स्वतंत्र भारत के सबसे करिश्माई, विवादास्पद और प्रभावशाली राजनीतिक नेताओं में से एक के साथ उनका जुड़ाव शुरू हुआ।
सफेद सफारी सूट पहने धवन प्रतिदिन सुबह 8 बजे श्रीमती गांधी के कार्यालय में उपस्थित होते थे। ‘मैं उन्हें समझता था। वह मेरे काम करने के तरीके, मेरी वफादारी और मेरी मेहनत को जानती थीं। मैं सुबह आठ बजे से लेकर उनके रात बारह बजे तक, साल के 365 दिन वहीं रहता था। उन बाईस वर्षों के दौरान मैंने कभी एक दिन की भी छुट्टी नहीं ली; चाहे दिवाली हो, दशहरा हो या होली, मैं हमेशा मौजूद रहता था,’ धवन ने मुझे 2014 में बताया। हम दिल्ली की सबसे महंगी आवासीय कॉलोनियों में से एक, जोर बाग स्थित उनके घर के सुव्यवस्थित छोटे लॉन में बैठे थे।
जब हम उनके असाधारण जीवन के बारे में बात कर रहे थे, तो आगंतुक आते रहे और आशीर्वाद लेने के लिए उनके पैर छूते रहे, फिर आगे बढ़ गए। उनके एक करीबी ने पत्रों का एक बंडल लाया और धवन उन्हें पढ़ने लगे - उनमें से अधिकांश स्थानीय धार्मिक सभाओं के निमंत्रण थे। उम्र उन पर साफ दिख रही थी, लेकिन ऐसा लग रहा था कि वे आखिरकार उस फुर्सत और सुविधाओं का आनंद ले रहे थे, जिनके लिए उन्हें उन व्यस्त दशकों में समय नहीं मिला था। चौहत्तर वर्ष की आयु में, धवन ने हाल ही में शादी की थी और अपने जीवन के बारे में नोट्स लिखना शुरू कर दिया था। उनकी पत्नी अचला, 1990 के दशक की शुरुआत में तलाक के बाद अपनी बेटी के साथ कनाडा से भारत लौटने के बाद से ही धवन के साथ थीं।

दोनों ने अक्टूबर 2011 में शादी की और कुछ महीनों बाद दोस्तों और परिवार के लिए एक रिसेप्शन आयोजित करके अपनी शादी को सार्वजनिक किया। अचला ने इंडियन एक्सप्रेस को बताया, 'आप हमें आत्मीय साथी कह सकते हैं। हम एक-दूसरे को बहुत लंबे समय से जानते हैं, और मैं हर दिन उनके घर उनसे मिलने जाती रही हूं।'
‘शादी करने का समय ही नहीं था। अगर मैंने शादी कर ली होती तो या तो मैं उसे तलाक दे देता या मेरा पड़ोसी उसे ले जाता,’ धवन ने हल्की मुस्कान के साथ कहा, यह याद करते हुए कि श्रीमती गांधी ने उनसे कभी भी उनके निजी मामलों के बारे में नहीं पूछा था।
1972 तक, धवन गांधी के लिए राजनीतिक संपर्क का काम संभालने लगे थे। प्रधानमंत्री अपने चरम पर थीं – सैन्य हस्तक्षेप के माध्यम से उन्होंने बांग्लादेश को एक स्वतंत्र राष्ट्र के रूप में स्थापित किया था। कश्मीर और देश के उत्तर-पूर्वी हिस्से में उन्होंने भारत से स्वतंत्रता की मांग को काफी हद तक दबा दिया था, और गरीबी उन्मूलन के आह्वान (गरीबी हटाओ) के माध्यम से उन्होंने राष्ट्र का दिल जीत लिया था। लेकिन उनके निरंकुश रवैये और उनके द्वारा लिए गए कई फैसलों के खिलाफ राजनीतिक विरोध बढ़ता जा रहा था।
12 जून 1975 को इलाहाबाद उच्च न्यायालय ने लोकसभा के लिए उनके चुनाव को अमान्य घोषित कर दिया, जिससे उनके इस्तीफे की मांग और भी बढ़ गई। 25 जून तक गांधी ने आंतरिक आपातकाल लागू कर दिया, नागरिक स्वतंत्रताएं निलंबित कर दीं, जिससे उन्हें अध्यादेश द्वारा शासन करने की शक्ति मिल गई। जैसे-जैसे भारत का लोकतंत्र निरंकुशता में बदलता गया, गांधी के आसपास के एक छोटे से समूह - मुख्य रूप से उनके बेटे संजय और धवन, और कुछ अन्य लोगों - ने सत्ता संभाली। धवन ने आपातकाल पर चर्चा करने से इनकार करते हुए कहा, 'उन दिनों के बारे में बहुत कुछ कहा जा चुका है।' 'चाहे वह सत्ता में थीं या सत्ता से बाहर, मैंने श्रीमती गांधी के लिए काम किया।' स्पष्ट रूप से, उन्होंने इन नैतिक दुविधाओं में उलझना बिल्कुल अनावश्यक समझा।
1977 तक आपातकाल समाप्त हो गया और उसके बाद हुए चुनावों में गांधी और कांग्रेस को करारी हार का सामना करना पड़ा। सत्ता से बाहर और अकेली होने के बावजूद, गांधी को अपने पत्रों को टाइप करने के लिए किसी की ज़रूरत थी।
धवन, जो अब एक राजनीतिक सहायक थे, को पदावनत नहीं किया जा सकता था।

उन्होंने कांग्रेस से एक भरोसेमंद और तेज़ टाइपिस्ट की मांग की। यहीं से विन्सेंट जॉर्ज की एंट्री हुई, जिन्होंने धवन की तरह ही गांधी परिवार का विश्वास जीत लिया; एक और ऐसा व्यक्ति जो प्रभावशाली लोगों तक पहुँच को नियंत्रित करता था। जब मैंने धवन से जॉर्ज के बारे में पूछा, तो उन्होंने भावहीन चेहरे से जवाब दिया, 'वह ठीक-ठाक थे, बाकी इंसानों की तरह ही।' उनके बारे में उन्होंने बहुत कम कहा, हालाँकि उनमें बहुत कुछ समान था। विन्सेंट जॉर्ज 1974 में केरल से उच्च शिक्षा प्राप्त करके बेहतर आर्थिक अवसरों की तलाश में प्रवासी के रूप में दिल्ली आए थे। उस समय उनके पास एकमात्र प्रमाणित कौशल तेज टाइपिंग की क्षमता थी - मीडिया रिपोर्टों के अनुसार, उन्होंने केरल में सबसे तेज टाइपिस्ट का पुरस्कार जीता था। कुछ ही हफ्तों में, उन्हें कांग्रेस पार्टी के मुख्यालय में टाइपिस्ट की नौकरी मिल गई। उनकी किस्मत तब बदलने लगी जब प्रधानमंत्री के दो बेटों में से छोटे बेटे संजय गांधी की नजर उन पर पड़ी।
1980 में संजय गांधी की विमान दुर्घटना में मृत्यु के बाद, उनके बड़े भाई और वाणिज्यिक पायलट राजीव गांधी कांग्रेस में शामिल हो गए। जॉर्ज को राजीव गांधी की सहायता के लिए नियुक्त किया गया, और इस तरह भारतीय राजनीति में एक और चर्चित बॉस-मैन-फ्राइडे संबंध की शुरुआत हुई। 1984 में अपनी माता की हत्या के बाद जब राजीव गांधी अप्रत्याशित रूप से प्रधानमंत्री बने, तो जॉर्ज भी उनके साथ प्रधानमंत्री कार्यालय (पीएमओ) में शामिल हो गए। किसी भारतीय प्रधानमंत्री के सबसे युवा निजी सचिव के रूप में नियुक्त जॉर्ज को नई दिल्ली में सरकारी आवास आवंटित किया गया और वे पीएमओ का अभिन्न अंग बन गए। इंदिरा गांधी के साथ धवन की तरह, वे राजीव गांधी तक पहुंच को नियंत्रित करते थे - किसी को उनसे मिलने की अनुमति देने से लेकर, किसी बैठक के दौरान हस्तक्षेप करके उसे छोटा या लंबा करने तक। मई 1991 में, राजीव गांधी नेहरू-गांधी परिवार के दूसरे सदस्य बने जिनकी हत्या कर दी गई, जब तमिलनाडु के मद्रास (अब चेन्नई) के पास श्रीपेरुम्बुदुर में एक चुनाव प्रचार के दौरान लिबरेशन टाइगर्स ऑफ तमिल ईलम (एलटीटीई) के एक आत्मघाती हमलावर ने उन्हें बम से उड़ा दिया। जॉर्ज गांधी परिवार के साथ बने रहे और शोकग्रस्त विधवा सोनिया गांधी और उनके छोटे बच्चों प्रियंका और राहुल के लिए सभी व्यावहारिक कार्यों को संभालने की जिम्मेदारी ली। वे भारतीय राजनीति की चालों के खिलाफ परिवार के लिए एक मजबूत स्तंभ बन गए। जब

गांधी परिवार की निरंतर राजनीतिक प्रासंगिकता का संदेश देना आवश्यक हुआ, तो पर्दे के पीछे से जॉर्ज ने ही यह भूमिका निभाई।
राजीव गांधी की हत्या के कुछ ही महीनों के भीतर, धूर्त कांग्रेसी नेता पी.वी. नरसिम्हा राव सेवानिवृत्ति से लौटकर प्रधानमंत्री बने। सोनिया गांधी ने सक्रिय राजनीति में आने से इनकार कर दिया था और उन्होंने ही राव को वापस लौटने के लिए राजी किया था। हालांकि, जल्द ही उन्होंने गांधी परिवार के प्रति स्पष्ट शत्रुता दिखाना शुरू कर दिया। पर्दे के पीछे रहकर, जॉर्ज ने गांधी परिवार के वफादारों द्वारा विद्रोह का प्रदर्शन आयोजित किया। इसके जवाब में, राव सरकार ने जॉर्ज को उस सरकारी आवास को खाली करने का नोटिस भेजा जिस पर उन्होंने कब्जा कर रखा था। जॉर्ज के बहनोई, साबू चाको, जो भारत की पहली निजी एयरलाइन, ईस्ट वेस्ट एयरलाइंस में काम करते थे, को दिल्ली में अंडरवर्ल्ड अपराधियों को पनाह देने के आरोप में गिरफ्तार किया गया और उन्होंने कुछ साल जेल में बिताए। जॉर्ज और उनके परिवार ने हर किसी के सामने चाको की बेगुनाही का दावा किया।
इसमें कोई शक नहीं था कि जॉर्ज गांधी परिवार के प्रति अपनी वफादारी की कीमत चुका रहे थे और व्यापक रूप से यह अटकलें लगाई जा रही थीं कि नई दिल्ली में उनका समय समाप्त हो चुका है। लेकिन भारतीय राजनीति में कोई भी भविष्यवाणी करना आसान नहीं होता। 1997 में, सोनिया गांधी ने अधिक सक्रिय राजनीतिक भूमिका निभाने का फैसला किया – इस फैसले का वंशवादी कांग्रेस पार्टी में व्यापक रूप से स्वागत किया गया। इसके साथ ही, जॉर्ज का सितारा फिर से चमकने लगा। लेकिन यह चमक ज्यादा देर तक नहीं टिकी।
1998 में दक्षिणपंथी भारतीय जनता पार्टी ने भारी बहुमत से सत्ता हासिल की। और जॉर्ज एक बार फिर मुश्किलों में घिर गए। केंद्रीय जांच ब्यूरो (सीबीआई) ने जॉर्ज के खिलाफ एफआईआर दर्ज कर उन पर अनुपातहीन संपत्ति रखने का आरोप लगाया। एजेंसी ने बताया कि जॉर्ज के पास एक पॉश इलाके में आलीशान बंगला, एक अन्य कॉलोनी में अपार्टमेंट, दक्षिण दिल्ली के एक इलाके में एक व्यावसायिक फ्लोर, कनॉट प्लेस स्थित वर्ल्ड ट्रेड सेंटर में दो दुकानें और कुतुब मीनार के पास 5 एकड़ का प्लॉट था। एजेंसी ने यह भी दावा किया कि जॉर्ज के बैंक खातों और अन्य साधनों में करोड़ों रुपये थे। सीबीआई ने बताया कि जॉर्ज की पत्नी लिली, जो 1990 के खाड़ी युद्ध शुरू होने तक कुवैत में नर्स थीं, दो फर्मों की मालिक थीं और उनकी आय में भी अप्रत्याशित

वृद्धि हुई थी। इसके अलावा, जब जॉर्ज गांधी परिवार की सेवा कर रहे थे, तब उन्हें और उनके परिवार को विभिन्न स्रोतों से नकद उपहार प्राप्त हुए थे। नवंबर 1991 में उन्हें 1.25 करोड़ रुपये मिले, दिसंबर में 41 लाख रुपये, दिसंबर 1992 में 70 लाख रुपये और मार्च 1995 में 20 लाख रुपये मिले। हालांकि जॉर्ज ने दावा किया कि उनकी अधिकांश संपत्तियां उनकी पत्नी की कंपनियों से प्राप्त आय से खरीदी गई थीं, सीबीआई ने कहा कि ये कंपनियां - लिलियंस एक्सपोर्ट्स और डायना एजेंसीज - केवल कुछ वर्षों तक ही संचालित रहीं।
गांधी परिवार के लिए, उनकी अटूट निष्ठा को देखते हुए, कथित वित्तीय अनियमितताएं क्षमायोग्य थीं। आज भी, वे सोनिया गांधी के आधिकारिक आवास, 10 जनपथ पर एक महत्वपूर्ण व्यक्ति बने हुए हैं। 20 जनवरी 2015 को, दिल्ली की एक निचली अदालत ने जॉर्ज के खिलाफ आय से अधिक संपत्ति का मामला खारिज कर दिया। हालांकि, सीबीआई मामलों के बाद, जॉर्ज गुमनामी में चले गए हैं। लेकिन आज भी, वे गांधी परिवार के कई रहस्यों की कुंजी रखते हैं, और इस प्रकार भारत के हाल के दशकों के रहस्यों की भी।
जॉर्ज का करियर धवन के करियर से केवल इस मायने में अलग है कि धवन ने कांग्रेस पार्टी के एक वरिष्ठ नेता के रूप में एक लंबा राजनीतिक करियर भी बनाया।
धवन के भाग्य का उतार-चढ़ाव पूरी तरह से इंदिरा गांधी से जुड़ा हुआ था। 31 अक्टूबर 1984 को जब श्रीमती गांधी की हत्या हुई, तो धवन, सोनिया गांधी और अन्य अधिकारी उन्हें अखिल भारतीय आयुर्वेद विज्ञान संस्थान (AIIMS) अस्पताल ले गए, जहाँ उन्हें जल्द ही मृत घोषित कर दिया गया। धवन का ट्रेडमार्क सफेद सफारी सूट खून से लथपथ था।
धवन ने उस सुबह को याद करते हुए कहा, 'मैं घर से नए कपड़े लेकर आया था।' जैसे ही नेता और महत्वपूर्ण अधिकारी उस अस्पताल में जमा होने लगे जहां गांधी जी का पार्थिव शरीर रखा था, धवन को वहां मौजूद रहना पड़ा। गांधी परिवार, सरकार और कांग्रेस के बारे में अपनी गहरी जानकारी के कारण, धवन को उस दुखद क्षण में एक महत्वपूर्ण भूमिका निभानी थी। उसी शाम इंदिरा गांधी के चालीस वर्षीय पुत्र राजीव गांधी ने प्रधानमंत्री के रूप में शपथ ली। धवन उन गिने-चुने लोगों में से थे जो राष्ट्रपति भवन में मौजूद थे, जहां राष्ट्रपति ने उन्हें शपथ दिलाई।

कांग्रेस में पीढ़ीगत बदलाव ने धवन के जीवन पर नाटकीय प्रभाव डाला। राजीव गांधी ने उनकी माता की हत्या की जांच के लिए सुप्रीम कोर्ट के तत्कालीन न्यायाधीश न्यायमूर्ति एम.पी. ठक्कर को नियुक्त किया। और 1984 के अंत तक, पदभार संभालने के दो महीने के भीतर ही, युवा प्रधानमंत्री ने धवन को दरकिनार कर दिया। इंदिरा गांधी की हत्या में धवन की संलिप्तता की अफवाहें दिन-ब-दिन बढ़ती जा रही थीं।
धवन ने कहा, ‘काश एक गोली मुझे लग जाती, ताकि मुझे सुप्रीम कोर्ट के मौजूदा जज के गुस्से का सामना न करना पड़ता। मेरे बारे में अपमानजनक टिप्पणियां और भद्दी बातें कही गईं।’ उन्हें और उनके परिवार को निगरानी में रखा गया, उनके फोन टैप किए गए और उनके घर आने वाले हर व्यक्ति से पूछताछ की गई। रातोंरात, धवन उस शहर में राष्ट्रीय अछूत बन गए, जहां वे दशकों से सबसे शक्तिशाली और प्रतिष्ठित व्यक्तियों में से एक थे।
अपनी 312 पन्नों की रिपोर्ट में न्यायमूर्ति ठक्कर ने कहा कि केंद्र सरकार को आर.के. धवन की हत्या में कथित संलिप्तता की जांच के लिए उचित एजेंसियों को निर्देश देना चाहिए। जांच आयोग की रिपोर्ट में कहा गया कि धवन की संलिप्तता का संदेह करने के लिए पर्याप्त आधार हैं, उन पर आयोग से झूठ बोलने और अपराध में मिलीभगत का आरोप लगाया गया। रिपोर्ट में कहा गया, "इस निष्कर्ष से बचा नहीं जा सकता कि धवन की अपराध में मिलीभगत या संलिप्तता का संदेह करने के ठोस कारण हैं।" सरकार ने न्यायमूर्ति ठक्कर के निष्कर्ष की जांच के लिए एक विशेष जांच दल नियुक्त किया, लेकिन वह इनमें से किसी भी दावे को साबित नहीं कर सका। यह भी पता चला कि ठक्कर सरकार और पार्टी में धवन के विरोधियों से अनुचित रूप से प्रभावित थे।
1989 तक, राजीव गांधी धवन को सार्वजनिक जीवन में वापस ले आए। सोनिया गांधी के नेतृत्व में भी वे एक प्रमुख कांग्रेस नेता बने रहे और 2016 तक वे पार्टी की सर्वोच्च निर्णय लेने वाली संस्था, कांग्रेस कार्य समिति (सीडब्ल्यूसी) के सदस्य थे।
‘श्रीमती गांधी के जीवित रहते हुए उन्होंने मुझे पद से हटाने की हर संभव कोशिश की। वे लोग – एम.एल. फोतेदार, अरुण सिंह, अरुण नेहरू – सभी ने मुझे हटाने का प्रयास किया,’ धवन ने वरिष्ठ कांग्रेस नेताओं के नाम लेते हुए मुझसे कहा। ऐसा माना जाता है कि उन्होंने अतीत में, कम से कम सार्वजनिक रूप से, अपने दुश्मनों की सूची नहीं बताई है।

धवन ने कहा कि आम लोग नेहरू-गांधी परिवार के साथ उनके रिश्ते को नहीं समझ पाएंगे। उन्होंने धीरे से कहा, 'मैंने पंडित नेहरू, संजय गांधी, इंदिरा गांधी और राजीव गांधी के शव उठाए... परिवार के चार शव मैंने अपने कंधों पर उठाए थे।' उन्होंने मेरी आँखों में देखते हुए कहा, मानो यह परख रहे हों कि क्या मैं उनकी कही बात का महत्व समझ पाया हूँ।
नेहरू के निधन के समय वे तीन मूर्ति भवन में मौजूद थे और 1964 में गंगा, यमुना और पवित्र सरस्वती नदियों के संगम पर विसर्जित करने के लिए नेहरू की अस्थियों को इलाहाबाद ले जाने वाली विशेष ट्रेन में भी वे ही थे। 1980 में विमान दुर्घटना में संजय गांधी की मृत्यु के बाद उनका पार्थिव शरीर उन्होंने ही कंधा दिया था। 1984 में इंदिरा गांधी की हत्या के समय वे उनके साथ ही थे। 1991 में राजीव गांधी की हत्या के बाद वे सोनिया गांधी के साथ तमिलनाडु गए और उनका पार्थिव शरीर वापस लाए। धवन ने उन्हीं शांत स्वर में उन पलों को याद किया।
इंदिरा गांधी के यहां टाइपिस्ट के रूप में अपना करियर शुरू करने वाले आर.के. धवन वर्षों से शायद इकलौते ऐसे बाहरी व्यक्ति रहे हैं, जिन्होंने भाग्य और इतिहास के उस दौर को देखा है जब परिवार की किस्मत और उसके फलस्वरूप नवजात लोकतंत्र के साथ खिलवाड़ हो रहा था। नेहरू-गांधी परिवार ने भारत के सात दशकों के स्वतंत्र जीवन में से चौवालीस वर्षों तक शासन किया है। आर.के. धवन नेहरू काल के शुरुआती वर्षों और राजीव गांधी के कार्यकाल के कुछ हिस्सों को छोड़कर, पूरे समय वहीं मौजूद रहे। उनके जैसा कोई और अंदरूनी व्यक्ति भारतीय लोकतंत्र के आंतरिक कामकाज पर प्रकाश नहीं डाल सकता। हमने उनकी आत्मकथा लिखने की योजनाओं पर चर्चा की।
मैंने अभी तक यह तय नहीं किया है कि मुझे क्या लिखना है और क्या नहीं लिखना है।
आपने बहुत कुछ देखा है?
'बेशक, मैंने बहुत कुछ देखा है।'
क्या आप गांधी परिवार के रहस्यों को उजागर करने के लिए उत्सुक हैं?
‘नहीं, कभी नहीं,’ उसने दृढ़ता से कहा।
जब मैंने उनसे विदा ली और जोर बाग से गाड़ी चलाते हुए निकला, तो मैं सोच रहा था कि उन्होंने यह घर कैसे खरीदा होगा। यह सवाल मैंने उनसे नहीं पूछा था।

अस्पष्ट धन-दौलत, कायापलट और रहस्यमय दौलत हमारे राजनेताओं और उनके भरोसेमंद सहयोगियों के जीवन का अभिन्न अंग हैं। ऐसे कई लोग हैं जिन्होंने सरकारी नौकरी छोड़कर राजनीतिक नेताओं के निजी सहायक बनने का विकल्प चुना; वहीं कुछ भरोसेमंद सहयोगी राजनीतिक नेताओं के आशीर्वाद से राजनीति में आगे बढ़े हैं।
उदाहरण के लिए, 15 फरवरी 2016 को जब सत्तारूढ़ भाजपा के वकीलों और समर्थकों की भीड़ ने इंडिया गेट के पास एक अदालत परिसर में पत्रकारों और शिक्षाविदों पर हमला किया, तो हमलावरों में सबसे जाना-पहचाना चेहरा ओ.पी. शर्मा का था। उन्होंने अपना अधिकांश जीवन भारत के वित्त मंत्री अरुण जेटली के साये में बिताया था और हाल ही में स्थानीय विधानसभा के सदस्य बने थे। पूरे भारत में ऐसे कई लोग हैं जिन्होंने अपने आकाओं के साये से निकलकर इस तरह का राजनीतिक करियर बनाया है।
1990 के दशक में जब मैं दिल्ली स्थानीय सरकार को कवर करने वाला एक पत्रकार था, तब विदेशी एमबीए डिग्री वाला एक दुबला-पतला युवक भाजपा शासित दिल्ली सरकार में परिवहन मंत्री के निजी स्टाफ में शामिल हुआ। मंत्री के साथ रहते हुए, ज्यादातर समय मंत्री के कमरे में बैठे अजय सिंह को देखकर ऐसा लगता था मानो वह सिर्फ आधिकारिक संचार तैयार कर रहे हों, नियुक्तियाँ तय कर रहे हों और कभी-कभार अपने बॉस के लिए तात्कालिक समस्याओं को सुलझा रहे हों। सरकार के सत्ता से बाहर होने के बाद, सिंह प्रमोद महाजन के साथ काम करने चले गए, जो भाजपा के एक वरिष्ठ नेता और भारतीय राजनीति में उभरते सितारे थे। महाजन, एक प्रभावशाली राजनेता थे जिन्होंने पार्टी के लिए बड़ी धनराशि जुटाई और चुनाव अभियानों का प्रबंधन किया। राष्ट्रीय चुनावों में उनकी पार्टी की अप्रत्याशित हार के दो साल बाद, 2006 में उनके छोटे भाई ने उनकी हत्या कर दी। भाजपा के सत्ता से बाहर होने और अजय सिंह के महाजन के साथ आधिकारिक पद से हटने के बाद, इस युवा विश्वासपात्र के जीवन ने एक नया मोड़ लिया।
2004 में, उन्होंने एक बंद पड़ी निजी एयरलाइन का अधिग्रहण करके व्यापार जगत को चौंका दिया, जिसके पास अभी भी वैध एयर ऑपरेटिंग सर्टिफिकेट था, और उन्होंने बेहद सफल कम लागत वाली एयरलाइन, स्पाइसजेट की शुरुआत की। जून 2006 में, मुंबई में प्रमोद महाजन की हत्या के दो महीने बाद, भाजपा नेता की रहस्यमय संपत्ति के बारे में अफवाहें फैलने लगीं। अजय सिंह ने समाचार

एजेंसी IANS को बताया: 'यह सरासर बकवास है कि प्रमोद महाजन का पैसा एयरलाइन में लगा हुआ है और मैं उनका खास आदमी था। आप खाता-बही देख सकते हैं, शेयरधारकों के नाम सूचीबद्ध हैं।'
युवा उद्यमी, आलीशान बंगले में रहने वाला बुजुर्ग और कई संपत्तियों का मालिक टाइपिस्ट - ये सभी भारतीय प्रणाली में भाग्यशाली सहायकों के प्रभाव की मात्र झलकियाँ हैं। यदि आप भारतीय प्रणाली का लाभ उठाना चाहते हैं, तो इस टचस्क्रीन युग में भी व्यक्तिगत सहायक की शक्ति को समझना अत्यंत महत्वपूर्ण है।
यह व्यक्ति अपने बॉस के पारिवारिक और व्यावसायिक रहस्यों, संभवतः भारत की कुछ सबसे सनसनीखेज कहानियों और प्रसिद्ध पुरुषों और महिलाओं की सनक और इच्छाओं को लगभग हमेशा उनकी मृत्युशय्या तक अपने साथ रखता है। भारत के सबसे रंगीन और महत्वपूर्ण क्षण सार्वजनिक रिकॉर्ड से गायब हो जाते हैं। हालांकि, कुछ अपवाद भी हैं - ऐसे पुरुष जो कुछ कहानियां सुनाते हैं। और वे हमें यह अंदाजा देते हैं कि ये सहायक वास्तव में कितना जानते हैं, उनका प्रभाव कितना व्यापक है।
जवाहरलाल नेहरू के विश्वासपात्र और धवन और जॉर्ज के पूर्ववर्ती एम.ओ. मथाई का उदाहरण लीजिए।
जब मथाई आनंद भवन पहुंचे – जो नेहरू परिवार का भव्य निवास था और अब एक सरकारी संग्रहालय है – तब तक वे द्वितीय विश्व युद्ध में अमेरिकी सैनिकों की सेवा पूरी कर चुके थे। अपनी पुस्तक में मथाई ने बताया है कि उन्हें यह नौकरी कैसे मिली: ‘फरवरी 1946 की शुरुआत में इलाहाबाद पहुंचने के तुरंत बाद नेहरू मलाया से लौट आए। मैंने उन्हें इलाहाबाद की अपनी पिछली यात्रा के दौरान ही बता दिया था कि उनके साथ एक सप्ताह बिताने के बाद ही मैं बता पाऊंगा कि मैं उनकी किस प्रकार मदद कर सकता हूं। लेकिन मुझे एक सप्ताह से भी कम समय लगा। मैंने पाया कि नेहरू को अब तक कोई पर्याप्त सचिवीय सहायता नहीं मिली थी। उन्हें अपने कागजात भी खुद ही दाखिल करने पड़ते थे। उनकी पुस्तकों, रॉयल्टी और सामान्य वित्त से संबंधित कागजात पूरी तरह से अव्यवस्थित थे। मैंने उनसे कहा कि स्थिति का सतही आकलन करने पर ही मुझे विश्वास हो गया है कि उनकी मदद करने का सबसे अच्छा तरीका यही है कि मैं उन्हें सचिवीय सहायता प्रदान करूं और मैंने यह भी कहा कि मैंने एक वर्ष के लिए यह अप्रिय काम करने का निर्णय लिया है। वे अत्यंत प्रसन्न हुए।’

सत्ता के दुरुपयोग के आरोपों के कारण 1959 में जब उन्हें पद से हटा दिया गया, तब तक मथाई (दोस्तों और नेहरू परिवार के बीच मैक के नाम से मशहूर) संभवतः भारत के प्रथम परिवार के सभी रहस्यों को जान चुके थे: प्रधानमंत्री की आदतें, उनकी कमजोरियां और उनका निजी जीवन। मथाई ने आनंद भवन और तीन मूर्ति भवन, जो नेहरू का आधिकारिक निवास बन गया था, के रहस्यों को 1970 के दशक तक गुप्त रखा। फिर उन्होंने लेखन का फैसला किया।
1970 का दशक सनसनीखेज था। नेहरू की बेटी इंदिरा गांधी ने अपार राजनीतिक शक्ति का प्रयोग किया, लोकतंत्र का दुरुपयोग किया और चुनावी हार का सामना किया। इसी समय मथाई ने नेहरू युग के अपने संस्मरण प्रकाशित करने का निर्णय लिया। 'रेमिनिसेंस ऑफ द नेहरू एज' (विकास पब्लिशिंग हाउस, दिल्ली, 1978) की प्रस्तावना में, जो अब अनुपलब्ध है, मथाई लिखते हैं: 'इस पुस्तक को लिखना शुरू करने से पहले, मैंने अपने मन से सभी पारंपरिक व्यक्तिगत निष्ठाओं को त्याग दिया: केवल इतिहास के प्रति मेरा दायित्व शेष रहा।' उन्होंने नेहरू युग को बिना किसी संकोच के खंगाला, भारतीय इतिहास के कई दिग्गजों के चरित्र-चित्रण किए, सनसनीखेज विवरणों से इसे भर दिया और भारत में असामान्य स्पष्टवादिता के साथ प्रस्तुत किया। कई लोगों ने मथाई के दावों की सत्यता पर सवाल उठाए हैं, लेकिन आज तक कोई प्रतिवाद प्रस्तुत नहीं किया गया है। इसका एक कारण यह हो सकता है कि नेहरू के निजी दस्तावेज आज कांग्रेस अध्यक्ष और नेहरू-गांधी परिवार की मुखिया सोनिया गांधी की हिरासत में हैं।
भारत के राजनीतिक परिदृश्य के उनके वर्णन के अलावा, यह पुस्तक एक राजनेता के सहायक की शक्तियों की भी गहरी समझ प्रदान करती है। एक बार, एक मंत्री के एक महिला के साथ संबंध का घोटाला सार्वजनिक होने के बाद, मथाई लिखते हैं, 'मैंने मंत्री को फोन किया और वह दोपहर में मेरे कार्यालय आए। यह शनिवार का दिन था जब संसद का सत्र नहीं चल रहा था। उन्होंने सब कुछ स्वीकार कर लिया। मैंने उन्हें एक कागज का टुकड़ा दिया और उनसे प्रधानमंत्री को संबोधित मंत्रिपरिषद से अपना इस्तीफा लिखने को कहा। जैसे-जैसे मैं धीरे-धीरे लिखवाता गया, उन्होंने लिखा, "मैं व्यक्तिगत कारणों से मंत्रिपरिषद से अपना इस्तीफा दे रहा हूँ। यदि आप इसे राष्ट्रपति को स्वीकृति के लिए अग्रेषित करने की कृपा करेंगे तो मैं आभारी रहूँगा।"' इसके बाद मथाई ने मंत्री को सोमवार सुबह संसद में एक अन्य सांसद के साथ मिलने के लिए कहा। जब

वे मिले, मथाई लिखते हैं: 'मैंने मंत्री से कहा कि जहाँ तक हार्मोन का सवाल है, मुझे किसी पर भी निर्णय देने का कोई अधिकार नहीं है; लेकिन मैंने आगे कहा, “आपने होटल रजिस्टरों में अपना और उस महिला का नाम ‘श्रीमान और श्रीमती’ के रूप में दर्ज करवाकर घोर मूर्खता की है। कुछ लोगों ने उसे उकसाया है और आपको ब्लैकमेल करने के लिए उसे दिल्ली भेजा है। मेरा सुझाव है कि आप उसकी चुप्पी खरीद लें। मुझे पूरा विश्वास है कि आपका अच्छा मित्र मलिया [सांसद जो उनके साथ था] उसे चुपचाप दिल्ली से चले जाने के लिए मना लेगा। मलिया को तय करना चाहिए कि उसे कितनी रकम दी जाए।” प्रेमिका चुप हो गई, और मंत्री ने अपनी विनती से भारतीय राजनीति में वापसी की और बड़ी ऊंचाइयों को छुआ।
लंदन में, सन् 1947 और 1951 के बीच, भारतीय उच्चायुक्त वी.के. कृष्ण मेनन ने इंडिया हाउस में एक स्वागत समारोह का आयोजन किया। इसमें तत्कालीन ब्रिटिश प्रधानमंत्री क्लेमेंट एटली और अन्य लोग शामिल हुए। मथाई लिखते हैं: ‘नेहरू एक कोने में खड़े होकर लेडी माउंटबेटन से लगातार बातचीत कर रहे थे। कृष्ण मेनन ने मेरी ओर मुड़कर कहा कि लोग इस पर टिप्पणी कर रहे हैं और मुझसे बीच में बोलने का अनुरोध किया ताकि नेहरू थोड़ा घूम-फिर सकें। मैंने उनसे कहा कि इस मामले में मेरा कोई दखल नहीं है, वे मेजबान हैं और प्रधानमंत्री को लोगों से मिलने-जुलने देना उनका कर्तव्य है। कृष्ण मेनन में सही काम करने का साहस नहीं था। अगले कुछ दिनों में अन्य जगहों पर भी इसी तरह के दो और समारोह होने वाले थे, और मैं नहीं चाहता था कि प्रधानमंत्री फिर से किसी एक व्यक्ति से चिपके रहें। बाद में, शाम को, मैंने प्रधानमंत्री को इस घटना के बारे में एक हस्तलिखित पत्र भेजा, जिसमें मैंने कहा कि इससे प्रतिकूल टिप्पणी और अनावश्यक गपशप हुई है। मैं इस मामले पर उनसे व्यक्तिगत रूप से बात करके उन्हें शर्मिंदा नहीं करना चाहता था। वे इतने बड़े व्यक्तित्व के धनी थे कि मेरे पत्र को गलत नहीं समझेंगे।’ इसका वांछित प्रभाव पड़ा और अन्य दोनों पार्टियां भी सफलतापूर्वक संपन्न हुईं।
मथाई के इस्तीफे के बाद नेहरू ने स्वीकार किया: 'श्री मथाई के बारे में मेरी व्यापक राय यह थी कि वे कुशल, ईमानदार और वफादार थे, कम से कम मेरे प्रति तो वफादार थे ही; लेकिन साथ ही वे ऐसे व्यक्ति भी थे जो छोटी-छोटी बातों में अक्सर मूर्खतापूर्ण व्यवहार करते थे; और कभी-कभी अपनी धौंस

जमाने की कोशिश भी करते थे। लेकिन मुझे उनकी ईमानदारी पर कभी संदेह नहीं हुआ और तब से मुझे ऐसा करने का कोई कारण नहीं मिला है।'
नेहरू परिवार में किसी ने भी यह उम्मीद नहीं की होगी कि मथाई उन अनेक बातों के बारे में लिखेंगे जो उन्होंने चुपचाप सुनी और देखी थीं। मथाई ने कहा कि इंदिरा गांधी के पति और राजीव एवं संजय के पिता फिरोज गांधी के बारे में यह कहना गलत नहीं होगा कि उन्हें पढ़ाई-लिखाई में कोई रुचि नहीं थी। जीवन भर उनकी लिखावट बच्चों जैसी ही रही। उन्होंने फिरोज के विभिन्न महिलाओं के साथ संबंधों के बारे में भी लिखा।
मथाई की दो पुस्तकें - दूसरी पुस्तक 'मेरे नेहरू के दिन' है - भारत की सबसे महान हस्तियों की कहानियों, उनके छोटे-मोटे झगड़ों, प्रेम प्रसंगों, अफवाहों, प्रेमिकाओं और अन्य बातों से भरी हुई हैं। उन्होंने यहां तक दावा किया है कि उन्होंने महात्मा गांधी के कुछ निजी कागजात जला दिए थे, जो 1948 में महात्मा गांधी की हत्या के बाद नेहरू को सौंपे गए थे। मथाई के स्वयं के बयान के अनुसार, उन कागजातों में नेहरू की बहन विजया लक्ष्मी पंडित के सैयद हुसैन के साथ भाग जाने का विवरण भी था, जो एक करिश्माई पत्रकार थे और कई साल बाद मिस्र में अकेले और दुखी मन से मर गए।
लेकिन इंदिरा गांधी के बारे में लिखे अपने लेखों में मथाई सबसे अधिक तीखे थे। 'प्रधानमंत्री रहते हुए उन्हें अपने पिता से दो पायदान ऊपर उठने की कोशिश करते देखना हास्यास्पद और दयनीय था। बेचारी! मुझे लगता है कि ज्यादातर महिलाएं भ्रमों के बोझ तले दबी होती हैं।'
उनकी सबसे विवादास्पद रचनाओं में से एक 'वह' शीर्षक वाला अध्याय था। कई लोगों का मानना है कि यह अध्याय उन्होंने नहीं लिखा था। मेरी मुलाकात मथाई की पुस्तकों के प्रकाशन में अहम भूमिका निभाने वाले एक व्यक्ति से हुई। उन्होंने बताया कि यह अध्याय वास्तव में मूल पांडुलिपि का हिस्सा था, जिसे मथाई ने मद्रास से दिल्ली में रहने वाले एक वकील मित्र के माध्यम से भेजा था। हालांकि, मथाई के प्रकाशक नरेंद्र कुमार, जो उस समय विकास पब्लिशिंग से जुड़े थे, इस अध्याय को प्रकाशित करने के इच्छुक नहीं थे और उन्होंने इसे वापस कर दिया था।
‘शी’ नामक पुस्तक में मथाई के इंदिरा गांधी के साथ एक दशक से अधिक समय तक चले अंतरंग संबंध के कई सनसनीखेज विवरण शामिल हैं। मथाई के दावों की

पुष्टि करने या उन्हें कल्पना मात्र बताकर खारिज करने के लिए बहुत कम सबूत मौजूद हैं।
1981 में, जब मद्रास में 72 वर्ष की आयु में मथाई की दिल का दौरा पड़ने से मृत्यु हो गई, तो न्यूयॉर्क टाइम्स ने उन्हें 'नेहरू युग के दौरान सबसे शक्तिशाली भारतीय अधिकारियों में से एक' कहा।
मथाई, जिसने निजी सहायकों के लिए निर्धारित हर सीमा को पार कर दिया था, का अंत शांतिपूर्ण रहा। सभी इतने भाग्यशाली नहीं होते।
1993 में, प्रधानमंत्री पी.वी. नरसिम्हा राव की अल्पमत सरकार ने सत्ता पर काबिज रहने के लिए संघर्ष करते हुए संसद में समर्थन जुटाने के लिए हर संभव रणनीति अपनाई। इन राजनीतिक दांव-पेचों में विपक्षी सदस्यों को भारी रिश्वत देना भी शामिल था, जो रिश्वत लेने को तैयार थे। क्षेत्रीय पार्टी झारखंड मुक्ति मोर्चा (जेएमएम) के चार सांसदों ने सरकार के पक्ष में मतदान करने के लिए नकदी के बंडल लिए।
जैसे ही सांसदों की संपत्ति की खबर फैलने लगी, उनके खेमे के कई लोग अपने हिस्से के लिए सौदेबाजी करने लगे। इनमें जेएमएम प्रमुख शिबू सोरेन के निजी सचिव शशि नाथ झा भी शामिल थे। अगली गर्मियों तक झा गायब हो गए। वर्षों की जांच के बाद, सीबीआई ने 1998 में रांची के पास एक गांव से उनके अवशेष बरामद किए और शिबू सोरेन समेत अन्य लोगों पर झा की हत्या का आरोप लगाया। सहायक के मन में प्रतिशोध, यहाँ तक कि मृत्यु का भय भी व्याप्त है। अपने शोध के दौरान, मेरी मुलाकात एक ऐसे बुजुर्ग व्यक्ति से हुई जो कई दशकों तक देश के एक वरिष्ठतम सांसद के निजी सहायक रहे थे। अनगिनत कप चाय पीने के बाद, उन्होंने अपने मन की बात कही। हम दोनों की मातृभाषा मलयालम होने से भी काफी मदद मिली।
उन्होंने मुझे रिश्वतखोरी के एक दौर के बारे में बताया – वह नहीं जिसके कारण झा की हत्या हुई – जो नई दिल्ली में एक और अल्पमत सरकार के अस्तित्व को बनाए रखने के लिए चल रही थी। एक शाम, सरकारी एजेंट नकदी से भरा एक बड़ा थैला लेकर सांसद के आधिकारिक आवास पर पहुँचे। आगंतुकों के जाने के बाद, सांसद और हमारे कथावाचक ने गेट बंद कर दिया, पुराने सफेद मकान के सभी दरवाजे और खिड़कियाँ बंद कर दीं। उन्होंने घर की टाइल वाली फर्श तोड़ दी और नीचे की जमीन खोद दी। उन्होंने याद करते हुए बताया, 'हमने थैले को एक गड्ढे में रखा, उस पर रेत फैलाई और सीमेंट से भर दिया।' सीमेंटिंग की

अनाड़ी कारीगरी को छिपाने के लिए, उन्होंने उस पर एक पुराना कालीन बिछा दिया।
संसद में विश्वास मत जीतने के बाद जब नई सरकार सत्ता में आई और राजनीतिक माहौल शांत हुआ, तो बेडरूम की ज़मीन फिर से खोदी गई। नकदी से भरा बैग सांसद के गृह नगर तक सड़क मार्ग से ले जाया गया, जो नई दिल्ली से सैकड़ों किलोमीटर दूर था। इस दौरान सांसद स्वयं और उनके सुरक्षा गार्ड उनके साथ थे। उस पैसे से शराब बनाने की भट्टी का निर्माण किया गया।
मैंने पूछा, 'अब आप सेवानिवृत्त हो चुके हैं, उस सारी अराजकता से बहुत दूर। आप मुझे अपने सभी अनुभवों के बारे में लिखित रूप में क्यों नहीं बताते?' उन्होंने कहा, 'मैं बूढ़ा हो गया हूं। मैं शांतिपूर्ण मृत्यु चाहता हूं।'

3

हथियार और बिचौलिए

नवंबर 2008 में, तेल अवीव के बाहरी इलाके में स्थित बेन गुरियन अंतरराष्ट्रीय हवाई अड्डे पर एक शक्तिशाली भारतीय रक्षा प्रतिनिधिमंडल उतरा। रक्षा मंत्रालय के सबसे वरिष्ठ सिविल सेवक, रक्षा सचिव विजय सिंह, प्रतिनिधिमंडल का नेतृत्व कर रहे थे, और इसके सदस्यों में भावी वायु सेना प्रमुख, एयर मार्शल एन.ए.के. ब्राउन भी शामिल थे। प्रतिनिधिमंडल पूर्व-निर्धारित समझौतों की शर्तों की समीक्षा करने और सहयोग के नए अवसरों पर चर्चा करने के लिए इज़राइल आया था। उनके ध्यान में भारतीय वायु सेना के लिए मध्यम दूरी की सतह से हवा में मार करने वाली मिसाइलों (एमआर-एसएएम) के एक नए परिवार को संयुक्त रूप से विकसित करने का प्रस्ताव था, जो भारतीय नौसेना के लिए पहले से ही विकसित की जा रही बराक-8 मिसाइल प्रणाली पर आधारित था।
इज़राइल के रक्षा मंत्रालय के वरिष्ठ अधिकारियों के एक समूह ने प्रतिनिधिमंडल को तुरंत अपने साथ ले लिया। यह गर्मजोशी भरा स्वागत 1992 में दोनों पक्षों के बीच औपचारिक राजनयिक संपर्क स्थापित होने के बाद से भारत-इज़राइल संबंधों में आई अभूतपूर्व मजबूती का प्रतीक था। हालांकि भारत ने 1950 में इज़राइल को मान्यता दे दी थी, लेकिन नई दिल्ली सतर्क थी। सैद्धांतिक रूप से, भारत एक धार्मिक राज्य के खिलाफ था, मुख्य रूप से 1947 के विभाजन के अपने अनुभव के कारण, और अपनी बड़ी मुस्लिम आबादी की भावनाओं को लेकर भी चिंताएं थीं। महात्मा गांधी सहित भारतीय, फिलिस्तीनी मुद्दे के प्रति सहानुभूति रखते थे - अपवाद केवल वे हिंदू कट्टरपंथी थे जो एक यहूदी राज्य के निर्माण का पुरजोर समर्थन करते थे।
हाल के दशकों में, भारत-इजराइल संबंधों को भावनात्मक राजनीति के बजाय व्यावसायिक हितों ने ही दिशा दी है। रक्षा प्रतिनिधिमंडल की यह यात्रा इजराइली रक्षा कंपनियों के लिए बेहद महत्वपूर्ण थी, जिनका भविष्य भारतीय ऑर्डरों पर काफी हद तक निर्भर था। इक्कीसवीं सदी के उत्तरार्ध तक दुनिया का सबसे बड़ा सैन्य उपकरण आयातक बन चुका भारतीय सैन्य बल, इजराइल की कुल विदेशी सैन्य बिक्री का लगभग 50 प्रतिशत हिस्सा है। भारत ने 1999 से

इजराइल की रक्षा और अंतरिक्ष कंपनियों को 60,000 करोड़ रुपये से अधिक के ऑर्डर दिए हैं, जब इजराइल ने कारगिल युद्ध में भारत की तेजी से और चुपचाप सहायता की थी।
प्रतिनिधिमंडल को शहर के केंद्र तक ले जाया गया और उन्होंने एक आलीशान होटल में चेक-इन किया। प्रतिनिधिमंडल के एक अधिकारी ने मुझे बताया कि उन्होंने होटल के कमरे में स्टडी टेबल पर रखी ब्रीफिंग फ़ोल्डर उठाई और उसे पलटना शुरू किया। कई कागजों के बीच एक सफेद लिफाफा था जिसमें 100 डॉलर के नोटों का एक बंडल था, जो आसानी से कई हजार डॉलर के बराबर था।
‘यह क्या है?’, उसने अपने संपर्क अधिकारी से पूछा, जिसे इजरायली सरकार द्वारा नियुक्त किया गया था।
‘सर, आपके स्थानीय खर्चों के लिए,’ उसने बिना रुके जवाब दिया।
मेरे संपर्क सूत्र, जो अपनी ईमानदारी के लिए जाने जाते हैं, ने मुझे बताया कि उन्होंने लिफाफा तुरंत संपर्क अधिकारी को लौटा दिया था। कुछ महीनों बाद, जब हम नई दिल्ली के भव्य साउथ ब्लॉक परिसर में उनके कार्यालय में बैठे थे, जहाँ प्रधानमंत्री, रक्षा और विदेश मंत्रालयों के कार्यालय स्थित हैं, तो उन्होंने याद करते हुए कहा, ‘पूरी यात्रा के दौरान किसी ने भी लिफाफे के बारे में बात नहीं की। मुझे दूसरों से यह पूछने का मन नहीं हुआ कि उन्होंने अपने लिफाफों का क्या किया।’ वैसे भी, भारतीय रक्षा क्षेत्र के मानकों के अनुसार कुछ हज़ार डॉलर कोई बड़ी रकम नहीं थी।
हालांकि मैं उस अधिकारी को लंबे समय से जानता था, लेकिन अब हमारी मुलाकात कुछ दिन पहले भेजे गए मेरे सवालों पर चर्चा करने के लिए हुई थी। मैं उनसे यह जानना चाहता था कि डॉ. मनमोहन सिंह की सरकार ने हवाई घुसपैठ से बचाव के लिए एमआर-एसएएम के संयुक्त विकास हेतु लगभग 10,000 करोड़ रुपये के सौदे पर इतनी जल्दबाजी में हस्ताक्षर क्यों किए। यह उन व्यापारिक सौदों में से एक था जिन पर प्रतिनिधिमंडल ने कुछ महीने पहले इज़राइल में चर्चा की थी। इस सौदे में 6 प्रतिशत का असामान्य 'व्यापार शुल्क' और कई अन्य अनुचित शर्तें शामिल थीं, और यह सौदा 2009 के भारतीय चुनावों की घोषणा से कुछ ही दिन पहले संपन्न हुआ था।
मुझे औपचारिक स्पष्टीकरण देने के शुरुआती प्रयासों के बाद, उन्होंने अंततः स्वीकार किया कि रक्षा सौदे कितने जटिल होते हैं और भ्रष्टाचार कितना व्यापक है। उन्होंने कहा, ‘यहाँ आप केवल इतना ही कर सकते हैं कि आप

और आपकी फाइल दोनों बेदाग हों। आप बाकी किसी भी चीज़ को नियंत्रित नहीं कर सकते।’ तभी उन्होंने मुझे एमआर-एसएएम सौदे और अन्य परियोजनाओं को अंतिम रूप देने के लिए इज़राइल की अपनी यात्रा के बारे में बताया, जहाँ उन्हें अत्यधिक उदार नकद ‘भत्ता’ की पेशकश की गई थी। जब मैं जाने के लिए खड़ा हुआ, तो अधिकारी ने दो अनुरोध किए: उन्हें किसी भी विवाद में न घसीटें और, इससे भी महत्वपूर्ण, ‘राष्ट्रीय हितों’ को न भूलें।
नई दिल्ली के सत्ता के गलियारों में राष्ट्रीय हित की कई तरह से व्याख्या की जा सकती है। इसका अर्थ सांप्रदायिक हितों द्वारा समर्थित मुद्दे हो सकते हैं, या भ्रष्टाचारियों द्वारा अपने अपराधों को छिपाने के लिए अपनाए गए उच्च नैतिक दावे। राष्ट्रीय हित पारदर्शिता लाने की कोशिश करने वालों पर औपनिवेशिक काल के कठोर नियम लागू करने का बहाना भी हो सकता है।
आधुनिक भारत में, राष्ट्रीय हितों की रक्षा वे पुरुष और महिलाएं करते हैं जो पर्दे के पीछे रहकर काम करते हैं, यह सुनिश्चित करते हुए कि विभिन्न क्षेत्रों में अरबों डॉलर के सौदे पटरी से न उतरें और भारतीय अर्थव्यवस्था निरंतर खर्च करती रहे और विस्तार करती रहे। किसी सौदे को निष्पक्ष रूप से संपन्न कराना एक कठिन काम है और भ्रष्टाचार से भरे सौदे को सुलझाना तो और भी जटिल है। इसका अर्थ यह है कि रक्षा, निर्माण, राजमार्ग, बिजली, तेल और प्राकृतिक गैस जैसे क्षेत्रों में काम करने वाली सबसे पारदर्शी पश्चिमी कंपनियों को भी ऐसे लोगों को नियुक्त करना पड़ता है जिन्हें प्रणालियों की गहरी समझ हो। ये वे लोग हैं जो कंपनी को आकर्षक अनुबंध दिलाने के लिए अक्सर अवैध हथकंडे अपनाते हैं।
पेशेवर बिचौलिए बड़े-बड़े ठेकों का प्रबंधन और हेरफेर करते हैं, बड़े-बड़े दफ्तर चलाते हैं, व्यवस्था को चलाने के लिए सेवानिवृत्त सरकारी अधिकारियों और ऐसे ही अन्य विशेषज्ञों को नियुक्त करते हैं, और न सिर्फ भारतीय नेताओं बल्कि दुनिया भर के कई प्रमुख लोगों से उनके अच्छे संबंध होते हैं। उनके दफ्तर सिर्फ भारत में ही नहीं, बल्कि दुनिया भर के शहरों में हैं। ये वे लोग हैं जिनके पास अपने अपराधों को छिपाने के लिए परिष्कृत वित्तीय रणनीतियाँ हैं, और जो दुनिया के कई कर आश्रय स्थलों में सबसे बड़े खाताधारकों में शामिल हो सकते हैं। वे भारतीय व्यवस्था के सबसे कम ज्ञात खिलाड़ी भी हैं - और सबसे महत्वपूर्ण भी। वे कई भारतीय राजनीतिक दलों को काला धन देकर उन्हें बनाए रखने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं, फिर भी

उनके दानदाताओं की सूची में उनका नाम नहीं होता। यहां तक कि अगर उनके खिलाफ आपराधिक मामले दर्ज भी हो जाते हैं, तो सबसे विश्वसनीय सबूत अंततः गायब हो जाते हैं।
ये गली-मोहल्ले के राजनीतिक दलाल या अपने मालिकों की रखवाली करने वाले टाइपिस्ट नहीं हैं, बल्कि वे पुरुष (और कभी-कभी महिलाएं भी) हैं जो अरबों डॉलर के सौदे करवा सकते हैं, फाइलों और खरीद-फरोख्त में हेरफेर कर सकते हैं, सरकारों को सत्ता से हटा सकते हैं और वैश्विक जनमत को प्रभावित कर सकते हैं। भारत में सबसे शक्तिशाली बिचौलिए कभी-कभी देश के लोकतंत्र का भविष्य ही तय कर देते हैं।
उच्चतम स्तर पर, बिचौलिए किसी कंपनी की बाज़ार में संभावनाओं को बना या बिगाड़ सकते हैं। अनुबंध प्रस्ताव तैयार होते ही बिचौलिए का प्रभाव स्पष्ट दिखाई देने लगता है। बोली में उल्लिखित मापदंडों को अक्सर अपने ग्राहक को योग्य बनाने के लिए बदला जाता है; मुक़दमे इस तरह से संचालित किए जाते हैं कि उनका ग्राहक विजेताओं की सूची में शामिल हो जाए; बातचीत को चतुराई से इस तरह मोड़ा जाता है कि ग्राहक के लिए सर्वोत्तम संभव स्थिति बन जाए; और अंतिम मापदंड यह सुनिश्चित करते हैं कि राजनीतिक निर्णय सही दिशा में हों। चयन प्रक्रिया में शामिल सभी लोग एजेंट के वेतनभोगी नहीं होते। हालांकि, हर स्तर पर, कुछ प्रमुख लोग रिश्वत लेते हैं। जो लोग उनके इशारों पर काम करते हैं, उन्हें भारी इनाम मिलते हैं - उनके बच्चों के लिए प्रसिद्ध पश्चिमी विश्वविद्यालयों में छात्रवृत्ति, विदेशी स्थानों पर बच्चों के लिए खेल प्रशिक्षण शिविर, पुर्तगाल में एक विला, कर आश्रय स्थल में एक गुप्त खाते में लाखों की रकम, और भी बहुत कुछ।
इन शक्तिशाली बिचौलियों को समझने के लिए, मुक्त बाज़ार में बिचौलियों के बारे में बनी पूर्वकल्पित धारणाओं को त्यागना आवश्यक है। ये केवल ऐसे व्यक्ति नहीं हैं जो मात्रात्मक कार्य करते हैं, जैसे कि किसी ग्राहक को बाज़ार को समझने या सर्वोत्तम साझेदारों की पहचान करने में सहायता करना, प्रौद्योगिकी के कुशल हस्तांतरण में मदद करना, बौद्धिक संपदाओं की रक्षा करना, कानूनी आवश्यकताओं को पूरा करना, या प्रणाली को सुचारू रूप से चलाने में सहायता करना। भारत में, यह पहलू बिचौलिए के कार्य का एक छोटा सा हिस्सा है - मुख्य कार्य इससे कहीं आगे और अप्रत्यक्ष रूप से होता है। उसे यह सुनिश्चित करना होता है कि प्रणाली सुचारू रूप से चलती रहे, कोई अनुबंध

रद्द न हो, निर्णय समय पर लिए जाएं और किसी विशेष कंपनी को अनुबंध प्राप्त हो।
संक्षेप में, उसे यह सुनिश्चित करना होगा कि सरकार उसी भ्रष्ट और घिनौने तरीके से चलती रहे जो अब आम बात हो गई है। यह कहना गलत नहीं होगा कि ये शक्तिशाली बिचौलिए यह सुनिश्चित करने में अहम भूमिका निभाते हैं कि भारतीय सरकार ठप्प न पड़े, उसके सशस्त्र बलों का नियमित आधुनिकीकरण हो, राजमार्गों का निर्माण हो और अर्थव्यवस्था स्थिर होने के बजाय मजबूत गति से बढ़ती रहे। एक अजीब तरीके से, ये बिचौलिए ही अक्षम और गतिहीन सरकार का समाधान हैं।
किसी भी आधुनिक अर्थव्यवस्था में बिचौलिए की भूमिका वास्तव में वैध होती है। रक्षा उद्योग इसका एक बेहतरीन उदाहरण है, जिससे यह समझा जा सकता है कि भारतीय बिचौलिए अन्य अर्थव्यवस्थाओं के बिचौलियों से किस प्रकार भिन्न होते हैं। इस क्षेत्र में, बिचौलिए आमतौर पर वैध और महत्वपूर्ण सेवाएं प्रदान करते हैं, मुख्यतः उन विदेशी कंपनियों को जिन्हें मेजबान देश की खरीद प्रक्रिया में कठिनाई होती है। उदाहरण के लिए, वे किसी छोटी कंपनी की सहायता कर सकते हैं जो छोटे पैमाने की खरीद करने वाले देश में अपना कार्यालय खोलने का खर्च वहन नहीं कर सकती। अधिकांश देशों में, ऑफसेट (खरीददार देश में अनुबंध का एक महत्वपूर्ण हिस्सा खरीदने या खर्च करने की शर्त) रक्षा अनुबंधों का अभिन्न अंग है, और स्थानीय बिचौलिए इन्हें लागू करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। इन बिचौलियों को वैध शुल्क का भुगतान किया जाता है, और अक्सर उनके शुल्क का एक हिस्सा अनुबंध में ही शामिल होता है, जिससे वे ऑफसेट या मेंटेनेंस पार्टनर बन जाते हैं। अत्यधिक प्रतिस्पर्धी अर्थव्यवस्था में एक और महत्वपूर्ण कार्य यह सुनिश्चित करना है कि किसी कंपनी के विचार, जो हमेशा गलत नहीं होते, निर्णय लेने वालों तक पहुँचें और समझे जाएँ। इस कार्य के लिए, संयुक्त राज्य अमेरिका में एक फलता-फूलता लॉबिंग उद्योग है, और कई अर्थव्यवस्थाएँ आधिकारिक तौर पर सरकार के साथ लॉबिंग की अनुमति देती हैं। उनका काम रिश्वत देना या हेरफेर करना नहीं है, कम से कम आधिकारिक तौर पर तो नहीं।
भारतीय अर्थव्यवस्था में, मध्यस्थ निर्णय लेने की प्रक्रिया के गुप्त कक्षों में अपनी भूमिका निभाते हैं। वे रिश्वत देते हैं, जिसे भी भुगतान करना होता है उसे भुगतान करते हैं, जरूरत पड़ने पर किसी को भी धमकाते हैं,

और यह सुनिश्चित करते हैं कि उनके ग्राहकों को अनुबंध प्रक्रिया की शुरुआत से ही अंदरूनी जानकारी मिले। वे अनुचित और अन्यायपूर्ण लाभ प्रदान करते हैं। भारत में औपचारिक रूप से मान्यता प्राप्त कोई लॉबिंग उद्योग नहीं है, न ही सरकारी अनुबंधों में एजेंटों की अनुमति है। लेकिन प्रभावशाली मध्यस्थ किसी भी बड़े सरकारी अनुबंध का एक अनिवार्य हिस्सा हैं।
भारत के कुछ सबसे अमीर व्यवसायी बिचौलियों की भूमिका निभाकर बड़ा मुनाफा कमाते हैं। किसी विदेशी राजनयिक या अधिकारी द्वारा किसी विशेष उद्योगपति के बारे में उनसे पूछताछ करना आम बात है – संभवतः, उन्होंने किसी बड़े सौदे को पूरा करने में मदद करने के लिए अपनी सेवाएं दी होंगी। भारतीय निर्णय लेने के शीर्ष स्तरों पर, यह पता लगाना मुश्किल है कि कौन महज़ बिचौलिया है और कौन महज़ उद्योगपति।
खनन उद्योग पर विचार करें। खनन क्षेत्र में कोई भी कंपनी तब तक सफल नहीं हो सकती जब तक वह स्थानीय और राष्ट्रीय राजनीति में सरकारों और नियामक निकायों सहित सभी हितधारकों को नियंत्रित न कर ले। उज्ज्वल कुमार उपाध्याय (जिन्हें उपाध्याय भी लिखा जाता है) कोलकाता में रहने वाले एक कम प्रसिद्ध व्यवसायी हैं। लेकिन एक समय में, उन्होंने अपनी कंपनी ईएमटीए (मूल रूप से पूर्वी खनिज एवं व्यापार एजेंसी) के माध्यम से 1.7 अरब टन कोयले के भंडार पर नियंत्रण रखा था, जो भारत में कोयले का तीसरा सबसे बड़ा भंडार है। भारत में कोयला खनन पर उनका प्रभुत्व किस प्रकार स्थापित हुआ, यह स्थानीय लोककथाओं का हिस्सा है। उपाध्याय ने राज्य सरकारों द्वारा संचालित खनन कंपनियों के साथ संयुक्त उद्यम स्थापित किए और अपनी कंपनी द्वारा संचालित अधिकांश क्षेत्रों में एकाधिकार प्राप्त कर लिया। एक वैश्विक खनन कंपनी के भारतीय सीईओ ने एक बार एक रुके हुए बड़े प्रोजेक्ट के संबंध में उपाध्याय से मुलाकात की। सीईओ ने याद करते हुए कहा, 'वे बहुत सौहार्दपूर्ण थे, लेकिन उन्होंने यह भी स्पष्ट कर दिया कि हम सभी हितधारकों को संतुष्ट किए बिना खदान को चालू नहीं कर पाएंगे।' उपाध्याय एक परिचित की सलाह पर सीईओ के कार्यालय गए थे। उन्होंने सीईओ को एक प्रस्ताव दिया: अनुबंध अपने हाथ में लें और उसे सौंप दें, और इसके बदले में उपाध्याय वैश्विक दिग्गज कंपनी को एक निश्चित लाभ का भुगतान करेगा।

उपाध्याय खदान चलाने के लिए इतने उत्सुक क्यों थे, और लाइसेंस धारक को निश्चित लाभ देने का उन्हें इतना भरोसा कैसे था? शायद इसके कोई स्पष्ट जवाब न हों। हो सकता है कि उन्हें भारतीय प्रणाली को संभालने और सुचारू रूप से व्यवसाय चलाने की अपनी क्षमता पर पूरा भरोसा रहा हो। खनन क्षेत्र के कुछ जानकार भारत के भीतर और बांग्लादेश तथा नेपाल को कोयले की तस्करी और मुनाफ़ा बढ़ाने के लिए कोयले की गुणवत्ता में जानबूझकर की जाने वाली गिरावट की ओर इशारा करते हैं। इसके अलावा भी कई तरह की हेराफेरी होती है जिससे अप्रत्याशित लाभ होता है। विदा लेते समय उपाध्याय ने सीईओ से कहा कि उन्हें केंद्र सरकार के शीर्ष स्तर तक समर्थन मिल सकता है। शायद यह एक शेखी थी, लेकिन भारतीय अर्थव्यवस्था में उपाध्याय जैसे लोगों के प्रभाव को नकारा नहीं जा सकता।
फरवरी 2009 की एक दोपहर जब मुझे एक यूरोपीय सैन्य संघ के वरिष्ठ अधिकारी से मिलने के लिए बुलाया गया, तो वे पहले से ही थोड़ी शराब के नशे में थे और भारत की भीषण गर्मी से थोड़े परेशान थे। हम बेंगलुरु (अब बेंगलुरु) में आयोजित होने वाली द्विवार्षिक विमानन प्रदर्शनी, एयरो इंडिया में दुनिया के अग्रणी लड़ाकू विमानों के गर्जनापूर्ण टेक-ऑफ और लैंडिंग की आवाज़ से कुछ ही दूरी पर थे। सभी प्रमुख विमान निर्माता कंपनियां भारत को प्रभावित करने के लिए अपने नवीनतम मॉडल प्रदर्शित करने के लिए मौजूद थीं, जिसने भारतीय वायु सेना के लिए 126 लड़ाकू विमान खरीदने के लिए 60,000 करोड़ रुपये का अनुबंध जारी किया था। दुनिया के सबसे बेहतरीन और सबसे महंगे लड़ाकू विमान - संयुक्त राज्य अमेरिका के एफ-18 और एफ-16, रूस के मिग-35 जेट और एक यूरोपीय संघ द्वारा निर्मित यूरो लड़ाकू विमान - पूरी ताकत से टेक-ऑफ और लैंडिंग कर रहे थे। कई व्यावसायिक और परिवहन जेट भी संभावित खरीदारों का ध्यान आकर्षित करने के लिए होड़ कर रहे थे। एयरो इंडिया दुनिया के सबसे बड़े विमानन शो में से एक बन गया है, जिसका श्रेय देश की सैन्य सामग्री के सबसे बड़े आयातक के रूप में स्थिति और अरबपतियों के बढ़ते समूह को जाता है जो आकाश में निजी परिवहन को प्राथमिकता देते हैं। यूरोपीय अधिकारी मुझे काफी समय से जानते थे और उनका व्यवहार सहज और खुला था। वे भारत में लगभग एक दशक से कोई बड़ा ठेका न मिलने से स्पष्ट रूप से परेशान थे। उन्होंने कहा, 'मैं इसके लिए चौधरी को पूरी तरह दोषी मानता हूँ।' सुधीर चौधरी के साथ उनका लंबा संबंध इसलिए कड़वाहट से समाप्त हो गया

क्योंकि कंपनी के एक अभिमानी वरिष्ठ अधिकारी को भारत के सबसे शक्तिशाली हथियार व्यापारी के तौर-तरीके पसंद नहीं आए थे। यूरोपीय अधिकारी पहले नहीं थे, और निश्चित रूप से आखिरी भी नहीं थे, जिन्होंने चौधरी के प्रति अपने डर और घृणा को व्यक्त किया।
लेकिन चूंकि वे खुले तौर पर पर्दे के पीछे की बातचीत में शामिल नहीं हो सकते, इसलिए चौधरी जैसे प्रभावशाली दलाल महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। भारत में काम करने वाली लगभग हर विदेशी कंपनी किसी न किसी रूप में बिचौलियों की मदद लेती है। इनमें से कुछ कंपनियां, अपने देश में विरोध और सजा के डर से, बिचौलियों की भूमिका निभाने से बचती हैं। इसके बजाय वे महंगे सलाहकारों की सेवाएं लेती हैं, या रिश्वतखोरी को कई स्तरों पर, ट्रस्टों और टैक्स हेवन के माध्यम से अंजाम देती हैं।
जिन देशों में भ्रष्टाचार-विरोधी कानून अपेक्षाकृत कम सख्त हैं, वहां की कंपनियां अपारदर्शी होती हैं, क्योंकि वे अपनी-अपनी सरकारों द्वारा अभियोजन के डर के बिना अपना कारोबार चला सकती हैं। यही कारण है कि अक्सर बड़ी सरकारी परियोजनाओं को हासिल करने वाली विदेशी कंपनियां भी इन्हीं कंपनियों में शामिल होती हैं।
भारतीय अर्थव्यवस्था के शीर्ष स्तर पर काम करने वाले बिचौलियों का अपने- अपने क्षेत्रों पर पूर्ण नियंत्रण न सही, लेकिन एकाधिकार अवश्य है। उनके पास मौजूद विशाल संसाधन उन्हें सरकारों और राजनीतिक दलों को समर्थन देने की शक्ति प्रदान करते हैं। जो वरिष्ठ सरकारी अधिकारी भ्रष्ट नहीं हैं, वे कहते हैं कि वे केवल इतना ही कर सकते हैं कि व्यक्तिगत रूप से बेदाग रहें। एक विदेशी रक्षा कंपनी के सीईओ ने मुझे बताया कि कुछ साल पहले उन्हें रक्षा मंत्री से मिलने का समय पाने के लिए दस लाख अमेरिकी डॉलर खर्च करने पड़े थे।
अर्थव्यवस्था का हर पहलू – और केवल रक्षा क्षेत्र ही नहीं – जहाँ सरकार की भूमिका होती है, उच्च स्तरीय भ्रष्टाचार के चंगुल में जकड़ा हुआ है। हालाँकि, चौधरी जैसे शक्तिशाली बिचौलियों की शक्ति, प्रभाव और विकास को समझने के हमारे प्रयास में रक्षा क्षेत्र सबसे अधिक उपयोगी साबित होता है।
आइए भारत के सैन्य आधुनिकीकरण के संक्षिप्त इतिहास से शुरुआत करें।

आजादी के बाद से भारत रक्षा उपकरणों के लिए आयात पर अत्यधिक निर्भर रहा है, और शुरुआती दशकों में, 1990 के दशक के आरंभ में सोवियत संघ के पतन तक, अधिकांश खरीद सोवियत संघ से ही होती थी। अगले दशक में, भारत ने बहुत कम खरीद की। फिर 1999 में पाकिस्तान के साथ कारगिल संघर्ष ने स्थिति को पूरी तरह बदल दिया। भारत ने वैश्विक हथियार बाजार में इतनी आक्रामक वापसी की कि 2012 तक वह दुनिया का सबसे बड़ा हथियार आयातक बन गया। हथियार डीलरों का कारोबार फलता-फूलता रहा, उन्होंने राजनीतिक नेताओं, वरिष्ठ सैन्य और नागरिक अधिकारियों, साथ ही व्यवस्था के अन्य हितधारकों के साथ घनिष्ठ संबंध बनाए। इस बात को लेकर काफी अटकलें लगाई गई हैं कि वे कहाँ मिलते हैं, उन्हें कैसे लाभ होता है और इतनी बड़ी रिश्वतें कैसे इधर-उधर की जाती हैं। आज तक, कोई भी भारतीय जांच एजेंसी किसी बड़े हथियार डीलर या वरिष्ठ अधिकारी को रिश्वत देने या लेने के आरोप में दोषी साबित नहीं कर पाई है। रक्षा क्षेत्र में कई बड़े नाम सार्वजनिक घोटालों में घसीटे गए हैं, लेकिन किसी को भी सजा नहीं मिली है।
यह उस देश में आश्चर्यजनक है जहाँ एक रक्षा घोटाले ने 1980 के दशक में राजनीतिक परिदृश्य को नाटकीय रूप से बदल दिया था। 16 अप्रैल 1987 को, एक स्वीडिश समाचार पत्र ने एक खबर प्रकाशित की जिसमें आरोप लगाया गया था कि तोपखाना निर्माता बोफोर्स ने पिछले वर्ष भारतीय सेना से 410 155-मिमी कैलिबर हॉवित्जर तोपों की आपूर्ति के लिए 1,500 करोड़ रुपये का अनुबंध हासिल करने के लिए स्वीडन और भारत सहित कई देशों के लोगों को रिश्वत दी थी। तत्कालीन प्रधानमंत्री राजीव गांधी के करीबी लोगों पर रिश्वत लेने का आरोप लगा था। इसके बाद हुए भारी राजनीतिक उथल-पुथल में, कांग्रेस पार्टी 1989 के चुनाव में भारी अंतर से हार गई। हालांकि, इसका विदेशी सैन्य सामग्री के लिए भारत की भारी लालसा पर कोई स्पष्ट प्रभाव नहीं पड़ा है। 2012 तक, भारत ने चीन को पीछे छोड़ते हुए हथियारों का विश्व का सबसे बड़ा आयातक देश बन गया था, क्योंकि चीन ने आत्मनिर्भरता की ओर तेज़ी से कदम बढ़ाया था। स्टॉकहोम इंटरनेशनल पीस रिसर्च इंस्टीट्यूट (एसआईपीआरआई) - जो उपलब्ध सबसे विश्वसनीय आकलन डेटा है - के अनुसार, पिछले पांच वर्षों की तुलना में 2009-13 के दौरान अंतरराष्ट्रीय हथियार आयात में भारत की हिस्सेदारी 7 प्रतिशत से बढ़कर 14 प्रतिशत हो गई। अनौपचारिक अनुमानों के

अनुसार, भारत इस दशक में ही हथियारों के आयात पर लगभग 6,70,000 करोड़ रुपये खर्च कर सकता है।
देश की कुल आयुध आवश्यकताओं में स्वदेशी सैन्य उत्पादन का योगदान मात्र 30 प्रतिशत है। भारतीय सरकार का रक्षा अनुसंधान एवं विकास संगठन (डीआरडीओ) राजनीतिक और नौकरशाही वर्ग द्वारा लगातार प्रशंसा किए जाने के बावजूद एक बड़ी विफलता साबित हुआ है। मिसाइलों को छोड़कर यह किसी भी प्रमुख सैन्य मंच पर सफलतापूर्वक महारत हासिल नहीं कर पाया है। भारत के पास स्वदेशी युद्धक टैंक या लड़ाकू विमान नहीं है, जो दोनों ही उसके सैन्य अभियानों के आधार स्तंभ हैं।
यहां सैन्य विनिर्माण में नीरस कारखाने हैं जो कच्चे उत्पाद तैयार करते हैं और मूल्य श्रृंखला के सबसे निचले स्तर पर काम करते हैं। उनके द्वारा निर्मित कुछ परिष्कृत प्रणालियाँ विदेशों से पुर्जे आयात करके, उन्हें सिस्टम में जोड़कर और उन पर अपना लोगो लगाकर बनाई जाती हैं। कुछ निजी कंपनियाँ अब हथियार निर्माण उद्योग में छोटे-छोटे कदम उठा रही हैं, लेकिन उनकी प्रभावशीलता का आकलन करना अभी जल्दबाजी होगी।
भारत के स्वदेशीकरण के प्रयासों की घोर विफलता, साथ ही पाकिस्तान के साथ कई संघर्षों, चीन के साथ एक संघर्ष और अनेक विद्रोहों का सामना करने के कारण, देश की सेना अंतरराष्ट्रीय हथियार बाजार में अत्यधिक मांग वाली खरीदार बन गई है। अमेरिका, इज़राइल और रूस सहित यूरोप की कई कंपनियां अपने मुनाफे को बनाए रखने के लिए भारतीय ऑर्डरों पर निर्भर हो गई हैं। बदले में, इन विदेशी कंपनियों को खरीद प्रक्रिया को सुचारू रूप से चलाने और रिश्वतखोरी के आरोपों से बचने के लिए सौदेबाजों की आवश्यकता होती है। रक्षा मंत्रालय के गलियारों में, अधिकांश अधिकारी चौधरी उपनाम का सम्मानपूर्वक उल्लेख करते हैं। एक पूर्व रक्षा सचिव ने बताया कि एक बार किसी ने उन्हें एक पार्टी में 'श्री चौधरी' से मिलवाना चाहा था। उन्होंने कहा, 'मुझे नहीं पता था कि वह कौन से चौधरी हैं, लेकिन एक पल के लिए मैं शर्मिंदा हो गया था।' हालांकि चौधरी एक आम उपनाम है, लेकिन असामान्य रूप से लिखे गए चौधरी भाई ईमानदार अधिकारी हैं।
चौधरी का हाथ न सिर्फ भारत में, बल्कि चीन, इंडोनेशिया, इज़राइल, कई यूरोपीय देशों और कुछ अफ्रीकी देशों में भी हथियारों की बिक्री में पाया

जा सकता है। इज़राइल में, सरकार ने अदालती हस्तक्षेप के ज़रिए पत्रकारों को उनके बारे में लिखने से रोका है।
उनकी प्रशंसा और घृणा दोनों ही उनकी सौदेबाजी करने की क्षमता के लिए की जाती है, बल्कि अपने ग्राहकों के प्रतिस्पर्धियों के सौदों को विफल करने की क्षमता के लिए भी की जाती है।
दिसंबर 2007 में, जब एक यूरोपीय कंपनी भारतीय सेना को हेलीकॉप्टर की आपूर्ति के लिए एक समझौते पर हस्ताक्षर करने से कुछ ही दिन दूर थी, तब अचानक आदेश रद्द कर दिया गया। निराधार मीडिया रिपोर्टों में दावा किया गया कि इसमें एजेंट शामिल थे और तकनीकी शर्तों का उल्लंघन हुआ था। बहुत बाद में, इस सौदे से जुड़े दो वरिष्ठ अधिकारियों ने मुझसे स्वीकार किया कि इस मामले को संभालने वाले एक मध्यम स्तर के सिविल सेवक ने उन्हें धोखा देकर सौदा रद्द करवा दिया था। उनमें से एक ने कहा, 'जैसे ही उसने लिखित में यह लिख दिया कि मीडिया ने सौदे की सत्यनिष्ठा पर सवाल उठाए हैं, हममें से कोई कुछ नहीं कह सका।' 'अपनी इज्जत बचाने का सुनहरा नियम यह है कि किसी भी फैसले की सत्यनिष्ठा पर लिखित टिप्पणी पर कभी सवाल न उठाएं।'
कुछ महीनों बाद, इटली की फिनमेकानिका कंपनी ने भारत के वीवीआईपी लोगों के लिए बारह हेलीकॉप्टरों की आपूर्ति का एक आकर्षक अनुबंध हासिल कर लिया, जबकि निविदा की शर्तों में काफी विचलन था। आरोप तेजी से फैलने लगे। बाद में पता चला कि इतालवी कंपनी ने अनुबंध हासिल करने के लिए भारतीय वायु सेना के एक पूर्व प्रमुख सहित कई लोगों के नेटवर्क को करोड़ों यूरो का भुगतान किया था।
फरवरी 2013 में इतालवी अदालत में दायर दस्तावेजों से पता चला कि फिनमेकानिका के पूर्व सीईओ, जियोर्जियो ज़प्पा ने एक दिलचस्प कबूलनामा किया था। 22 मई 2012 को नेपल्स में अभियोजक कार्यालय में पूछताछ के दौरान, ज़प्पा ने कहा कि चौधरी - जो लंबे समय से भारत में उनके एजेंट थे - को हाल ही में हटा दिया गया था और उनकी जगह कम सावधान, अधिक बातूनी विदेशियों को नियुक्त किया गया था, जिन्होंने अनजाने में इस घोटाले का पर्दाफाश किया। फिनमेकानिका घोटाला कोई अलग-थलग व्यावसायिक कदाचार नहीं है। यह तो एक आम बात है।
भारत में काम करने वाले हर विदेशी अधिकारी के पास बिचौलियों से जुड़े किस्से होते हैं। एक अमेरिकी अधिकारी, जो पिछले एक दशक से भारत में काम कर

रहे हैं, ने मुझे बताया कि उन्हें अक्सर भारतीय अनुबंधों को समझने और वहां होने वाली वास्तविक घटनाओं और भ्रष्टाचार की व्यापकता को उजागर करने के बारे में एक किताब लिखने का मन करता है।
एक अन्य व्यक्ति, जो भारत में लड़ाकू विमान बनाने वाली कंपनी का प्रमुख था, ने यहाँ बिताए अपने समय के बारे में कहा: 'मैंने दुनिया भर में काम किया है, लेकिन भारत से अधिक जटिल और भ्रष्ट बाज़ार कहीं नहीं है।' देश में एक दशक बिताने के बाद भी कोई बड़ा अनुबंध हासिल करने में असफल रहने के बाद वह हमेशा के लिए देश छोड़ रहा था।
सटीक समयरेखा स्पष्ट नहीं है, लेकिन कई लोगों का मानना है कि चौधरी परिवार का रक्षा सौदों में प्रवेश 1970 के दशक में शुरू हुआ था। उनके चाचा बलजीत कपूर, जो भारतीय वायु सेना के शुरुआती लड़ाकू पायलटों में से एक थे, एक प्रभावशाली मार्गदर्शक थे। कपूर ने वायु सेना छोड़कर हिंदुस्तान एरोनॉटिक्स लिमिटेड (एचएएल) में काम करना शुरू किया, जो सैन्य विमानन में सरकारी एकाधिकार वाली कंपनी थी और रूसी लड़ाकू विमानों, फ्रांसीसी हेलीकॉप्टरों, ब्रिटिश जगुआर और भारतीय सेना द्वारा खरीदे गए अन्य विमानों का निर्माण करती थी। उस समय की मीडिया रिपोर्टों के अनुसार, वे तत्कालीन प्रधानमंत्री इंदिरा गांधी के आशीर्वाद से एचएएल के अध्यक्ष पद तक पहुंचे।
चौधरी बंधुओं - सुधीर, अमृत और राजीव - का पालन-पोषण समाजवादी भारत में हुआ, जहाँ विकास दर धीमी थी और सरकारी नियंत्रण कड़े थे। उन्होंने महसूस किया कि कंपनियों को भारत की कुख्यात नौकरशाही से निपटने में मदद करके पैसा कमाया जा सकता है। माना जाता है कि मध्यस्थ के रूप में उनका पहला सौदा एक बड़ा लड़ाकू विमान अनुबंध था, जिस पर भारतीय वायु सेना ने 1970 के दशक के उत्तरार्ध में एक यूरोपीय कंपनी के साथ हस्ताक्षर किए थे। हालांकि, इस सौदे में उनकी संलिप्तता को प्रमाणित करने वाले कोई दस्तावेज मौजूद नहीं हैं - केवल सुनी-सुनाई बातें और सौदे से जुड़े कुछ लोगों के दावे ही इस बात का प्रमाण हैं।
बड़े स्तर पर सत्ता में आने के बाद, चौधरी बंधुओं ने राजनीतिक, नौकरशाही और सैन्य स्तर पर तेजी से संपर्क स्थापित कर लिए। इंदिरा गांधी के भरोसेमंद सहयोगी रहे एक वरिष्ठ कांग्रेस नेता के साथ उनकी घनिष्ठ मित्रता जगजाहिर है। सुधीर चौधरी के आधिकारिक तौर पर ज्ञात व्यावसायिक सहयोगियों में

कर्नल आर.एस. 'पिकल' सोढ़ी शामिल हैं, जो एक प्रसिद्ध पोलो खिलाड़ी हैं और पूर्व मिस इंडिया नफीसा अली के पति हैं, जो राजनीति में सक्रिय रही हैं। सरकारी ठेकों में सौदेबाजी के लिए गोपनीयता, उदारता, स्नेह और व्यक्तित्व का दबदबा आवश्यक होता है। सुधीर और राजीव चौधरी इस मामले में एक बेहतरीन जोड़ी थे। 1980 के दशक में खूब पैसा कमाने वाले एक प्रमुख बिचौलिए ने चौधरी बंधुओं के बारे में अपनी राय साझा करते हुए बताया, जिनसे उनकी मुलाकात दिल्ली गोल्फ क्लब में कभी-कभार होती थी: 'राजीव बहुत स्नेहशील थे, लेकिन सुधीर हमेशा अलग-थलग रहते थे।'
राजीव का 1997 में निधन हो गया, लेकिन सुधीर की देखरेख में कारोबार खूब फला-फूला। उन्होंने हर विचारधारा के राजनेताओं से मेलजोल बढ़ाया, अपना प्रभाव क्षेत्र फैलाया, कानून के साथ कुछ झड़पों का सामना किया, लंदन चले गए और अन्य देशों में भी राजनीतिक रूप से प्रभावशाली बन गए।
2001 की गर्मियों तक चौधरी का शासन शांतिपूर्ण और सुकून भरा रहा, जब 'ऑपरेशन वेस्ट एंड' का भंडाफोड़ हुआ। वेब समाचार पोर्टल तहलका ने सैन्य अधिकारियों, सरकारी कर्मचारियों और राजनेताओं की गुप्त रिकॉर्डिंग प्रकाशित कीं, जिनसे पता चला कि चौधरी प्रमुख रक्षा सौदों में हेरफेर करने में शामिल थे। भाजपा के नेतृत्व वाली तत्कालीन सरकार ने हथियार डीलरों के बजाय तहलका के खिलाफ बदले की भावना से कार्रवाई शुरू कर दी। 2004 के चुनाव हारने के बाद ही इस घोटाले पर ध्यान दिया गया। 2006 और 2007 में, सीबीआई ने तहलका के खुलासों में शामिल लोगों के खिलाफ कई मामले दर्ज किए, जिनमें चौधरी के खिलाफ दो मामले भी शामिल थे। हालांकि, कांग्रेस के नेतृत्व वाली नई सरकार चौधरी को पकड़ने में कामयाब नहीं हुई।
1 फरवरी 2006 को, सीबीआई ने तत्कालीन रक्षा मंत्री जॉर्ज फर्नांडीस के नेतृत्व वाली क्षेत्रीय पार्टी समता पार्टी के राष्ट्रीय कोषाध्यक्ष आर.के. जैन और मैग्नम इंटरनेशनल ट्रेडिंग कंपनी के निदेशक सुधीर चौधरी सहित अन्य लोगों के खिलाफ प्रारंभिक जांच शुरू की। यह जांच इजरायली रक्षा ठेकेदार सोल्टम सिस्टम्स से आयातित किटों के साथ 130 मिमी फील्ड गन को 155 मिमी कैलिबर में अपग्रेड करने के लिए सेना के अनुबंध में अनियमितताओं की जांच के लिए थी। कुल अनुबंध की कीमत 208.15 करोड़ रुपये से थोड़ी अधिक थी। अप्रैल 2007 तक, यह जांच एक पूर्ण आपराधिक जांच में बदल गई।

दिसंबर 1992 में, सोल्टम ने भारतीय रक्षा मंत्रालय को फील्ड गनों को उन्नत करने का प्रस्ताव दिया था। इस उन्नयन से सेना को बोफोर्स से लाइसेंस के तहत उत्पादित गोला-बारूद को मानकीकृत करने में मदद मिलती, जिससे परिचालन लागत कम होती, तोपों की मारक क्षमता बढ़ती और मारक क्षमता में वृद्धि होती। सरकार ने अपेक्षित खुली निविदा प्रक्रिया के बिना ही प्रस्ताव की समीक्षा शुरू कर दी। सीबीआई को संदेह था कि तब से चौधरी अपना काम कर रहे थे।
सीबीआई द्वारा दर्ज की गई एफआईआर उच्च स्तरीय भ्रष्टाचार का एक दुर्लभ और विस्तृत विवरण था, जो आधिकारिक दस्तावेज़ में मिलता है। यह समझना बेहद ज़रूरी है कि चौधरी जैसे लोगों को ऐसे ठेकों में भारी कमीशन क्यों मिलता है। वे यह सुनिश्चित करते हैं कि सरकार उनके मुवक्किलों की बात माने, अनिवार्य प्रक्रियाओं को दरकिनार करें और विरोध के बावजूद ठेके को सुचारू रूप से आगे बढ़ाते रहें।
एफआईआर में कहा गया है कि सोल्टम द्वारा भेजी गई परीक्षण तोप 'अपरिक्षित और अप्रमाणित प्रोटोटाइप' थी। राजस्थान के पोखरण फायरिंग रेंज में, जहां भारत ने परमाणु परीक्षण किए थे, तोप ने अपने गोला-बारूद से 39 किलोमीटर की मारक क्षमता हासिल की, लेकिन बोफोर्स गोला-बारूद के साथ इसकी मारक क्षमता केवल 29.5 किलोमीटर थी। परीक्षण दल ने फायरिंग के दौरान कई समस्याओं की भी सूचना दी। एफआईआर में कहा गया है, 'डीआरडीओ सहित सेना के विभिन्न विभागों ने गंभीर आपत्तियां उठाईं और सोल्टम तोप में संशोधन और संशोधनों के बाद व्यापक पुष्टिकरण परीक्षणों के एक और दौर की आवश्यकता पर जोर दिया।' हालांकि, इन सभी चेतावनियों और सिफारिशों को नजरअंदाज कर दिया गया और एक मूल्यांकन रिपोर्ट तैयार करके स्वीकार कर ली गई। एफआईआर में कहा गया है कि पूर्व यूगोस्लाविया, चेक गणराज्य, स्लोवाकिया, ऑस्ट्रिया, फिनलैंड और दक्षिण अफ्रीका की कंपनियों के प्रस्तावों को सेना और रक्षा मंत्रालय ने 'किसी न किसी बहाने से खारिज कर दिया'। इसमें आरोप लगाया गया है कि 'विभिन्न संभावित स्रोतों को शॉर्टलिस्ट करने का कोई प्रयास नहीं किया गया और जानबूझकर एक ही विक्रेता की स्थिति पैदा की गई।' इस सौदे में चौधरी की भूमिका स्पष्ट रूप से दिखाई देती है।
अन्य प्रस्ताव बेहतर और अधिक किफायती थे, लेकिन सेना और रक्षा मंत्रालय के अधिकारियों ने सोल्टम प्रस्ताव को प्राथमिकता दी। 12 जुलाई 1999 को,

भाजपा के नेतृत्व वाली राष्ट्रीय लोकतांत्रिक गठबंधन (एनडीए) सरकार की सर्वोच्च निर्णय लेने वाली संस्था, कैबिनेट कमेटी ऑन सिक्योरिटी, जिसकी अध्यक्षता तत्कालीन प्रधानमंत्री अटल बिहारी वाजपेयी कर रहे थे, ने इस प्रस्ताव को मंजूरी दे दी। अन्य मनगढ़ंत बातों के अलावा, इसमें झूठा दावा किया गया कि यह तोप बोफोर्स गोला-बारूद को निर्धारित सीमा तक दागने में सक्षम है। सीबीआई ने सेना मुख्यालय पर कैबिनेट कमेटी के सामने कीमत को उचित ठहराने के लिए गलत तथ्यों का इस्तेमाल करने का आरोप लगाया। हालांकि, सीबीआई ने यह नहीं बताया कि क्या तत्कालीन वरिष्ठ मंत्रियों को इस बात की जानकारी थी कि वे सरासर झूठ को मंजूरी दे रहे हैं।
7 मार्च 2000 को सोल्टम के साथ एक अनुबंध पर हस्ताक्षर किए गए। सीबीआई ने दावा किया कि चौधरी को 208.15 करोड़ रुपये के अनुबंध के लिए सोल्टम से कमीशन के रूप में 67,00,000 रुपये से अधिक मिले। यह तो केवल वह राशि थी जिसका सीबीआई पता लगा सकी; कुल कमीशन इससे कहीं अधिक रहा होगा। भारत में रक्षा सौदों में, बिचौलियों का औसत कमीशन कुल सौदे का 10-11 प्रतिशत तक हो सकता है। केंद्रीय जांच एजेंसी ने दावा किया कि 'भारतीय सेना और रक्षा मंत्रालय के अज्ञात अधिकारियों ने अपने आधिकारिक पद का दुरुपयोग किया और चौधरी और अन्य लोगों के साथ आपराधिक साजिश रची'।
हालांकि, 2010 तक सीबीआई ने निचली अदालत के सामने अपना रुख बदल दिया और कहा कि चौधरी और अन्य लोगों पर मुकदमा चलाने के लिए कोई सबूत नहीं है। सीबीआई ने कुछ अजीबोगरीब बातों को भी घुमा-फिराकर पेश किया। सोल्टम से चौधरी को मिलने वाला भुगतान 'जून 1999 में लंदन में हुए एक समझौते के तहत प्राप्त हुआ था, जिसके अनुसार MITCO (चौधरी की कंपनी) को सोल्टम का प्रतिनिधित्व करने और उनके उत्पादों - बिजली और बिना बिजली वाले स्टेनलेस स्टील के रसोई के बर्तनों - को बढ़ावा देने के लिए नियुक्त किया गया था'। मुझे अभी तक ऐसा कोई व्यक्ति नहीं मिला है जो रसोई के बर्तनों के कारोबार में चौधरी के सौदों से अवगत हो।
महीनों बाद, अगस्त 2011 में, न्यायाधीश ने मामला बंद कर दिया। लगभग दो महीने बाद, खुफिया एजेंसियों ने बताया कि चौधरी, जो 2006 में किसी समय स्थायी रूप से लंदन में बस गए थे, ने वर्षों बाद भारत की अपनी पहली ज्ञात यात्रा की।

एक अन्य हाई-प्रोफाइल सीबीआई जांच में भी कुछ ऐसी ही कहानी सामने आई, जिसमें चौधरी का नाम कथित तौर पर, हालांकि अप्रत्यक्ष रूप से, शामिल था। उनके रिश्तेदार और पूर्व व्यापारिक साझेदार, और भारत के एक अन्य कुख्यात हथियार एजेंट, सुरेश नंदा का नाम 9 अक्टूबर 2006 को दर्ज बराक मिसाइल कांड से संबंधित एफआईआर में आरोपी के रूप में शामिल किया गया था। नंदा एक पूर्व नौसेना अधिकारी और भारत के सबसे प्रतिष्ठित नौसेना प्रमुखों में से एक के बेटे हैं।
बराक मामले की एफआईआर में सीबीआई ने कहा कि चौधरी और उनकी कंपनियों, जिनमें मैग्नम इंटरनेशनल और यूरेका सेल्स कॉर्पोरेशन शामिल हैं, का इजरायल एयरोस्पेस इंडस्ट्रीज के साथ घनिष्ठ व्यावसायिक संबंध था। इजरायल एयरोस्पेस इंडस्ट्रीज भारतीय नौसेना के लिए बराक मिसाइल प्रणाली की प्राथमिक आपूर्तिकर्ता थी। एफआईआर में आरोप लगाया गया कि चौधरी की कंपनियों को 'वर्ष 1998 से 2001 के दौरान इजरायल स्थित आईएआई से करोड़ों डॉलर की संदिग्ध रकम प्राप्त हुई थी'। हालांकि, इसमें यह नहीं बताया गया कि मैग्नम इंटरनेशनल एक ऐसी कंपनी थी जिसमें चौधरी और नंदा दोनों शेयरधारक थे।
मामले की अत्यधिक चर्चित प्रकृति और सीबीआई द्वारा उस समय विश्वसनीय बताए गए सबूतों के बावजूद, दिसंबर 2013 तक एजेंसी ने एक बार फिर मामले को बंद कर दिया, यह दावा करते हुए कि उसे कथित साजिश को साबित करने के लिए कोई ठोस सबूत नहीं मिला। हालांकि यह सीबीआई की जांचों की एक सामान्य प्रक्रिया थी, लेकिन यह वास्तव में आश्चर्यजनक था कि किसी और ने इस मामले पर कोई सवाल नहीं उठाया, यहां तक कि विपक्ष ने भी नहीं। विडंबना यह है कि विपक्ष - जिसका नेतृत्व उस समय भाजपा कर रही थी - व्यापक भ्रष्टाचार के लिए सत्ताधारी गठबंधन के खिलाफ एक आक्रामक अभियान चला रहा था, लेकिन इस मामले पर असामान्य रूप से चुप रहा।
नंदा परिवार - शायद चौधरी परिवार से भी अधिक - भारतीय समाज की 'सब कुछ बिकाऊ' वाली नैतिकता को दर्शाता है।
एडमिरल सरदारीलाल मथुरादास नंदा का जन्म ब्रिटिश भारत में कराची बंदरगाह शहर के बाहरी इलाके मनोरा द्वीप पर हुआ था। कराची बंदरगाह प्राधिकरण में काम करने के बाद, उन्होंने द्वितीय विश्व युद्ध के दौरान ब्रिटिश नौसेना में भर्ती हो गए। भारत के स्वतंत्र होने पर, उन्होंने नौसेना में शामिल

होने का विकल्प चुना और कई महत्वपूर्ण पदों पर रहे। मार्च 1970 में उन्हें नौसेना प्रमुख के पद पर पदोन्नत किया गया और उन्होंने 1971 के युद्ध में नौसेना का नेतृत्व करते हुए एक शानदार विजय दिलाई, जिसके परिणामस्वरूप बांग्लादेश पाकिस्तान से मुक्त हुआ। लेकिन 1987 में, सेवा से सेवानिवृत्त होने के लगभग पंद्रह साल बाद, नंदा पर हथियार डीलर होने का आरोप लगा।
1999 में, उनके पोते संजीव नंदा सुर्खियों में आए। 10 जनवरी 1999 की सुबह-सुबह, संजीव एक पार्टी से लौटते समय दिल्ली में एक नई आयातित बीएमडब्ल्यू कार से कई लोगों को कुचल बैठे। छह लोगों की मौत हो गई। अदालत में, युवक के जाने-माने वकीलों ने दलील दी कि यह नंदा की कार नहीं थी जिसने उन लोगों को कुचला था।
30 मई 2007 को, समाचार चैनल एनडीटीवी ने एक गुप्त कैमरा ऑपरेशन चलाया जिसमें बचाव पक्ष के वकील आर.के. आनंद और सरकारी वकील आई.यू. खान को दुर्घटना के एक प्रमुख गवाह को अपने पक्ष में करने की कोशिश करते हुए दिखाया गया, ताकि वह अदालत में झूठ बोलकर संजीव को बचा सके। यह इस बात की एक दुर्लभ झलक थी कि कैसे सही फीस के लिए अदालतों को भी प्रभावित किया जा सकता है। दोनों पक्षों के वकील मिलीभगत कर सकते हैं, सभी राजनीतिक दलों के नेता एक साथ आ सकते हैं, बशर्ते आपके पास खर्च करने के लिए पर्याप्त धन हो। पिछले कई वर्षों से सुरेश नंदा, उनके बेटे संजीव और परिवार के बाकी सदस्य अपनी मनचाही जिंदगी जी रहे हैं, भव्य पार्टियां आयोजित कर रहे हैं, राजनीतिक, सैन्य और नौकरशाही के शीर्ष अधिकारियों से मेलजोल रख रहे हैं और कानून की अवहेलना कर रहे हैं। वे अक्सर संसद से कुछ ही सौ मीटर की दूरी पर स्थित एक सौ साल पुराने औपनिवेशिक बंगले में पाए जाते हैं। वे शहर के सबसे प्रसिद्ध होटलों में से एक, क्लेरिज होटल के भी मालिक हैं, जहां राजनयिकों को विशेष रियायतें मिलती हैं और भारतीय स्ट्रीट फूड को उच्च कोटि का दर्जा प्राप्त है। यहां तक कि एक दशक पहले टी.एन. खन्ना के परिवार से होटल की उनकी खरीद भी मॉरीशस के रास्ते भेजे गए धन से संभव हुई थी, जो भारत के संदिग्ध धनी लोगों का पसंदीदा कर आश्रय स्थल है - जिनमें सुधीर चौधरी भी शामिल हैं।
जब भी कानून नंदा परिवार को जकड़ने की कोशिश करता है, वे मानो रिश्वत देकर मुसीबत से बच निकलते हैं। 8 मार्च 2008 को सुरेश और संजीव तथा उनके

चार्टर्ड अकाउंटेंट बिपिन शाह मुंबई के मैरियट होटल के एक कमरे में आयकर अधिकारी आशुतोष वर्मा को रिश्वत देते हुए पकड़े गए। कुछ दिन पहले ही सीबीआई की निगरानी टीम ने आयकर अधिकारी को कैमरे में कैद किया था, जिसमें वह यह स्वीकार कर रहा था कि उसकी जीवन भर की कमाई भी उस रकम के 10 प्रतिशत के बराबर नहीं हो सकती जो उसे नंदा परिवार को कर भुगतान से बचने में मदद करने के बदले मिली थी। जब यह मामला सामने आया, तो कुछ महीने पहले कार दुर्घटना मामले में नंदा परिवार द्वारा भारतीय कानूनी व्यवस्था को रिश्वत देकर बचाने की कोशिश की यादें अभी भी ताजा थीं। एक बार फिर, जनता का गुस्सा उन पर हावी हो गया; एक बार फिर, इससे उन्हें कोई परेशानी नहीं हुई। उनके खिलाफ आपराधिक मामले दर्ज होने के बावजूद वे बेखौफ होकर काम कर रहे हैं, यह बात लगभग अविश्वसनीय है। 1987 में एचडीडब्ल्यू रक्षा घोटाला सामने आने और केंद्रीय एजेंसियों द्वारा एडमिरल एस.एम. नंदा और अन्य लोगों के ठिकानों पर छापा मारने के बाद से ही हर कोई नंदा परिवार के असली धंधे के बारे में जानता है, जिसमें युद्ध नायक पर हथियार डीलर होने का आरोप लगाया गया था।
जर्मन कंपनी एचडीडब्ल्यू के अधिकारियों ने, जो उस समय भारतीय नौसेना को डीजल पनडुब्बियां सप्लाई कर रही थी, पश्चिम जर्मनी में भारतीय राजदूत को इस बात की पुष्टि की थी कि उन्होंने पनडुब्बी का सौदा पक्का करने के लिए नंदा परिवार और कुछ अन्य लोगों को कमीशन दिया था। सीबीआई समेत केंद्रीय जांचकर्ताओं ने एडमिरल नंदा के घर के साथ-साथ परिवार के अन्य सदस्यों की संपत्तियों पर भी छापा मारा और उन पर रिश्वत लेने का आरोप लगाया। जब मेरी मुलाकात एडमिरल नंदा से 2000 के आसपास डिफेंस कॉलोनी स्थित उनके आलीशान बंगले के एक गर्म कमरे में हुई, तो उन्होंने मुझे बताया कि उनके प्रतिद्वंद्वियों ने पारिवारिक उत्सव के दौरान जांचकर्ताओं को उनके घर भेजकर उनसे बदला लिया था। उन्होंने मेरे अखबार के संपादक के बारे में बड़े स्नेह से बात की। बाद में पता चला कि जिस अखबार के लिए मैं काम करता था, उसका लंदन संस्करण नंदा परिवार के स्वामित्व में था।
एचडीडब्ल्यू का मामला अदालतों में लंबे समय तक चला, भारत के सर्वोच्च न्यायालय तक पहुंचा और अंततः पंद्रह साल बाद सीबीआई द्वारा नंदा परिवार पर मुकदमा चलाने के लिए कोई ठोस सबूत न होने की बात कहकर बंद कर दिया गया। इसमें कोई आश्चर्य की बात नहीं है। 1980 के दशक में, एचडीडब्ल्यू के

आरोपों ने बोफोर्स कांड के साथ मिलकर भारत में भ्रष्टाचार के खिलाफ पहला वास्तविक राष्ट्रीय आक्रोश पैदा किया। इसने संभवतः कई वर्षों तक राजनीति की दिशा बदल दी, कांग्रेस पार्टी के प्रभुत्व को समाप्त कर दिया और छोटे क्षेत्रीय दलों को मिलाकर गठबंधन राजनीति की नई अवधारणा को जन्म दिया। 2014 में, जब प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी ने तीन दशक पुराने गठबंधन राजनीति के प्रभुत्व को समाप्त करते हुए सत्ता संभाली, तो भ्रष्टाचार और सार्वजनिक अनैतिकता के खिलाफ राष्ट्रीय आक्रोश के एक और दौर ने उनकी सफलता में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई।
हाल के वर्षों में, डिजिटलीकरण ने पत्रकारों और शोधकर्ताओं के लिए दशकों पुराने लेन-देन की पड़ताल करने, कर आश्रयों और वैश्विक साजिशों की गोपनीयता को उजागर करने और गुप्त स्थानों में वास्तव में क्या हुआ, इसके बारे में नए दृष्टिकोण प्रस्तुत करने के नए रास्ते खोल दिए हैं। डिजिटलीकरण खोजी पत्रकारिता के तरीके को भी नाटकीय रूप से बदल रहा है। यह आश्चर्य की बात नहीं है कि हाल के वर्षों में सामने आए प्रमुख वैश्विक खुलासे व्हिसलब्लोअर द्वारा उपलब्ध कराए गए डिजिटल डेटाबेस पर केंद्रित रहे हैं।
अपने कई समकालीनों की तरह, मैं भी यह समझने की कोशिश कर रहा हूँ कि विभिन्न देशों के डेटाबेस आपस में कैसे संवाद कर सकते हैं, धन के लेन-देन का पता लगा सकते हैं और नई कहानियाँ खोज सकते हैं। वित्तीय लेन-देन के सुराग खोजने में मुझे अक्सर कई दिन और बहुत सारा पैसा खर्च करना पड़ता है। ऐसी ही एक खोज के दौरान, यूरोप में मेरे कुछ दोस्तों ने मुझे कुछ चौंकाने वाले विवरणों से अवगत कराया, जिनसे भारतीय एजेंसियों द्वारा एचडीडब्ल्यू घोटाले की जाँच और उसे बंद करने के तरीके पर चिंताजनक सवाल उठते हैं। लंदन और यूरोप के अन्य हिस्सों में नंदा परिवार के व्यापारिक लेन-देन के बारे में मुझे जो जानकारी मिली है, उससे यह मांग उठती है कि सीबीआई एचडीडब्ल्यू जांच को फिर से खोले और उपलब्ध नए सबूतों पर गौर करे। लिकटेंस्टीन, जो एक समृद्ध जर्मन भाषी अल्पाइन रियासत है, और लंदन के आधिकारिक डेटाबेस से प्राप्त कई आधिकारिक दस्तावेजों से एक दिलचस्प कहानी सामने आती है, जिसे नंदा परिवार ने कभी सार्वजनिक रूप से नहीं बताया और सीबीआई या तो इससे अनभिज्ञ थी या उसने जानबूझकर इसे नजरअंदाज किया।

मेरी जांच से यह निष्कर्ष निकलता है कि नंदा परिवार 1987 में लिकटेंस्टाइन में स्थापित एक संस्था, मंडुरा अनस्टाल्ट, का वित्तीय लाभार्थी रहा है। यह उस समय की बात है जब एचडीडब्ल्यू के प्रतिनिधियों ने भारतीय राजदूत को बताया था कि उन्होंने बिचौलियों को कमीशन दिया था। लिकटेंस्टाइन के कानूनों के तहत, एक संस्था या अनस्टाल्ट एक स्वायत्त कोष होता है जिसके संस्थापक लाभार्थी होना अनिवार्य नहीं है। इसका अर्थ यह है कि कंपनी ए संस्था में पैसा जमा कर सकती है और श्री बी उससे सारा पैसा निकाल सकते हैं।
प्रतिनिधियों ने कहा था कि एचडीडब्ल्यू सौदे में कमीशन 380 मिलियन डॉलर के अनुबंध का 7 प्रतिशत था, जो कि 32.55 करोड़ रुपये (1981 की विनिमय दर के आधार पर लगभग 36 मिलियन डॉलर) बनता।
लिकटेंस्टीन में स्थापित ट्रस्ट या अन्य निवेश योजनाओं की शुरुआत किसने की और उनमें कितना पैसा आया, यह ज्ञात नहीं है - कम से कम मैं तो इसका पता नहीं लगा सका। लेकिन इस निवेश योजना से प्राप्त कुछ धन का उपयोग लंदन के एक पॉश इलाके में संपत्ति खरीदने के लिए किया गया था। नंद परिवार ने वर्षों से ब्रिटिश सरकार के समक्ष प्रस्तुत दस्तावेजों में इसे अपना आधिकारिक निवास बताया है। बाद के वर्षों में लिकटेंस्टीन में स्थापित ट्रस्टों या अन्य निवेश योजनाओं का उपयोग नंद परिवार ने ब्रिटेन में दो कंपनियों को वित्त पोषित करने के साथ-साथ एक दूसरी संपत्ति खरीदने के लिए भी किया। यह स्पष्ट नहीं है कि ट्रस्टों से प्राप्त धन का उपयोग किसी अन्य गतिविधि के लिए किया गया था या नहीं।
वित्तीय डेटाबेस की छानबीन करने के कुछ ही दिनों बाद मुझे जो जानकारी मिली, उससे भारत के सबसे चर्चित घोटालों में से एक में सीबीआई की जांच की गुणवत्ता पर बेहद चिंताजनक सवाल उठते हैं। इससे एचडीडब्ल्यू रिश्वतखोरी के आरोपों के साथ-साथ नंद परिवार द्वारा भारत में धन भेजने से संबंधित वित्तीय लेन-देन की जांच को फिर से शुरू करने की आवश्यकता भी स्पष्ट हो जाती है।
दुनिया भर के विभिन्न शहरों में संपत्तियों की खरीद के लिए कर आश्रय स्थलों में स्थित रहस्यमय संस्थाओं द्वारा नकद भुगतान का सिलसिला कोई अनोखी घटना नहीं है। बल्कि, यह एक बढ़ता हुआ चलन है। नवंबर 2012 में द गार्जियन और इंटरनेशनल कंसोर्टियम ऑफ इन्वेस्टिगेटिव जर्नलिस्ट्स

द्वारा की गई एक जांच से पता चला कि 'अनाम खरीदार, विशेष रूप से राजधानी [लंदन] में, विलासितापूर्ण आवासों के अधिकाधिक ब्लॉक खरीद रहे हैं।' वे सभी धन के लेन-देन के लिए कर आश्रय स्थलों का उपयोग कर रहे थे। जांच में कहा गया है, 'अकेले 2011 में, 7 अरब पाउंड से अधिक की विदेशी धनराशि ब्रिटेन के घरों, फ्लैटों और कार्यालय भवनों की संभावित कर-मुक्त खरीद में लगाई गई। अधिकांश खरीदारों ने मध्य लंदन में संपत्ति खरीदी, जिससे यह समझने में मदद मिलती है कि वहां की कीमतें मंदी के बावजूद क्यों स्थिर बनी हुई हैं।' इसमें पाया गया कि इनमें से अधिकांश खरीदारों ने ब्रिटिश वर्जिन द्वीप समूह (बीवीआई) का उपयोग किया, जो एक प्रमुख कर आश्रय स्थल है और भारतीयों के बीच लोकप्रिय है और 2011 में कुल सौदों में से 3.8 अरब पाउंड इसी द्वीप समूह से संबंधित थे। वास्तव में, बीवीआई सुधीर चौधरी की कमाई के लिए भी एक पसंदीदा गुप्त स्थान है। चौधरी परिवार की ब्रिटेन स्थित अधिकांश कंपनियां ब्रिटिश वर्जिन द्वीप समूह (बीवीआई) में स्थित हारबेरी इन्वेस्टमेंट्स के स्वामित्व में हैं, जैसा कि उनके द्वारा देश में दर्ज दस्तावेजों से पता चलता है। हालांकि, भारतीय धनियों द्वारा रची गई साजिशों की अधिकांश कहानियां भारत के निकट स्थित एक छोटे से द्वीप में ही केंद्रित हैं।
मॉरीशस दस लाख से अधिक आबादी वाला एक छोटा द्वीप देश है, जिसका आकार भारतीय अर्थव्यवस्था के आकार का मात्र एक सौवां हिस्सा है, लेकिन यह वर्षों से भारत में प्रत्यक्ष विदेशी निवेश का सबसे बड़ा स्रोत रहा है। यह विचित्र प्रवृत्ति मॉरीशस की गुप्त वित्तीय व्यवस्था और द्विपक्षीय कर समझौते, दोहरे कराधान बचाव समझौते (डबल टैक्सेशन अवॉइडेंस एग्रीमेंट) के कारण फली-फूली है, जो मॉरीशस से भारत में होने वाले सभी निवेशों को कर-मुक्त प्रवेश की अनुमति देता है। कई विदेशी निवेशकों और कुछ भारतीयों ने मॉरीशस में केवल कागजों पर कंपनियां स्थापित की हैं और इसका उपयोग कर चोरी करने और धन के लेन-देन के लिए करते हैं। इसलिए यह आश्चर्य की बात नहीं है कि चौधरी और नंदा परिवार के भारत में अधिकांश व्यवसायों में मॉरीशस से महत्वपूर्ण निवेश शामिल हैं।
2003 में, सुरेश नंदा और उनके परिवार ने क्लेरिज होटल्स को खरीदा और तब से व्यवसाय का विस्तार किया है। नई दिल्ली में अपने प्रमुख होटल के अलावा, यह राष्ट्रीय राजधानी क्षेत्र में, हिमालयी पर्वतमाला मसूरी में और

राजस्थान में भरतपुर पक्षी अभ्यारण्य के पास होटल और रिसॉर्ट संचालित करता है।
पिछले कुछ वर्षों में, क्लेरिज होटल्स को मॉरीशस स्थित यूनिवर्सल बिजनेस सॉल्यूशंस नामक कंपनी से कई मिलियन रुपये का निवेश प्राप्त हुआ है। 2007 में, यूनिवर्सल बिजनेस सॉल्यूशंस ने 10 रुपये अंकित मूल्य के शेयर 2,390 रुपये के प्रीमियम पर खरीदे। जनवरी 2009 में, इसने क्लेरिज होटल्स के शेयरों का एक और लॉट 3,690 रुपये के प्रीमियम पर खरीदा।
इसी तरह के एक पैटर्न में, चौधरी ने भी भारत में काफी मात्रा में धन लाकर एक बेहद सफल निर्माण कंपनी शुरू की, एक रक्षा फर्म को वित्त पोषित किया, आलीशान होटल बनाए आदि।
इन खिलाड़ियों द्वारा बरती गई तमाम सावधानियों के बावजूद, कभी-कभी उनके लेन-देन की जानकारी लीक हो जाती है। एक सरकारी अधिकारी से मिली सूचना के आधार पर, मैंने चौधरी परिवार के एक व्यापारिक सौदे पर कई महीनों तक नज़र रखी, और जो मैंने खोजा वह शायद एक अनूठा मामला था: एक शक्तिशाली सैन्य नेता और एक कथित हथियार व्यापारी के बीच लेन-देन के दस्तावेजी सबूत।
इस पुस्तक पर काम करते हुए मैंने जो सुराग जुटाए, उनके अनुसार, 2005-06 में पूर्व सेना प्रमुख (1990-93) और तत्कालीन पंजाब राज्यपाल, जनरल सुनीथ फ्रांसिस रोड्रिग्स के परिवार ने अपनी एक कंपनी चौधरी द्वारा समर्थित एक फर्म को बेच दी थी। यह सौदा तब हुआ जब चौधरी और उनकी फर्मों पर भारत में हथियारों के सौदों में हेरफेर करने के आरोप में सीबीआई द्वारा जांच चल रही थी।
2005 और 2007 के बीच हुए लेन-देन में, जनरल रोड्रिग्स की कंपनी, जुआरी रिवर एग्रोटेक के स्वामित्व वाली एक भूखंड का मूल्य लगभग सौ गुना बढ़ा दिया गया था। जुआरी की शुरुआत मूल रूप से जनरल रोड्रिग्स ने 1994 में जुआरी टाइगर्स एक्वा के नाम से की थी। उनके पास दस शेयर थे और एक अन्य सेवानिवृत्त सेना अधिकारी, कैप्टन अनिल भल्ला के पास एक शेयर था। जुआरी के पास 19.78 लाख रुपये मूल्य का एक भूखंड था। 2005-06 में जुआरी ने भूमि का पुनर्मूल्यांकन करके उसे 9.06 करोड़ रुपये का बताकर अपनी संपत्ति में वृद्धि का दावा किया।
17 फरवरी 2006 को, जुआरी का क्रिस्टल आइलैंड पार्क में विलय कर दिया गया, जो पूर्व सेना प्रमुख के बेटे मार्क रोड्रिग्स द्वारा शुरू की गई कंपनी

थी। जुआरी की सभी संपत्तियों, देनदारियों और भंडारों को क्रिस्टल आइलैंड पार्क ने उनके बही मूल्य 10.88 करोड़ रुपये पर अधिग्रहित कर लिया।
विलय के कुछ ही दिनों के भीतर, इसका स्वामित्व ग्रैंड्योर रियल एस्टेट नामक कंपनी को हस्तांतरित कर दिया गया। 22 अप्रैल 2006 को, मार्क ने क्रिस्टल आइलैंड पार्क में अपने 1,29,030 शेयर ग्रैंड्योर रियल एस्टेट को हस्तांतरित कर दिए; उनके अल्प साझेदार अशोक चावला ने भी अपने 20,970 शेयर हस्तांतरित कर दिए। इस प्रकार, क्रिस्टल आइलैंड पार्क का पूर्ण स्वामित्व और नियंत्रण ग्रैंड्योर रियल एस्टेट को सौंप दिया गया, एक ऐसी कंपनी जिसमें सुधीर चौधरी, उनके बेटे भानु और भतीजे ध्रुव 25 अगस्त 2005 से निदेशक थे। ग्रैंड्योर की शुरुआत 2004 में मॉरीशस के माध्यम से प्राप्त 99.98 प्रतिशत पूंजी के साथ हुई थी।
क्रिस्टल आइलैंड पार्क द्वारा दाखिल किए गए वार्षिक विवरण के अनुसार, 23 जून 2006 को हुई अपनी वार्षिक आम बैठक के बाद, सुधीर, भानु और ध्रुव चौधरी और उनके कुछ व्यावसायिक सहयोगी निदेशक के रूप में कंपनी में शामिल हुए। 2006-07 में, चौधरी और उनके रियल एस्टेट व्यवसाय से जुड़े सहयोगियों की प्रमुख कंपनी अल्फा जी: कॉर्प डेवलपमेंट प्राइवेट लिमिटेड ने ग्रैंड्योर रियल एस्टेट्स में शेयर हासिल किए और क्रिस्टल आइलैंड पार्क की अंतिम होल्डिंग कंपनी बन गई। अल्फा जी: कॉर्प की पंजाब, हरियाणा और अन्य राज्यों में व्यापक हित और निर्माण गतिविधियाँ हैं। इन लेन-देन को औपचारिक रूप दिया जा रहा था, उस समय जनरल रोड्रिग्स पंजाब के राज्यपाल थे (2004-10)। 2005-06 और 2006-07 के दौरान, क्रिस्टल आइलैंड पार्क ने ग्रैंड्योर रियल एस्टेट से 4.36 करोड़ रुपये का असुरक्षित ऋण भी प्राप्त किया। क्रिस्टल आइलैंड पार्क ने मार्क को 1.75 करोड़ रुपये का भुगतान किया, जिसने कहा कि यह 75 एकड़ की साइट की सफाई, पोंटून निर्माण, ड्रेजिंग आदि के लिए भुगतान था।
अधिग्रहण के एक वर्ष के भीतर, भूमि का मूल्यांकन वापस 19.78 लाख रुपये पर लाया गया। कंपनी ने अपनी 2006-07 की वार्षिक रिपोर्ट में कहा कि उसने 'अपनी 9,05,92,000 रुपये मूल्य की भूमि को अचल परिसंपत्तियों से पुनर्वर्गीकृत करके मूल लागत, यानी 19,78,421 रुपये पर व्यापारिक स्टॉक में शामिल कर दिया है'।

जब मैंने चौधरी और रोड्रिग्स से स्पष्टीकरण मांगा, तो मुझे आक्रामक कानूनी नोटिस मिले। चौधरी का प्रतिनिधित्व करने वाली लंदन स्थित कानूनी फर्म डीएलए पाइपर के मीडिया प्रमुख और निदेशक एबेन ब्लैक ने मुझे चेतावनी दी कि मैं 'बेबुनियाद और निराधार आरोप न लगाऊं, जो न केवल गलत हैं, बल्कि हमारे विचार से श्री चौधरी और उनके परिवार के लिए जानबूझकर और अत्यधिक हानिकारक हैं'। यह अपने आप में एक दुर्लभ घटना थी: सुधीर चौधरी के प्रतिनिधि अपने ऊपर लगे आरोपों के बारे में एक पत्रकार से बात कर रहे थे। ब्लैक ने कहा कि चौधरी 'हथियारों की तस्करी में कभी भी शामिल होने से दृढ़ता से इनकार करते हैं'। उनके मुवक्किल अल्फा जी: कॉर्प का संचालन नहीं करते हैं और 'केवल इसके निदेशकों में से एक हैं'।
जब मैंने यह किताब लिखना खत्म किया, तब तक अल्फा जी: कॉर्प का नाम बदलकर अल्फाकॉर्प कर दिया गया था। इसने रोड्रिग्स परिवार की कंपनी का अधिग्रहण कर लिया और अधिग्रहण से पहले हुई सभी घटनाओं, जिनमें संपत्ति के मूल्यांकन में वृद्धि भी शामिल है, से खुद को आधिकारिक तौर पर अलग कर लिया। इसके कंपनी सचिव अभय शर्मा ने मुझे एक लिखित बयान में बताया: ‘ग्रैंड्योर के अधिग्रहण से पहले क्रिस्टल आइलैंड के कारोबार या लेन-देन के बारे में अल्फा जी: कॉर्प को कोई जानकारी नहीं थी। वास्तव में, जब ग्रैंड्योर ने क्रिस्टल आइलैंड के शेयर खरीदे थे, तब ग्रैंड्योर अल्फा जी: कॉर्प की कंपनी नहीं थी। अल्फा जी: कॉर्प बहुत बाद में अस्तित्व में आई और पंजीकृत विशेषज्ञों द्वारा परियोजनाओं के मूल्यांकन और आकलन के आधार पर अधिग्रहण किया। अल्फा जी: कॉर्प का श्री मार्क रोड्रिग्स के साथ शेयर खरीद या ड्रेजिंग गतिविधियों से संबंधित कोई लेन-देन नहीं रहा है।’
अब सेवानिवृत्त जीवन जी रहे जनरल रोड्रिग्स ने कहा कि उन्हें भी इस बारे में कोई जानकारी नहीं थी। उन्होंने 2012 में एक शाम फोन पर मुझसे कहा, 'मुझे कुछ नहीं पता। मुझे 2004 में पंजाब का राज्यपाल नियुक्त किया गया था और हमारा मुख्यालय चंडीगढ़ में था। मुझे कुछ पता नहीं था; यह सब मार्क का काम था। आखिरकार, वे अपनी-अपनी जिंदगी जीते हैं।'
न्यूजीलैंड में रहने वाले मार्क रोड्रिग्स ने कहा कि उन्हें इस बात की जानकारी नहीं थी कि कथित हथियार डीलर इस सौदे के पीछे था। उन्होंने कहा, 'हमें नहीं पता था कि चौधरी परिवार इसमें शामिल था। उसका नाम कभी सामने नहीं आया और वह कभी भी जांच प्रक्रिया का हिस्सा नहीं था।' उन्होंने कहा कि

ग्रैंड्योर रियल एस्टेट, जिसने उनकी कंपनी क्रिस्टल आइलैंड पार्क को खरीदा था, वैध प्रतीत होती थी। अप्रैल 2012 में एक साक्षात्कार के दौरान फोन पर मार्क ने कहा, 'अगर हमें पता होता कि चौधरी परिवार इसमें शामिल है, तो हम यह सौदा नहीं करते।'
गोवा स्थित एक वकील के माध्यम से, मार्क ने बाद में मेरे सवालों का जवाब देते हुए कहा कि यह लेन-देन जनरल रोड्रिग्स के सेना प्रमुख पद से सेवानिवृत्त होने के चौदह साल बाद हुआ था। 'वह (जनरल रोड्रिग्स) कभी भी कंपनी के शेयरधारक, निदेशक, प्रबंधक या कर्मचारी नहीं रहे हैं और कंपनी से संबंधित किसी भी निर्णय में उनका कोई दखल नहीं रहा है। कंपनी की स्थापना उनके भारतीय सेना प्रमुख के पद से सेवानिवृत्त होने के लगभग छह साल बाद हुई थी, इसलिए हथियारों के सौदों या किसी भी इसी तरह के लेन-देन से इसके संबंध का कोई भी आरोप पूरी तरह से गलत और गैरजिम्मेदार है,' मार्क की ओर से अधिवक्ता मेनिनो परेरा ने कहा।
जनरल रोड्रिग्स ने अपनी ओर से कहा कि जहाँ तक उन्हें पता है, उनके बेटे द्वारा क्रिस्टल आइलैंड पार्क की बिक्री एक 'सीधा-सादा सौदा' था; उन्होंने कहा, 'इससे कोई फर्क नहीं पड़ता कि इसे नीले, भूरे या काले रंग के लोगों ने खरीदा।' उन्होंने आगे कहा, 'मैं एक तरह से 'गरीब सरदार' हूँ। मुझे सेवानिवृत्ति के बाद छह साल तक काम करना पड़ा क्योंकि मेरी पेंशन से हमारा गुजारा नहीं चल पा रहा था। यह बात सबको पता है, पूरा इतिहास खुद ही गवाह है।'
यह पूरा लेन-देन उस समय हुआ जब जनरल रोड्रिग्स पंजाब के राज्यपाल और चंडीगढ़ के मुख्य प्रशासक थे। यह महज एक संयोग हो सकता है, लेकिन इस दौरान अल्फा जी: कॉर्प की इस क्षेत्र में कई निर्माण परियोजनाएं चल रही थीं। साथ ही, अल्फा जी: कॉर्प ने भूमि उपयोग परिवर्तन को लेकर एक विवाद सुलझाया और अमृतसर में एक मेगा शॉपिंग मॉल के लिए सभी आवश्यक स्वीकृतियां प्राप्त कर लीं। अब, यह विशेष व्यापारिक लेन-देन दुर्लभ है, क्योंकि यह रिकॉर्ड में उपलब्ध है। परंपरागत रूप से, शक्तिशाली बिचौलियों और सरकार में उनके संपर्कों के लेन-देन का पता लगाना कठिन होता है, क्योंकि वे अक्सर टैक्स हेवन के माध्यम से किए जाते हैं। वैश्विक संपत्ति का 20,00,000 करोड़ रुपये से अधिक उन स्थानों पर स्थित या छिपा हुआ है जो वास्तविक संपत्ति के मालिकों को गोपनीयता और शून्य या नगण्य कर देनदारी प्रदान करते हैं।

अनुमान बताते हैं कि दुनिया भर में टैक्स हेवन के जाल में अधिकांश खाते या तो पूर्व ब्रिटिश उपनिवेश हैं, या आंशिक रूप से यूनाइटेड किंगडम द्वारा नियंत्रित हैं।
भारत में लंबे समय से टैक्स हेवन में छिपा हुआ पैसा एक महत्वपूर्ण राजनीतिक मुद्दा रहा है, लेकिन कोई भी राजनीतिक दल इसकी ठीक से जांच करने या दोषियों को पकड़ने में सक्षम नहीं रहा है, न ही सीबीआई ने इस मुद्दे पर अपनी जांच में कोई प्रगति की है।
दरअसल, सीबीआई उच्च स्तरीय भ्रष्टाचार पर लगाम लगाने के मामले में भारत की भयावह विफलता का एक जीता-जागता उदाहरण है।
एजेंसी के पास 'अवांछित संपर्क व्यक्तियों' की एक गोपनीय सूची है, जिनके साथ सरकार का कोई लेन-देन नहीं होना चाहिए और अधिकारियों को उनसे मिलने- जुलने की अनुमति नहीं है। जब एजेंसी ने 2012 में मंत्रियों और वरिष्ठ अधिकारियों को यह सूची वितरित की, तो उसमें तेईस लोग शामिल थे। सुधीर चौधरी सूची में सबसे ऊपर थे; उनके ठीक नीचे सुरेश नंदा थे। सीबीआई चौधरी को रक्षा क्षेत्र में सरकारी निर्णय लेने की प्रक्रियाओं में हेरफेर करने वाले सबसे शक्तिशाली लोगों में से एक मानती थी। एजेंसी ने कहा कि इन 'बेईमान व्यक्तियों को सरकारी विभागों में मान्यता प्राप्त प्रतिनिधियों के रूप में स्वीकार नहीं किया जाना चाहिए'। सभी सरकारी विभाग 'अपने अधिकारियों को निर्देश जारी करेंगे कि वे इन सूचियों में शामिल बेईमान संपर्क व्यक्तियों के साथ व्यवहार में सावधानी बरतें, उनसे सामाजिक रूप से मेलजोल से बचें और उनसे आतिथ्य और उपहार स्वीकार न करें'। एजेंसी के नोट में कहा गया है कि वह 'ऐसे संपर्क व्यक्तियों की गतिविधियों पर चुपचाप नज़र रखेगी और उनके द्वारा किए गए कदाचार के विशिष्ट मामलों के बारे में जानकारी एकत्र करने का प्रयास करेगी'। और विभागों को उन अधिकारियों पर भी नजर रखनी होगी जो इन अवांछित व्यक्तियों के साथ लेन-देन कर सकते हैं और किसी भी संदिग्ध लेन-देन के बारे में सीबीआई प्रमुख को चेतावनी देनी होगी। हालांकि, इस सूची में शामिल तेईस लोग विभिन्न सरकारी विभागों में हेराफेरी करना जारी रखे हुए हैं, जहां अक्सर अरबों डॉलर के ठेके होते हैं और कई बहुराष्ट्रीय कंपनियों का भविष्य दांव पर लगा होता है। लेकिन ये तो बस हिमबर्ग का एक छोटा सा हिस्सा हैं: अगर व्यापार, राजनीति और सरकारों के बीच के संबंधों का ठीक से विश्लेषण किया जाए तो यह सूची वास्तव में बहुत

लंबी हो सकती है। इन बिचौलियों को जो ताकत मिलती है, जो उन्हें इतनी बेशर्मी से काम करने की छूट देती है, वह यह आश्वासन है कि भारतीय अर्थव्यवस्था, विशेषकर सरकारी क्षेत्र, उनके भरोसे ही चलती है और अधिकांश राजनेता और सरकारी अधिकारी उन्हीं से वेतन लेते हैं। उन्हें इस बात से भी तसल्ली मिलती है कि भारतीय आपराधिक न्याय प्रणाली कमजोर है और पकड़े जाने पर भी वे बरी हो जाएंगे।
जब भी किसी वरिष्ठ सरकारी अधिकारी की नियुक्ति की घोषणा होती है, जैसे कि किसी सरकारी उद्यम या राष्ट्रीयकृत बैंक के अध्यक्ष की, तो इस बात की कहानियां सामने आती हैं कि नियुक्ति में कितना पैसा लगा और किसने किसको किसकी ओर से रिश्वत दी। ये नियुक्त अधिकारी फिर भारतीय राजनीति में अपनी भूमिका निभाते हैं और उद्योगपतियों को भारी ऋण और विशेष सुविधाएँ प्रदान करते हैं। भ्रष्ट अधिकारियों को उच्च स्तरीय बिचौलियों का समर्थन प्राप्त होता है, जो सीबीआई की अवांछित संपर्क व्यक्तियों की सूची में शामिल होते हैं।
तो क्या यह आश्चर्य की बात है कि सीबीआई भ्रष्ट नेताओं, नौकरशाहों और बिचौलियों को पकड़ने में नाकाम रही है? हाल के समय में, खोजी पत्रकारिता और सीमा पार वित्तीय लेन-देन के विश्लेषण ने इस व्यापक धारणा को और पुष्ट किया है कि सीबीआई और अन्य केंद्रीय एजेंसियां अधिकतम रूप से शक्तिहीन हैं, और कम से कम भ्रष्ट राजनीतिक व्यवस्था के हाथों की कठपुतली मात्र हैं। इन जांचों से बिचौलियों द्वारा सार्वजनिक व्यय में व्यवस्थित हेरफेर, लोकतांत्रिक जवाबदेही का क्षरण और भारतीय नीति एवं शासन व्यवस्था की कमजोरी उजागर होती है।
2012 में, सतर्कता आयुक्त आर. श्री कुमार ने एक आंतरिक अध्ययन का हवाला देते हुए कहा कि भ्रष्टाचार के मामलों में सीबीआई की दोषसिद्धि दर चौंकाने वाली रूप से मात्र 3.96 प्रतिशत थी। सीबीआई ने 264 भ्रष्टाचार मामलों का विश्लेषण किया, जिनमें 486 सरकारी अधिकारियों सहित 698 लोग आरोपी थे। श्री कुमार ने बताया कि औसतन, सीबीआई को जांच पूरी करने में तेरह महीने से अधिक का समय लगा और छब्बीस साल की जांच और मुकदमे के बाद कुल आरोपियों में से केवल आठ को ही दोषी ठहराया जा सका। श्री कुमार, जिन्हें केंद्रीय सतर्कता आयोग के सदस्य के रूप में सीबीआई की निगरानी का

आधिकारिक दायित्व सौंपा गया था, ने कहा, 'भ्रष्टाचार के लिए सजा की कोई निश्चितता नहीं है और यही कारण है कि भ्रष्टाचार बढ़ा है।'
15 अप्रैल 2014 को सीबीआई की वार्षिक व्याख्यान श्रृंखला में आमंत्रित गोपालकृष्ण गांधी, जो एक सम्मानित सिविल सेवक और महात्मा गांधी के पोते हैं, ने लगभग 3,000 अधिकारियों के समक्ष सीबीआई के बारे में जनता की धारणा पर बात की। अपने विशिष्ट सौम्य लहजे में उन्होंने कहा, ‘सीबीआई की छवि बहुत मिली-जुली है। पूरी छवि अच्छी नहीं है। इसे ईमानदारी के सहयोगी के बजाय सरकार की कुल्हाड़ी के रूप में देखा जाता है। इसे अक्सर डीडीटी कहा जाता है – जिसका अर्थ डाइक्लोरोडाइफेनिलट्राइक्लोरोएथेन नहीं है, जो कि एक रंगहीन, स्वादहीन और गंधहीन कीटनाशक है – बल्कि “गंदे करतूतों का विभाग” है।’ इसकी जांचें अक्सर एक मजाक होती हैं, और ज्यादातर मामलों में एक त्रासदी। एजेंसी नियमित रूप से ‘सबूतों की कमी’ के कारण मामलों को समय से पहले बंद कर देती है। सीबीआई द्वारा गहनता से जांच किए गए कुछ हाई-प्रोफाइल भ्रष्टाचार घोटालों में से अधिकांश का अंत अदालत में अपमानजनक हार के साथ हुआ। आरोपी बच निकले, जबकि पूरी व्यवस्था उनके अपराध के प्रति आश्वस्त थी।
राजनीतिक दल जनता के बीच पनप रहे असंतोष से भलीभांति परिचित हैं। भ्रष्टाचार नागरिक समाज के आंदोलन का एक प्रमुख मुद्दा बन गया है। हालांकि, सीबीआई और अन्य एजेंसियों की शर्मनाक विफलता के जवाब में सरकारों ने मौजूदा संस्थानों में सुधार लाने के लिए नीतियां बनाने के बजाय और अधिक संस्थान स्थापित किए हैं। हाल के वर्षों में, कम से कम दो आयोग विशिष्ट जांच करने के लिए गठित किए गए हैं - एक आतंकवाद के मामलों के लिए, दूसरा काले धन के मामलों के लिए।
भारत में होने वाले हर बड़े घोटाले में एक बात समान है: कर पनाहगाह, जहाँ रिश्वत का लेन-देन होता है। जब 2010 में भारत को वीवीआईपी हेलीकॉप्टर बेचने के फिनमेकानिका सौदे में 360 करोड़ रुपये के अवैध कमीशन का खुलासा हुआ, तो इतालवी अदालतों में दायर दस्तावेजों से पता चला कि अधिकांश धन का लेन-देन ट्यूनीशिया, मॉरीशस, दुबई और सिंगापुर जैसे कर पनाहगाहों से होकर गुजरा था।
भारत के धनी और शक्तिशाली लोगों की अवैध कमाई यानी 'काले धन' को बाहर निकालने की प्रथा के कई गंभीर परिणाम हैं, जिनमें गरीबी, निरक्षरता और

अन्य सामाजिक-आर्थिक चुनौतियों से लड़ने के देश के प्रयासों पर गंभीर प्रभाव, राष्ट्रीय सुरक्षा प्राथमिकताओं को बाधित करना, सरकारी खजाने को लूटना और प्रतिस्पर्धा को रोकना शामिल है।
2011 में मुख्य विपक्षी दल रही भाजपा ने काले धन की समस्या का अध्ययन करने के लिए एक कार्यबल का गठन किया और बाद में एक रिपोर्ट जारी की। अगले वर्ष, यूपीए सरकार ने संसद में काले धन पर एक श्वेत पत्र प्रस्तुत किया। 97 पृष्ठों की इस रिपोर्ट को प्रस्तुत करना सरकार द्वारा किए गए कई वादों में से एक था। वित्त मंत्री प्रणब मुखर्जी, जो एक वर्ष बाद भारत के तेरहवें राष्ट्रपति बने, ने रिपोर्ट में स्वीकार किया: ‘इसमें कोई संदेह नहीं है कि हमारे जीवन के सामाजिक, आर्थिक और राजनीतिक क्षेत्र में काले धन की उपस्थिति देश में शासन व्यवस्था और सार्वजनिक नीति के संचालन पर गंभीर प्रभाव डालती है। शासन की विफलता और व्यवस्था में भ्रष्टाचार गरीबों को असमान रूप से प्रभावित करते हैं। समावेशी विकास रणनीति की सफलता इस बात पर निर्भर करती है कि हमारा समाज भ्रष्टाचार और काले धन की बुराई को जड़ से खत्म करने में कितना सक्षम है। इस दिशा में हमारे प्रयासों के लिए भारत में अधिक पारदर्शी और परिणामोन्मुखी आर्थिक प्रबंधन प्रणालियों की ओर तेजी से परिवर्तन की आवश्यकता है।’
श्वेत पत्र में जुलाई 2010 में विश्व बैंक द्वारा जारी एक रिपोर्ट का हवाला दिया गया है, जिसमें 1999 से 2007 तक 162 देशों की 'अप्रत्यक्ष अर्थव्यवस्थाओं' का अनुमान लगाया गया था। रिपोर्ट में कहा गया है कि 2007 में इन देशों की अप्रत्यक्ष अर्थव्यवस्था का भारित औसत आकार (आधिकारिक जीडीपी के प्रतिशत के रूप में) 31 प्रतिशत था, जबकि 1999 में यह 34 प्रतिशत था। भारत के लिए ये आंकड़े क्रमशः 20.7 प्रतिशत और 23.2 प्रतिशत थे। सरकार ने स्वीकार किया कि उसके अपने औद्योगिक नीति एवं संवर्धन विभाग (डीआईपीपी) ने पाया कि अप्रैल 2000 से मार्च 2011 के बीच मॉरीशस से प्राप्त प्रत्यक्ष विदेशी निवेश भारत को प्राप्त कुल राशि का 41.8 प्रतिशत था।
इस तालिका से यह स्पष्ट है कि अप्रैल 2000 से मार्च 2011 तक संचयी निवेश प्रवाह के दो सबसे बड़े स्रोत मॉरीशस (41.8 प्रतिशत) और सिंगापुर (9.17 प्रतिशत) हैं। मॉरीशस और सिंगापुर जैसी छोटी अर्थव्यवस्थाएं इतने बड़े निवेश का स्रोत नहीं हो सकतीं और यह स्पष्ट है कि करों से बचने और/या

राजस्व अधिकारियों से अंतिम निवेशकों की पहचान छिपाने के लिए इन निवेशों को इन देशों के माध्यम से भेजा जाता है। इनमें से कई निवेशक वास्तव में भारतीय निवासी हो सकते हैं, जिन्होंने अपनी ही कंपनियों में निवेश किया है, और यह सब 'राउंड ट्रिपिंग' नामक प्रक्रिया के माध्यम से किया जाता है। सरकार ने इस वास्तविकता को स्वीकार किया।
सबसे बड़ी समस्या यह है कि इस बात का कोई विश्वसनीय अनुमान नहीं है कि कितना पैसा गबन किया जाता है, यह कहाँ से आता है, या इसका कितना हिस्सा आपराधिक गतिविधियों से जुड़ा हो सकता है। यहाँ तक कि सरकार को भी यह नहीं पता कि इस काले धन का कितना हिस्सा आपराधिक कमाई से आता है और कितना प्रतिशत 'सिर्फ' कर चोरी है। भारत के कई सफल व्यापारियों ने वर्षों से आयकर से बचने और देश-विदेश में अपनी आय और निवेश के बारे में असहज सवालों के जवाब देने से बचने के लिए 'अनिवासी भारतीय' का दर्जा प्राप्त कर लिया है। मार्च 2016 में शोध एजेंसी न्यू वर्ल्ड वेल्थ के एक अनुमान के अनुसार, 2015 में भारत से उच्च-निवल संपत्ति वाले व्यक्तियों का चौथा सबसे बड़ा पलायन हुआ, जिसमें 4,000 करोड़पतियों ने अपना निवास स्थान बदला। विडंबना यह है कि भारतीय प्रणाली वास्तव में कैसे काम करती है, इस बारे में हमारे पास जो अधिकांश जानकारी है, वह विदेशों में हुई जांचों के परिणाम स्वरूप प्राप्त होती है - यानी विदेशी कंपनियों द्वारा भारत में अनुबंध हासिल करने की कोशिश करने पर उनके देश के अधिकारियों का ध्यान आकर्षित होने के परिणाम स्वरूप।
रिश्वतखोरी का बोलबाला है और यह सत्ता के हर स्तर तक पहुँचती है, राजनीतिक नेताओं से लेकर सरकारी दफ्तरों के दरवाज़ों पर तैनात कर्मचारियों तक। लगभग हर कोई इस रिश्वतखोरी से लाभान्वित होता है, जिसके चलते चुप्पी छा जाती है। और यही कारण है कि भारत की भ्रष्ट खरीद प्रणाली में शायद ही कभी कोई मुखबिर सामने आता है।
28 मई 2014 को, प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी की भाजपा सरकार ने अपने कार्यकाल के पहले ही दिन अपना पहला महत्वपूर्ण निर्णय घोषित किया: काले धन की जांच के लिए सुप्रीम कोर्ट के एक सेवानिवृत्त न्यायाधीश के नेतृत्व में एक विशेष जांच दल (एसआईटी) का गठन। आम चुनाव से पहले सत्ताधारी यूपीए सरकार के खिलाफ अपने जोरदार अभियान में मोदी ने बार-बार काले धन का ही जिक्र किया था। उन्होंने देश भर में फैले भ्रष्टाचार विरोधी अभियान की

विशाल लहर का फायदा उठाया। हालांकि यह आंदोलन स्वयं काफी हद तक गैर-राजनीतिक और नागरिक समाज द्वारा संचालित था, लेकिन मोदी को इसका सबसे बड़ा राजनीतिक लाभ मिला क्योंकि उन्होंने भारत में अब तक का सबसे खर्चीला अभियान चलाया: चार्टर्ड विमान, हेलीकॉप्टर, होलोग्राम, मीडिया अभियान, सोशल मीडिया और इंटरनेट पर खुलकर रणनीति बनाना आदि। इसलिए यह आश्चर्य की बात नहीं थी कि मोदी ने अपने कार्यकाल के पहले ही दिन उस एसआईटी के गठन की घोषणा कर दी।
विडंबना यह है कि एसआईटी के सामने अब तक आया सबसे बड़ा काला धन का मामला गौतम अडानी द्वारा स्थापित अडानी समूह का है, जो मोदी के सबसे करीबी सहयोगियों में से एक हैं। भावी प्रधानमंत्री ने अपने चार्टर्ड विमान से पूरे भारत का दौरा किया और मौजूदा सरकार पर भ्रष्टाचार से निपटने में विफल रहने का आरोप लगाया। राजस्व खुफिया निदेशालय (डीआरआई) और प्रवर्तन निदेशालय (ईडी) ने एसआईटी को बताया कि अडानी समूह ने कथित तौर पर दक्षिण कोरिया और चीन से बिजली उपकरण आयात करने के लिए बढ़ाए गए बिलों का इस्तेमाल करके 5,000 करोड़ रुपये से अधिक की रकम टैक्स हेवन में भेजी। एसआईटी से जुड़े ईडी के एक वरिष्ठ अधिकारी के अनुसार, अगर अडानी मामले की पूरी जांच हो जाती है, तो समूह को लगभग 15,000 करोड़ रुपये का जुर्माना भरना पड़ेगा। उन्होंने कहा, 'यह एक पुख्ता मामला है,' क्योंकि दस्तावेजों से पता चलता है कि समूह ने दुबई के रास्ते मॉरीशस में 5,468 करोड़ रुपये कैसे भेजे। अडानी समूह किसी भी तरह की गड़बड़ी से इनकार करता है। मोदी, अपने वाकपटुता भरे सफर के बाद, अब तक चुप्पी साधे हुए हैं।
मोदी के सत्ता में आने के बाद से ईडी में जो कुछ हुआ है, वह इसका एक उदाहरण है। ईडी ने अहमदाबाद में अडानी के खिलाफ प्रारंभिक मामला दर्ज किया था और उसे डीआरआई की जांच रिपोर्ट सौंपी गई थी। निदेशालय की अहमदाबाद शाखा के प्रमुख के कार्यालय में सीबीआई ने छापा मारा और उन पर अनुपातहीन संपत्ति रखने का आरोप लगाया। महीनों की जांच के बावजूद सीबीआई कुछ भी साबित नहीं कर पाई। मुंबई क्षेत्रीय कार्यालय के दो वरिष्ठतम अधिकारियों को, जो अहमदाबाद में जांच की देखरेख कर रहे थे, एजेंसी से बाहर कर दिया गया। राजन एस. कटोच, जो मामला दर्ज होने के समय निदेशालय के प्रमुख थे, का कार्यकाल भी अचानक समाप्त हो गया। अडानी मामले के अलावा, अहमदाबाद ईडी के जांचकर्ता गुजरात के कुछ सबसे बड़े मनी लॉन्डररों की भी जांच कर रहे थे।

हालांकि मैं उन सभी अचानक तबादलों में दुर्भावना साबित नहीं कर सकता, लेकिन यह कहना जरूरी है कि इस बात का कोई विश्वसनीय सबूत नहीं है कि मोदी सरकार भारत में काला धन वापस लाने के लिए काम कर रही है। या वास्तव में, इस बात का भी कोई सबूत नहीं है कि वह यहां सामने आने वाले अब तक के सबसे बड़े काले धन के मामले की जांच करेगी।

4

अंदरूनी सूत्र और अपराधी

मैंने अपने फोन पर कॉल का जवाब दिया। राजनयिक घबराई हुई लग रही थी; उसने कहा कि हमारी तुरंत मुलाकात ज़रूरी है। शाम का समय था – अखबार के दफ्तर में सबसे व्यस्त समय – और मैं एक तय समय सीमा को पूरा करने के लिए भागदौड़ कर रही थी। फिर भी, मैं उसकी आवाज़ के लहजे पर सोचने के लिए रुक गई। यह उसका तरीका नहीं था। इससे पहले, वह हमेशा मुझसे कई दिन पहले संपर्क करती थी, और हम आराम से दोपहर के भोजन पर मिलते थे।
अगली सुबह, मैं उससे मिलने के लिए एक कॉफी शॉप पर रुका। वह पहले से ही मेरा इंतजार कर रही थी।
उन्होंने औपचारिक शिष्टाचार के बिना ही अपनी बात शुरू की: 'आप जानते हैं, हम असमंजस में हैं। सरकार और पार्टी के कुछ लोग इस समझौते का इतनी उत्साहपूर्वक समर्थन कर रहे हैं कि हमें समझ नहीं आ रहा कि वे बदले में क्या उम्मीद कर रहे हैं।'
उनका देश दोनों सरकारों के बीच एक अरबों डॉलर के सौदे पर बातचीत के काफी उन्नत चरण में था, जिसके लिए आपूर्ति निजी कंपनियों से की जानी थी। भारतीय प्रधानमंत्री और उनके समकक्ष के बीच शिखर सम्मेलन के दौरान इस सौदे की अचानक आधिकारिक घोषणा ने हलचल मचा दी। कई लोग इसमें शामिल हो गए: एक भारतीय अरबपति जो सौदे का एक हिस्सा करने की उम्मीद कर रहा था, एक हाई-प्रोफाइल पीआर कार्यकारी और कई अन्य बाहरी लोग।
हालांकि, विदेशी देश और मेरे राजनयिक परिचित के लिए जो बात आश्चर्यजनक थी, वह कुछ प्रमुख लोगों द्वारा प्रदर्शित अति उत्साह था। इनमें से एक सत्ताधारी पार्टी का एक महत्वपूर्ण पदाधिकारी था, जिसे प्रधानमंत्री का विश्वास प्राप्त था, और दूसरा एक सेवानिवृत्त सरकारी अधिकारी था जिसे नई सरकार द्वारा एक महत्वपूर्ण पद पर नियुक्त किया गया था।
पार्टी पदाधिकारी ने स्वेच्छा से राजनयिक के सहयोगियों को समझौते के लिए पूर्ण समर्थन देने का वादा किया था। उन्होंने कहा, 'वह इस समझौते का पूरे उत्साह से समर्थन कर रहे हैं, दिन के किसी भी समय हमारे लिए उपलब्ध हैं और समझौते पर बारीकी से नज़र रख रहे हैं।' वहीं, सरकारी पदाधिकारी ने दूसरे

देश की यात्रा के दौरान समझौते पर चर्चा करने पर ज़ोर दिया। उन्होंने स्वीकार किया, 'हमें आश्चर्य हुआ क्योंकि यह उनके अधिकार क्षेत्र में नहीं था। बेशक, हमें खुशी हुई।'
फिर भी, यह सब उलझन भरा भी था। ‘बदले में वे हमसे क्या उम्मीद करते हैं?’ राजनयिक ने संभावित विकल्पों पर विचार करना शुरू किया: क्या वे अपने लिए पैसे की उम्मीद कर रहे हैं, या पार्टी के लिए? सबसे महत्वपूर्ण बात यह थी कि इस विषय को कैसे उठाया जाए? ‘क्या हमें सीधे उनसे पूछ लेना चाहिए कि वे क्या उम्मीद करते हैं? या, क्या आपको कोई बेहतर तरीका पता है?’ शाम को, उनके देश के राष्ट्रपति बैठकों के लिए नई दिल्ली पहुँच रहे थे और दूतावास ब्रीफिंग नोट्स तैयार कर रहा था। हालाँकि, सबसे महत्वपूर्ण मुद्दा अनसुलझा था: उन्हें अभी भी यह नहीं पता था कि किस तरह की रिश्वत देनी होगी। मेरे पास कोई जवाब नहीं था। लेकिन मैं स्थिति से भली-भांति परिचित था। भले ही आपके पास सही अधिकारियों और अन्य संबंधित पक्षों तक पहुँचने के लिए सही मध्यस्थ हों, और भले ही वे सत्ताधारी दल और सरकार के प्रमुख लोगों के हितों का ध्यान रखने का वादा करें, फिर भी सरकार के साथ कोई बड़ा सौदा करते समय हमेशा एक अड़चन आ ही जाती है। आपको कैसे पता चलेगा कि आपके सौदे को आगे बढ़ाने वाले मंत्री या सरकार के प्रमुख पदाधिकारी क्या उम्मीद कर रहे हैं? आप कैसे सुनिश्चित कर सकते हैं कि पेशेवर मध्यस्थ जो कुछ भी कह रहा है वह सच है? आप कैसे सुनिश्चित कर सकते हैं कि भुगतान सही पक्षों तक पहुँचेगा? यही आखिरी सवाल भारतीय सरकार के साथ व्यापार करने वाली वैश्विक कंपनियों के वरिष्ठ अधिकारियों को सबसे ज्यादा परेशान करता है।
मान लीजिए कि आप उन अधिकारियों में से एक हैं। आपके पास महंगे सलाहकार और बिचौलिए हैं जो आपकी कंपनी के लिए सारा सिस्टम संभालते हैं। जब आपको किसी वरिष्ठ सरकारी अधिकारी या मंत्री से मिलना होता है, तो सलाहकार व्यवस्था कर देते हैं, और आपको उस मंत्री से लगभग मुफ्त में मिलने का अधिकार मिल जाता है जिसके विभाग को आपको ठेका देना है। मंत्री जी तो आपसे अपने आधिकारिक आवास पर भी मिलते हैं और आपका गर्मजोशी से स्वागत करते हैं। तो क्या मंत्री जी आपसे सीधे रिश्वत मांगेंगे? बिलकुल नहीं।
दरअसल, मंत्री, या यूं कहें कि कोई भी प्रमुख पदाधिकारी, आपको अपनी मांगें शायद ही कभी बताएगा, जब तक कि वह भारतीय लोकतंत्र की पेचीदगियों में नौसिखिया न हो। यही तो उनके भरोसेमंद आदमी का काम है। उस भरोसेमंद आदमी तक

पहुंचना, सत्ता के शीर्ष पर बैठे लोगों की विशिष्ट जरूरतों को जानना, यही अंतिम बाधा है, सरकार के साथ उच्चतम स्तर पर बातचीत करने का सबसे महत्वपूर्ण पहलू है।
इस पुस्तक के पिछले अध्यायों में मैंने इस घटनाक्रम और इसे संचालित करने वाले मध्यस्थों को समझने का प्रयास किया है। भारतीय प्रणाली की इस पहेली को सुलझाने के लिए, अब हम एक बिल्कुल अलग तरह के मध्यस्थों का अध्ययन करेंगे। ये वे पुरुष और महिलाएं हैं जो सत्ताधारी दल के अनुसार नई दिल्ली में आते-जाते रहते हैं।
इस अध्याय को लिखना आसान नहीं है क्योंकि उपलब्ध साक्ष्य बहुत कम हैं; जिन लोगों का मैं यहाँ वर्णन कर रहा हूँ, वे पूरी तरह से गुमनाम जीवन जीते हैं। हालाँकि, नई दिल्ली में हर घंटे नई सरकार के प्रमुख संपर्कों के बारे में गपशप सुनने को मिलती है। वे व्यवस्था के सबसे महत्वपूर्ण पुर्जे हैं, वे ही हैं जो किसी सौदे के अंतिम चरण को तय करते हैं। ये मध्यस्थ सौदे में शामिल पेशेवर बिचौलियों और कंपनियों को बताते हैं कि भुगतान कैसे करना है, कहाँ करना है, किसे लाभ मिलना चाहिए और किस अनुपात में। उनका कहा हुआ अंतिम होता है।
कुछ ऐसे मौके आए हैं जब जांच एजेंसियों ने ऐसे लोगों की भूमिका दर्ज की है। इनमें से, दो दशकों से अधिक समय तक नई दिल्ली में एक प्रमुख हस्ती रहे एक इतालवी व्यवसायी की कहानी सबसे अच्छी तरह से प्रलेखित है।
1987 में आरोप लगे कि बोफोर्स ने भारतीय सेना से तोपखाने का ठेका हासिल करने के लिए रिश्वत दी थी। बोफोर्स के प्रबंध निदेशक मार्टिन अर्दबो की निजी डायरी के अनुसार, रिश्वत लेने वालों में श्री क्यू का नाम भी शामिल था। बाद में पता चला कि श्री क्यू ओटावियो क्वाट्रोची थे, जो दिल्ली में स्थित थे और तेल और गैस क्षेत्र की दिग्गज कंपनी एनी की इतालवी इंजीनियरिंग कंपनी स्नैमप्रोजेटी के प्रतिनिधि थे।
जल्द ही सबूत सामने आए कि 1984 में भारतीय सेना द्वारा हॉवित्जर तोपों की खरीद के लिए जारी किए गए टेंडर में, संभवतः फ्रांसीसी सोफमा तोप चयन सूची में सबसे ऊपर थी। तत्कालीन सेना प्रमुख भी इसके पक्ष में थे। हालांकि, सेना के फैसले को दरकिनार करते हुए अनुबंध बोफोर्स को मिल गया - यही वह कारनामा था जो क्वात्रोची 1980 के दशक में नई दिल्ली में कर दिखाने में सक्षम थे।

द्वितीय विश्व युद्ध शुरू होने से ठीक पहले फासीवादी इटली में जन्मे क्वात्रोची 1960 के दशक में स्नामप्रोजेटी के लिए काम करने के लिए नई दिल्ली आए। सोनिया गांधी शहर में मौजूद कुछ गिने-चुने इटालियन लोगों में से एक थीं। जल्द ही, क्वात्रोची परिवार और युवा गांधी दंपति एक-दूसरे से परिचित हो गए।
क्या गांधी परिवार को क्वात्रोची के सौदों से फायदा हुआ? इसका कोई सबूत नहीं है। लेकिन हम इतना जरूर जानते हैं कि क्वात्रोची के भारत में रहने के दौरान स्नैमप्रोजेटी ने पूरे भारत में अनगिनत सरकारी ठेके हासिल किए। एक अनुमान के अनुसार, उन्होंने स्नैमप्रोजेटी के लिए एशियाई देशों, मुख्य रूप से भारत से, लगभग 300 अरब रुपये की साठ परियोजनाएं हासिल कीं। हजीरा में सरकारी स्वामित्व वाली ऑयल एंड नेचुरल गैस कॉर्पोरेशन लिमिटेड के लिए गैस पाइपलाइन से लेकर विभिन्न सार्वजनिक क्षेत्र की उर्वरक उत्पादन इकाइयों के संयंत्रों तक, क्वात्रोची लगातार ठेके हासिल करते रहे। जैसे- जैसे उन्हें एक के बाद एक ठेके मिलते गए, सत्ताधारी परिवार से उनकी निकटता के कारण यह बात फैल गई कि वे किसी भी बड़े सौदे के लिए सबसे उपयुक्त व्यक्ति हैं।
मैं यहाँ इसी तरह के अंतिम मध्यस्थ की बात कर रहा हूँ। ये लोग सत्ताधारी नेताओं से निकटता का लाभ उठाकर अपना काम करते हैं। ये लोग पेशेवर बिचौलिए नहीं होते; अक्सर ये इंजीनियरिंग कंपनियों के कार्यकारी अधिकारी, पूर्णकालिक राजनेता, विचार-संस्था प्रमुख होते हैं और अक्सर सत्ता में बैठे लोगों के रिश्तेदार होते हैं, जैसे कि दामाद। जब संबंधित राजनीतिक दल सत्ता से बाहर हो जाता है, तो वे वापस वही काम करने लगते हैं जो वे पहले कर रहे थे।
बोफोर्स कांड ने कांग्रेस पार्टी को भारी नुकसान पहुंचाया। 1989 में राजीव गांधी को चुनाव में करारी हार का सामना करना पड़ा। हालांकि, क्वात्रोची पर इसका कोई असर नहीं हुआ। कांग्रेस और गांधी परिवार ने उन्हें न सिर्फ भारत में बल्कि दुनिया भर में संरक्षण देना जारी रखा, क्योंकि वह कानून से भाग रहे थे। संभवतः उन्हें अपनी मृत्यु तक इनका संरक्षण प्राप्त रहा।
1993 में, जब आधिकारिक तौर पर यह खुलासा हुआ कि वह उस खाते का संचालक है जिसमें बोफोर्स ने अवैध धन जमा किया था, तो सीबीआई ने उसका पासपोर्ट जब्त

कर उससे पूछताछ शुरू कर दी। जुलाई 1993 की एक देर रात, उसकी गिरफ्तारी से कुछ ही घंटे पहले, क्वात्रोची भारत से विमान से बाहर चला गया।
द हिंदू अखबार, जहां चित्रा सुब्रमण्यम और एन. राम ने इस घोटाले की अभूतपूर्व जांच की, ने रिपोर्ट किया कि क्वात्रोची को बोफोर्स के एजेंट एई सर्विसेज के माध्यम से लगभग 8.4 करोड़ रुपये का भुगतान किया गया था, और संभवतः इससे भी अधिक। उन दिनों यह एक बड़ी रकम थी, लेकिन यह स्पष्ट नहीं है कि उन्होंने इसे गांधी परिवार या कांग्रेस पार्टी के साथ साझा किया था या नहीं।
2003 की गर्मियों में, इंटरपोल को बैंक बीएसआई एजी में लगभग 16 करोड़ रुपये और 4.8 करोड़ रुपये वाले दो खाते मिले, जिसके बाद सीबीआई ने इन खातों को फ्रीज करवा दिया। क्वात्रोची द्वारा खातों को अनफ्रीज करवाने के बार-बार किए गए प्रयासों को ब्रिटिश अदालतों ने खारिज कर दिया। सीबीआई की यह निर्णायक कार्रवाई संभवतः भारतीय राजनीति का परिणाम थी: उस समय भाजपा के नेतृत्व वाली गठबंधन सरकार सत्ता में थी।
2004 की गर्मियों में, भारत में एक और राजनीतिक परिवर्तन आया और कांग्रेस वर्षों के हाशिए के बाद केंद्र में वापस आ गई। क्वात्रोची की किस्मत भी पलट गई। दिसंबर 2005 में, केंद्र सरकार ने एक वरिष्ठ विधि अधिकारी को व्यक्तिगत रूप से लंदन भेजा और खातों को डीफ्रीज करवाया। कुछ ही हफ्तों में, दोनों खाते खाली हो गए।
कहानी यहीं खत्म नहीं हुई। 6 फरवरी 2007 को, इंटरपोल की चेतावनी के आधार पर, क्वात्रोची को अर्जेंटीना में हिरासत में लिया गया, लेकिन सीबीआई ने प्रत्यर्पण के लिए बहुत कमजोर प्रयास किए, जिससे वह बच निकला।
कांग्रेस शासन के दौरान, राज्य की पूरी ताकत ने क्वात्रोची की रक्षा की। अप्रैल 2009 में, सीबीआई ने इंटरपोल से इतालवी नागरिक के खिलाफ जारी अंतरराष्ट्रीय रेड-कॉर्नर नोटिस वापस लेने का अनुरोध किया। मार्च 2011 में, दिल्ली की एक निचली अदालत ने बोफोर्स मामले में क्वात्रोची को बरी कर दिया। मजिस्ट्रेट ने कहा कि सीबीआई 21 वर्षों की जांच के बावजूद कोई भी कानूनी रूप से मान्य सबूत पेश करने में विफल रही है। उन्होंने यह भी कहा कि जहां इस घोटाले में रिश्वत की कुल राशि केवल 64 करोड़ रुपये थी, वहीं सीबीआई ने इस मामले पर 250 करोड़ रुपये खर्च किए थे। 13 जुलाई 2013 को मिलान में दिल का दौरा पड़ने से क्वात्रोची का निधन हो गया।

नई दिल्ली में एक इतालवी बिचौलिए का उदय असामान्य है। आमतौर पर, सरकारी निर्णयों पर अंतिम निर्णय लेने वाले पुरुष और महिलाएं सत्ताधारी दलों के परिवारों से ही होते हैं। हाल के वर्षों में, दो दामादों पर इस तरह की भूमिका निभाने का आरोप लगने के बाद वे सार्वजनिक जांच के दायरे में आ गए हैं।
होटल प्रबंधन के क्षेत्र में कार्यरत रंजन भट्टाचार्य 1996 में राष्ट्रीय स्तर पर चर्चा में आए, जब अटल बिहारी वाजपेयी के नेतृत्व में भारत की पहली दक्षिणपंथी सरकार सत्ता में आई। वाजपेयी की दत्तक पुत्री नमिता से विवाहित भट्टाचार्य को प्रधानमंत्री के विशेष कार्यपालक (ओएसडी) के रूप में नियुक्त किया गया। उच्च पद पर उनका पहला कार्यकाल केवल तेरह दिनों तक ही चला, क्योंकि वाजपेयी के नेतृत्व वाली भाजपा सरकार संसद में अविश्वास प्रस्ताव में असफल रही।
भट्टाचार्य, जो दुनिया भर में लग्जरी होटल चलाने वाले ओबेरॉय समूह के सबसे युवा महाप्रबंधकों में से एक थे, ने 1980 के दशक के अंत में अपना खुद का उद्यम शुरू करने के लिए अपनी नौकरी छोड़ दी थी।
1998 में, जब वाजपेयी प्रधानमंत्री के रूप में वापस आए, तब भट्टाचार्य को राष्ट्रीय राजधानी में एक महत्वपूर्ण व्यक्ति के रूप में पहचान मिलने लगी थी। वरिष्ठ पत्रकार प्रभु चावला ने अप्रैल 2001 में समाचार पत्रिका इंडिया टुडे में लिखा: ‘श्रीमती और श्री भट्टाचार्य का सामाजिक दायरा बढ़ने लगा और उसमें होटल व्यवसायी ललित सूरी, उद्योगपति नुस्ली वाडिया, पत्रकार वीर संघवी, अखबार मालिक शोभना भारतीय जैसे लोग शामिल होने लगे। संक्षेप में, वे लोग जो महत्वपूर्ण थे और जो सत्ता को आधुनिक रूप देने के विचार को पसंद करते थे। राजनेता तो नाममात्र के ही थे, अपवाद स्वरूप समाजवादी पार्टी के अमर सिंह और अरुण जेटली, भाजपा की वसुंधरा राजे और महाजन थे।’
जिस समय चावला ने वह लेख लिखा था, वाजपेयी सरकार अपने कई फैसलों को लेकर आलोचनाओं का सामना करने लगी थी। चावला ने लिखा, "भाजपा के कुछ हद तक संयमित सामाजिक परिवेश में पूरी तरह से बेमेल, भट्टाचार्य 'संवैधानिक सत्ता से इतर' जैसे भव्य पद के लिए एक अप्रत्याशित उम्मीदवार थे। लेकिन उन्होंने एक सौदेबाज के रूप में ख्याति अर्जित की है, जिनके बारे में भाजपा के पूर्व

अध्यक्ष बंगारू लक्ष्मण का मानना था कि वे 'इस तरह और उस तरह' के कामों में शामिल हैं।"
नई दिल्ली में भट्टाचार्य के उदय का आकलन करने के लिए चावला की स्थिति अद्वितीय थी। इंडिया टुडे के संपादक होने के नाते और पार्टी के छात्र कार्यकर्ता के रूप में अपने अतीत के कारण, उन्हें अंदरूनी जानकारी थी। 'अब तक तो बातचीत राजनीतिक ही रही है, लेकिन पिछले कुछ महीनों में, विशेष रूप से सरकार द्वारा कुछ ऑपरेटरों के पक्ष में अपनी दूरसंचार नीति में अप्रत्याशित रूप से बदलाव करने के बाद, भट्टाचार्य की बड़े सरकारी निर्णयों और महत्वपूर्ण नियुक्तियों को प्रभावित करने की क्षमता पर चर्चा केंद्रित हो गई है। दूसरी ओर, नमिता भोजन की मेज पर हावी रहती थीं, जो वाजपेयी की जनता के प्रति धारणा को प्रभावित करती थीं। अब तक किसी ने भी भट्टाचार्य को किसी सौदे से जोड़ने वाला कोई सबूत पेश नहीं किया है। लेकिन सरकारी निर्णयों और "इधर-उधर" में दखल देने वाले एक मौज-मस्ती करने वाले दामाद की छवि बनी हुई है।'
उन्होंने आगे कहा कि 'महान भारतीय परिवार रोग', जिसने कई प्रमुख भारतीय राजनेताओं को संक्रमित किया था, अब अविवाहित वाजपेयी को भी सता रहा है। भट्टाचार्य लाइमलाइट से दूर रहे। वाजपेयी के सत्ता में लौटने के कुछ समय बाद, जुलाई 1998 में उन्होंने अब बंद हो चुकी संडे पत्रिका को जो दुर्लभ साक्षात्कार दिया था, वह बहुत कुछ बयां करता है।
क्या उनकी नियुक्तियों को तय करने में आपकी कोई भूमिका नहीं है? मैं नियुक्तियाँ तय नहीं करता। उनके लिए एक निजी सचिव हैं जो यह काम करते हैं। और उनकी नियुक्तियाँ 7 आरसीआर (प्रधानमंत्री आवास) या साउथ ब्लॉक से तय होती हैं, न कि 3 आरसीआर से, जहाँ मैं रहता हूँ। और एक बात और। श्री वाजपेयी को प्रधानमंत्री बने अब सौ दिन हो गए हैं। मैं साउथ ब्लॉक सिर्फ एक बार गया हूँ और वह भी उन्हें प्रधानमंत्री बनने पर बधाई देने के लिए। मैं 7 आरसीआर सिर्फ चार-पाँच बार गया हूँ – और वह 3 आरसीआर से सिर्फ सौ गज की दूरी पर है। लेकिन अपॉइंटमेंट तय करने के लिए आपको शारीरिक रूप से उपस्थित होने की आवश्यकता नहीं है।
सच है। लेकिन मैं कोई अपॉइंटमेंट तय नहीं करता।
आरोप यह है कि आप अपॉइंटमेंट तय करने के लिए भी पैसे लेते हैं।
(अविश्वास से हंसते हुए) अपॉइंटमेंट तय करने के लिए कोई पैसे क्यों लेगा?

क्यों नहीं?
आपके लिए सबसे अच्छा यही होगा कि आप पिछले तीन महीनों में वाजपेयी द्वारा की गई मुलाकातों की सूची देखें। आपको पता चलेगा कि उनसे मिलने जाने वाले लोगों को किसी तरह का पैसा देने की जरूरत नहीं पड़ती। वे ज्यादातर नौकरशाह और राजनेता होते हैं।
उद्योगपतियों के बारे में क्या?
मुझे किसी उद्योगपति के बारे में जानकारी नहीं है।
मारुति सौदे में आप और प्रमोद महाजन द्वारा धन कमाने के आरोप के बारे में क्या? श्री महाजन और मेरा मारुति समझौते से कोई लेना-देना नहीं था।
2004 की गर्मियों में, जब भाजपा सरकार को अप्रत्याशित हार का सामना करना पड़ा और सोनिया गांधी के नेतृत्व वाले कांग्रेस गठबंधन ने सत्ता हासिल की, तो सोनिया गांधी ने डॉ. मनमोहन सिंह को प्रधानमंत्री चुना। हालांकि, जल्द ही रॉबर्ट वाड्रा - जो राजीव और सोनिया गांधी की बेटी प्रियंका गांधी के पति थे - और उनके अनुचित प्रभाव की चर्चा शुरू हो गई। कांग्रेस के नेतृत्व वाली सरकार के एक दशक के शासनकाल में, सरकारी ठेकों में हेरफेर में वाड्रा की संलिप्तता का कोई ठोस सबूत नहीं मिला। हालांकि, सरकार से जुड़े कई महत्वपूर्ण लोग उनके प्रभाव के बारे में बात करते रहे। वे कभी-कभार किसी भव्य शाम की पार्टी में या किसी लाइफस्टाइल पत्रिका में नजर आते थे, लेकिन उनके प्रभाव का इससे अधिक कोई ठोस प्रमाण नहीं था।
अंततः यह बात सामने आई कि वाड्रा ने भारत की सबसे बड़ी निर्माण कंपनियों में से एक, डीएलएफ की उदारता और कांग्रेस शासित राज्य सरकारों के समर्थन के बदौलत कुछ ही वर्षों में करोड़ों की संपत्ति अर्जित कर ली थी।
पूर्व सेना अधिकारी और डीएलएफ के अध्यक्ष कर्नल कुशल पाल सिंह भारत के निर्माण क्षेत्र में आई तेज़ी का चेहरा हैं। उन्होंने नवंबर 2011 में एक टेलीविजन साक्षात्कार में वरिष्ठ पत्रकार शेखर गुप्ता से कहा था: 'मेरी समझ में रिश्वत दो भागों में बंटी है: पहला, जब आप किसी को जल्दी काम निपटाने के लिए पैसे देते हैं। दूसरा, जब कोई आपसे कोई गलत काम करने को कहता है तो आप पैसे देते हैं। अब मेरी समझ में रिश्वत का मतलब गलत काम करना है, जो मैंने अपने जीवन में कभी नहीं किया।' जाने-माने पत्रकार ने इस बारे में और कोई स्पष्टीकरण नहीं मांगा। सिंह ने कभी भी सार्वजनिक रूप से यह

नहीं बताया कि वाड्रा ने ऐसा क्या किया था जिसके कारण उन पर इतनी मेहरबानी बरसाई गई।
अक्टूबर 2012 में, भ्रष्टाचार विरोधी कार्यकर्ताओं अरविंद केजरीवाल, प्रशांत भूषण और योगेंद्र यादव ने दावा किया कि रॉबर्ट वाड्रा की संपत्ति महज 50 लाख रुपये से बढ़कर 300 करोड़ रुपये हो गई है। भूषण ने एक प्रेस कॉन्फ्रेंस में आरोप लगाया, 'पिछले चार वर्षों में, रॉबर्ट वाड्रा ने संपत्ति खरीदने का सिलसिला जारी रखा है और नई दिल्ली और उसके आसपास कम से कम इकत्तीस संपत्तियां खरीदी हैं, जिनकी कीमत खरीद के समय भी कई सौ करोड़ रुपये थी।'
कार्यकर्ताओं ने कहा कि डीएलएफ वाड्रा को न केवल नकद दे रहा था, बल्कि बाजार भाव से कहीं कम कीमत पर संपत्तियां भी बेच रहा था। भूषण ने तीखे लहजे में पूछा, 'देश के सत्ताधारी राजवंश के दामाद के खिलाफ एफआईआर कौन दर्ज करेगा?'
केजरीवाल, जो इसके तुरंत बाद राजनीति में आए और दिल्ली में सत्ता में आए, ने कहा कि सौदा सरल था: डीएलएफ ने पूरे भारत में वाड्रा को बहुत कम दरों पर जमीन और संपत्तियां बेचीं; बदले में, डीएलएफ को राज्य स्तर पर कांग्रेस सरकारों से लाभ मिला।
वद्रा की किस्मत को समझना आसान है। 2004 में, जब कांग्रेस पार्टी और उसके सहयोगी दलों ने सत्ता में भारी बहुमत हासिल किया, तब वद्रा सस्ते नकली आभूषणों के निर्यात का व्यवसाय चला रहे थे। 2007 तक, उन्होंने रियल एस्टेट में कदम रखा और मात्र 1 लाख रुपये की पूंजी से स्काई लाइट हॉस्पिटैलिटी नाम की एक कंपनी पंजीकृत कराई। कंपनी ने गुड़गांव में एक राजमार्ग के पास 3.5 एकड़ कृषि भूमि 7.5 करोड़ रुपये में खरीदी। वैसे भी, यह भूमि केवल कृषि उद्देश्यों के लिए ही इस्तेमाल की जा सकती थी। हालांकि, कुछ महीनों बाद, वद्रा ने कांग्रेस शासित हरियाणा सरकार से कृषि भूमि को व्यावसायिक उपयोग में बदलने की अनुमति के लिए आवेदन किया। अनुमति तुरंत मिल गई और जमीन की कीमत में तेजी से उछाल आ गया।
जब भूमि रूपांतरण की प्रक्रिया चल रही थी, उसी दौरान डीएलएफ ने वाड्रा की कंपनियों को करोड़ों रुपये का असुरक्षित ऋण देना शुरू कर दिया। 2012 में, डीएलएफ ने 58 करोड़ रुपये में वह जमीन वापस खरीद ली। प्रक्रिया सरल थी: डीएलएफ ने वाड्रा को सस्ती कृषि भूमि खरीदने के लिए धन दिया, जिसे

उन्होंने राजनीतिक प्रभाव का उपयोग करके व्यावसायिक उपयोग के लिए परिवर्तित किया और भारी मुनाफे पर डीएलएफ को वापस बेच दिया।
2012 तक, वाड्रा के पास 300 करोड़ रुपये से अधिक की संपत्ति थी, जिसमें राष्ट्रीय राजधानी में एक पांच सितारा होटल में एक महत्वपूर्ण हिस्सेदारी भी शामिल थी।
कांग्रेस के नेतृत्व वाले यूपीए गठबंधन के भारत पर शासन करने के दस वर्षों के दौरान, वाड्रा का भाग्य भले ही चमक उठा हो, लेकिन इस बात का कोई ठोस सबूत नहीं था कि उन्होंने किसी बड़े सौदे को अंजाम देने में कोई महत्वपूर्ण भूमिका निभाई थी।
राजधानी में फैली अफवाहों में कई अन्य लोगों के नाम सामने आए जिन्होंने उच्च स्तरीय मध्यस्थ की महत्वपूर्ण भूमिका निभाई। यह कहने की आवश्यकता नहीं है कि उनकी संलिप्तता का कोई दस्तावेजी प्रमाण नहीं है। एक उद्यमी, जो सांसद भी हैं, का नाम अक्सर प्रमुख रक्षा सौदों के संबंध में सुना जाता था। सैन्य मुद्दों के प्रति उनके आक्रामक रवैये सहित उनके स्वयं के आचरण ने इस संदेह को और बल दिया कि वास्तव में वही व्यक्ति थे जिन्होंने एक यूरोपीय कंपनी के साथ हजारों करोड़ रुपये के एक बड़े रक्षा सौदे को संपन्न कराया था। यह व्यक्ति और उनके जैसे अन्य लोग भारत के लड़खड़ाते लोकतंत्र के सबसे शक्तिशाली दलाल हैं।
हाल के वर्षों में, जब भी कर आश्रय स्थलों में स्थित गुप्त कंपनियों के बारे में जानकारी सार्वजनिक हुई है, तब से इस बात के पर्याप्त सुराग मिले हैं कि अंतिम मध्यस्थों और शक्तिशाली राजनेताओं ने अपना पैसा कहाँ और कैसे जमा किया और उसे भारत कैसे वापस भेजा। पनामा, लिकटेंस्टीन या एचएसबीसी जिनेवा में गुप्त फर्मों और खातों के बारे में हाल ही में सामने आए दस्तावेजों से इस प्रक्रिया के बारे में कुछ संकेत मिले हैं। भ्रष्ट सरकारी खरीद और सार्वजनिक अनुबंधों के सबसे शक्तिशाली मध्यस्थों और लाभार्थियों की बड़ी भारतीय कहानी अभी तक सामने नहीं आई है। हालांकि, डिजिटल क्रांति आने वाले वर्षों में निश्चित रूप से और अधिक विशिष्ट जानकारियों को सामने लाएगी।
2016 की शुरुआत में, जब मैं इस किताब को अंतिम रूप दे रहा था, नरेंद्र मोदी के नेतृत्व में एक नई सरकार सत्ता में आई थी। तब तक कोई बड़ा घोटाला सामने नहीं आया था, लेकिन आने वाले समय के अशुभ संकेत हर जगह दिखाई दे रहे थे।

विदेशी व्यापारी और प्रमुख कॉरपोरेट जगत के नेता एक महत्वपूर्ण भाजपा नेता के बेटे का नाम फुसफुसा रहे थे, जो अब सरकार में एक महत्वपूर्ण पद पर है। ऐसा लग रहा था कि वह किसी सौदे में अनुचित रुचि ले रहा है। एक दिन, बहुत दूर नहीं, हमें एक नए घोटाले की खबर सुनने को मिल सकती है। कौन कह सकता है? नई दिल्ली के सत्ता गलियारों में एक ही बात निश्चित है कि कहीं न कहीं सौदे हो रहे हैं, और पेशेवर बिचौलिए और राजनीतिक दलाल मिलकर सब कुछ तय कर रहे हैं: कौन सा टैक्स हेवन, कितनी फर्जी कंपनियां, निर्यात या आयात फर्म, गैर सरकारी संगठन या ट्रस्ट, किसे क्या मिलेगा और किस अनुपात में। वे भारत में तेजी से हो रहे डिजिटलीकरण के खिलाफ लगातार संघर्ष कर रहे हैं, जो पारदर्शिता को बढ़ावा देगा, और अपने काले धन को इकट्ठा करने और जमा करने के लिए लगातार नए-नए कुटिल तरीकों और गुप्त ठिकानों की तलाश में लगे हुए हैं।

ISTOCKPHOTO

भाग दो

अत्यंत निजी निजी क्षेत्र

यह व्यापार करने के तरीके पर एक शिक्षाप्रद मार्गदर्शिका है। और आधुनिक भारत में सफल हों। तीन अध्याय
ये मात्र उदाहरण मात्र हैं, बेशक।
एक उद्यमी व्यक्ति पूरी तरह से नया विचार लेकर आ सकता है।
एक नया, अनछुआ मार्ग – भारत एक ऐसी भूमि है
अनंत अवसर।

5

आसमान के लिए लड़ाई

"भगवान का शुक्र है," फारुख अहमद बरकतलाई शेख ने धीरे से कहा जब गहरे नीले रंग की मर्सिडीज बेंज आखिरकार स्टार्ट हुई। यह 13 नवंबर 1995 की शाम थी। अरब सागर से आती एक सुहावनी हवा भारत की वाणिज्यिक राजधानी बॉम्बे पर बह रही थी, और बांद्रा के घुमावदार रास्तों पर नियॉन लैंप जगमगाने लगे थे। शहर की मूल बस्तियों में से एक, बांद्रा अब फिल्म सितारों और अन्य नवधनी लोगों का घर है।
युवा ड्राइवर इस बात से परेशान था कि नई आयातित मर्सिडीज़ स्टार्ट नहीं हो रही थी, जिससे उसके बॉस, ईस्ट वेस्ट एयरलाइंस के प्रबंध निदेशक, थकियुद्दीन अब्दुल वाहिद के प्रस्थान में देरी हो रही थी। इस बीच, निजी एयरलाइन के कॉर्पोरेट कार्यालय में अन्य सहकर्मी थकियुद्दीन को घर वापस ले जाने के लिए दूसरी कार की व्यवस्था कर रहे थे - घर सड़क से लगभग एक किलोमीटर दूर, एक तीखे मोड़ के बाद था, जहाँ एक सफेद क्रॉस अभी भी वीरान खड़ा है। घर एक आलीशान डुप्लेक्स अपार्टमेंट था, जिसमें अरब सागर की ओर खुलने वाली बड़ी-बड़ी कांच की खिड़कियाँ थीं। अंततः, थकियुद्दीन बरकतलाई के साथ रवाना हो गए।
चालीस वर्षीय थकियुद्दीन ने एक और व्यस्त दिन का समापन किया था, जिसमें उन्होंने दैनिक संचालन की समीक्षा की और भारत की अग्रणी एयरलाइन के विस्तार योजनाओं पर चर्चा की। दिन का अंतिम कार्य स्वीडिश विमान पट्टे पर देने वाली कंपनी कोलिंग से पट्टे-खरीद समझौते के तहत दो बोइंग 737-400 विमानों को शामिल करने के प्रस्तावित प्रस्ताव पर अपने पायलटों के साथ एक लंबी बैठक थी। रात लगभग 8 बजे, उन्होंने अपने छोटे भाई और कंपनी के निदेशकों में से एक, फैसल से उस दिन दूसरी बार बात की। फैसल दो विमानों को लेने के लिए यूरोप में थे और डबलिन की कड़ाके की ठंड से बचने के लिए लंदन आए थे, जहाँ एयर लिंकर्स सुविधा केंद्र में विमानों को तैयार किया जा रहा था। थकियुद्दीन देरी को लेकर चिंतित थे और पाँच मिनट की बातचीत के दौरान उनकी आवाज़ में अधीरता झलक रही थी। वे चाहते थे कि फैसल आंतरिक साज-सज्जा और अन्य फिटिंग की बारीकियों को बाद के लिए छोड़ दें और यह सुनिश्चित करें

कि विमान अगले कुछ हफ्तों में भारत पहुँच जाएँ। इस सौदे के लिए अग्रिम के रूप में लगभग 13 करोड़ रुपये जमा करने के बाद, ईस्ट वेस्ट एयरलाइंस अपने विस्तार के अगले चरण को इन दो मशीनों पर दांव पर लगा रही थी।
रात करीब 8:30 बजे जब सजीना ने अपने पति को फोन किया, तो थकियुद्दीन ने कहा कि पायलटों के साथ बैठक के बाद वह रात के खाने के लिए घर आ जाएँगे। उनके बच्चे, आठ साल की शहनाज़ और सात साल का साहिल, पापा के घर आने का बेसब्री से इंतज़ार कर रहे थे। वह एक स्नेही पिता थे।
रात के लगभग 9:25 बज रहे थे। कार अभी डॉक्टर अब्बास साजुन के क्लिनिक तक ही पहुंची थी कि एक संकरी चौराहे से एक लाल मारुति वैन पीछे की ओर आई और नीली मर्सिडीज का रास्ता रोक दिया। वैन से तीन हथियारबंद लोग निकले, जिनमें से एक के हाथ में हथौड़ा था, और वे थकियुद्दीन की कार की ओर बढ़ने लगे। हथौड़ा लिए हुए व्यक्ति ने विंडस्क्रीन तोड़ना शुरू कर दिया। बाकी दो लोगों ने कार पर गोलियां चलाना शुरू कर दिया। थकियुद्दीन ने सीटों के पीछे छिपने की कोशिश की, लेकिन फिर भी गोलियों की बौछार उन पर बरस पड़ी। उन्होंने घबराकर अपने ड्राइवर से कहा, 'पीछे करो, पीछे करो!' लेकिन उस संकरी सड़क पर गाड़ी को आगे बढ़ाने की जगह बहुत कम थी।
हमलावर अपनी वैन की ओर भागे और गाड़ी चलाकर निकल गए। शुरुआती सदमे के बाद, बरकतलाई को होश आया और उन्होंने अपनी मर्सिडीज को उनकी वैन से टक्कर मार दी, लेकिन हमलावर भागने में कामयाब रहे। जैसे ही वे गाड़ी चलाकर निकले, उन्होंने रियर-व्यू मिरर में देखा कि उनके बॉस को बहुत खून बह रहा था। उन्होंने जितनी जल्दी हो सके गाड़ी घुमाई और मदद के लिए चिल्लाते हुए वापस ऑफिस की ओर चल दिए। ऑफिस पहुँचकर, ईस्ट वेस्ट का एक कर्मचारी उनके साथ गाड़ी में बैठ गया और बरकतलाई ने फिर से गाड़ी घुमाई और पास के भाभा जनरल अस्पताल की ओर दौड़ पड़े। जब रात करीब 9.55 बजे थकियुद्दीन को इमरजेंसी वार्ड में लाया गया, तब तक उनकी मौत हो चुकी थी।
इस हत्या ने ईस्ट वेस्ट एयरलाइंस की अप्रत्याशित तरक्की को तहस-नहस कर दिया। यह बॉम्बे में आपराधिक गिरोहों की गहरी पकड़ का एक और सबूत भी था। बॉम्बे पुलिस और भारतीय खुफिया एजेंसियों के कई अधिकारी इस हत्या से पूरी तरह हैरान नहीं थे। उन्हें लंबे समय से शक था कि एयरलाइन दाऊद इब्राहिम के साथ आर्थिक रूप से जुड़ी हुई है। 1993 में बॉम्बे में हुए तेरह बम धमाकों

की साजिश रचने और 257 लोगों की जान लेने के आरोपों के बाद, यह सरगना उस समय पाकिस्तान में छिपा हुआ था।
हत्या की जांच में शामिल एक वरिष्ठ पुलिस अधिकारी ने मुझे बताया कि उनके पास कई सबूत हैं जिनसे पता चलता है कि दाऊद ने ईस्ट वेस्ट एयरलाइंस को आंशिक रूप से वित्त पोषित किया था। दाऊद के प्रतिद्वंद्वियों - दाऊद के गिरोह के हिंदू सदस्यों, जो सिलसिलेवार बम धमाकों के बाद मुस्लिम डॉन से अलग हो गए थे - के निशाने पर थकियुद्दीन भी था। बॉम्बे पुलिस ने कुछ ही दिन पहले थकियुद्दीन को उसकी जान को खतरे के बारे में चेतावनी दी थी। अधिकारी ने 1990 के दशक की अपनी चमड़े की जिल्द वाली जांच डायरी खोली, जिसमें दाऊद के प्रतिद्वंद्वी डॉन छोटा राजन के शीर्ष निशाने पर थकियुद्दीन का नाम दर्ज था।
अब पीछे मुड़कर देखने पर यह स्पष्ट हो जाता है कि यह हत्या भारत के आर्थिक उदारीकरण के भयावह पहलू का एक स्पष्ट संकेत थी, जिसने भारत की पारंपरिक विभाजन रेखाओं को चीरते हुए उसके नीचे छिपी अराजकता की कई परतों को उजागर किया। दो दशक से अधिक समय बीत चुका है और सुरक्षा एजेंसियों के गुप्त ठिकानों में नए सबूत जमा होते जा रहे हैं। तब तो यह एक और गुप्त हत्या थी, लेकिन अब व्यापक संदर्भ स्पष्ट है: आर्थिक उदारीकरण अनैतिक राजनीति, आपराधिक गिरोहों, संदिग्ध वित्त और आपराधिक तत्वों की कमजोर नींव पर टिका हुआ है। सूचना प्रौद्योगिकी उद्योग में सफल हो रहे पहली पीढ़ी के उद्यमियों की दिल को छू लेने वाली कहानियाँ और व्यवसाय जगत के दिग्गजों की परोपकारी पहलों की खबरें इस कड़वी सच्चाई को मिटा नहीं सकतीं कि भारतीय व्यापार का एक बड़ा हिस्सा अभी भी आपराधिक संबंधों और गतिविधियों पर फलता- फूलता है। यह कोई संयोग नहीं है कि भारत के सबसे सफल व्यवसायी न केवल दुनिया के सबसे धनी लोगों की सूची में शामिल हैं, बल्कि केंद्रीय और राज्य नियामकों, लेखा परीक्षकों और जांचकर्ताओं के निशाने पर भी हैं।
कई मायनों में, थकियुद्दीन उन नए उद्यमियों का प्रतीक थे जिन्होंने देश को पांच दशकों के समाजवाद से अलग होने के लिए प्रेरित किया। वे महत्वाकांक्षी, साहसी और सफलता की भूख से प्रेरित थे। ये नए धुरंधर अपने समाजवादी पूर्ववर्तियों की तुलना में नियमों को तोड़ने और उनका उल्लंघन करने के लिए कहीं अधिक तत्पर थे, और उनके पास ऐसा करने के अधिक अवसर भी थे। भ्रष्ट राजनेताओं और नौकरशाहों, ढीले नियामक नियंत्रणों और संदिग्ध

स्रोतों से मिलने वाले आसान धन से भरे देश में, उन्हें फलने-फूलने की भरपूर गुंजाइश मिली।
आज के कई सबसे धनी पुरुषों और महिलाओं ने उदारीकरण के बाद अपनी संपत्ति अर्जित की। पेट्रोल पंप पर काम करने वाले एक साधारण कर्मचारी से रिलायंस समूह के अरबपति मालिक बनने तक धीरूभाई अंबानी का शानदार उदय इस बात का प्रमाण है कि उदारीकरण प्रणाली सभी के लिए लाभकारी है। वे भारतीय पूंजीपतियों के एक नए वर्ग के अग्रदूत थे, लेकिन वे अकेले नहीं थे। गौतम अडानी ने 1988 में एक कमोडिटी-ट्रेडिंग फर्म से शुरुआत की और बंदरगाहों, बिजली स्टेशनों और कई अन्य व्यवसायों का निर्माण किया। उनका वार्षिक राजस्व 2000 में 3,300 करोड़ रुपये से बढ़कर 2013 में 47,000 करोड़ रुपये से अधिक हो गया। ग्रांधी मल्लिकार्जुन राव ने 1978 में जीएमआर समूह की स्थापना की और 28 अलग-अलग व्यवसायों में हाथ आजमाया, और 1991 में अर्थव्यवस्था के खुलने के बाद उन्हें इसका भरपूर लाभ मिला। आज, राव का जीएमआर समूह सड़क निर्माण, बिजली परियोजनाओं और हवाई अड्डों के निर्माण में अग्रणी है।
हालांकि जी.एम. राव के समान पैमाने पर नहीं, लेकिन थाकिउद्दीन ने भी उदारीकरण से पहले के दिनों में अपना कामकाजी जीवन शुरू किया था।
ताकी, जैसा कि उन्हें प्यार से बुलाया जाता था, केरल की शांत राजधानी तिरुवनंतपुरम से लगभग 50 किलोमीटर दूर स्थित ओदयम नामक एक मछली पकड़ने वाले गाँव के रहने वाले थे। ताकीउद्दीन ग्यारह बच्चों में से एक थे, जिनमें से कई ने फारस की खाड़ी और मुंबई में खूब धन कमाया। उनके पिता, हाजी अब्दुल वाहिद मुसलियार, एक प्रमुख स्थानीय व्यापारी और इस्लामी विद्वान थे। उन्होंने दक्षिण भारत के शहरों और श्रीलंका तक मछली, काजू और अन्य स्थानीय उत्पादों की आपूर्ति करके अपनी संपत्ति बनाई थी। मुसलियार बड़ी मात्रा में मछलियाँ, विशेष रूप से एक लोकप्रिय प्रकार की एंकोवी मछली, खरीदते थे और उन्हें दिन समाप्त होने से पहले सुखाकर भेज देते थे। यह एक जोखिम भरा व्यवसाय था क्योंकि पूरी पकड़ की बिक्री धूप वाले दिन पर निर्भर करती थी। जब वे दिन भर की पकड़ को सुखाकर भेजने में सफल हो जाते थे, तो मुसलियार को भारी मुनाफा होता था। अन्य दिनों में, पूरी पकड़ बर्बाद हो जाती थी। लेकिन यह व्यवसाय मॉडल मुसलियार के लिए स्पष्ट रूप से कारगर साबित हुआ; वे अपने गाँव के पहले व्यक्ति थे जिनके पास कार थी।

थकियुद्दीन एक उद्यमी बच्चा था। स्कूल से लौटते ही वह अपने पिता के समुद्र किनारे स्थित गोदाम की ओर दौड़ पड़ता था, जो दो मंजिला लकड़ी का भवन था। यहीं मुसलियार अपनी सूखी मछलियाँ रखता था और यहीं से माल को ट्रकों में लादकर जहाजों को भेजता था। गोदाम के बगल में, समुद्र तट पर फैला हुआ, दिन भर की पकड़ी गई मछलियाँ सूखने के लिए रखी रहती थीं। एक नासमझी भरे क्षण में, पिता ने अपने कारोबार को बढ़ाने के लिए पैसे उधार लेने के उद्देश्य से उस गोदाम को एक रिश्तेदार के पास गिरवी रख दिया था। जल्द ही, गोदाम और दफ्तर दोनों गायब हो गए। अब उस स्थान पर एक छोटा सा रिसॉर्ट है। इसके तुरंत बाद मुसलियार की सारी दौलत हवा में उड़ गई और परिवार को भारी आर्थिक तंगी का सामना करना पड़ा।
मुश्किल दौर ज़्यादा समय तक नहीं चला। 1960 के दशक के उत्तरार्ध में फारस की खाड़ी में शुरू हुए तेल उछाल के कारण निर्माण और तेल अन्वेषण के कारोबार को चलाने के लिए श्रमिकों की आवश्यकता थी। केरल उन पहले स्थानों में से था जहाँ से खाड़ी के शेख़ों ने श्रमिकों की भर्ती शुरू की, और ओदयम के मुसलमान सबसे पहले लाभान्वित होने वालों में से थे - उनमें वाहिद बंधुओं का परिवार भी शामिल था। 1970 के दशक तक, ओदयम में शायद ही कोई ऐसा पुरुष बचा था जो अरब सागर में उतरकर उसकी प्राकृतिक संपदा को वापस लाने के लिए तैयार हो; मछली पकड़ने की झोपड़ियों की जगह जल्द ही रंग-बिरंगे कंक्रीट के घर बन गए। यह शांत मछली पकड़ने वाला गाँव वैश्विक अर्थव्यवस्था में शामिल हो गया, और बाकी देश भी निकट भविष्य में इसी राह पर चल पड़ा।
वाहिद परिवार के जीवन में आए बदलाव की कहानी 1970 के दशक की शुरुआत में मुंबई के भीड़भाड़ वाले पुराने हवाई अड्डे पर एक दोपहर को शुरू हुई। एक मूंछों वाला युवक ज़मीन से अपना चमड़े का बटुआ उठाने के लिए झुका और हवाई अड्डे के प्रवेश द्वार की ओर बढ़ रहे एक हट्टे-कट्टे अरब व्यक्ति के पीछे भागा। युवक ने अरब व्यक्ति को रोका और बटुआ उसे सौंप दिया। 'महोदय, यह आपसे गिर गया था।' दूसरे व्यक्ति ने धीरे से धन्यवाद कहा और फिर अपना एक विजिटिंग कार्ड उसे दे दिया। 'अगर आपको कभी किसी सहायता की आवश्यकता हो तो मुझे फोन कर देना,' उसने कहा और बहरीन वापस जाने वाली अपनी उड़ान पकड़ने के लिए मुड़ गया। वह युवक इस आकस्मिक मुलाकात से उत्साहित और प्रेरित होकर शहर लौट आया।

कुछ दिनों बाद, विजिटिंग कार्ड पर दिए नंबर पर कॉल करके उसने पेफोन से कहा, 'सर, मैं नासिरुद्दीन बोल रहा हूँ।' सीधे मुद्दे पर आते हुए, उस अरब व्यक्ति ने नासिरुद्दीन वाहिद से पूछा कि क्या वह बहरीन आना चाहेंगे। नासिरुद्दीन तुरंत सहमत हो गए और कुछ दिनों बाद उन्होंने विजिटिंग वीजा के लिए आवश्यक सभी दस्तावेज़ जुटा लिए। इसके साथ ही, वह अहमद मंसूर अल आली से मिलने के लिए अपनी पहली विदेश यात्रा पर निकल पड़े। अल आली के व्यस्त कार्यालय में पहुँचते ही नासिरुद्दीन को पता चला कि वह विनम्र अरब व्यक्ति बहरीन के सबसे बड़े नियोक्ता के अध्यक्ष का दामाद और बहरीन के शाही परिवार का सदस्य था। प्रभावशाली दामाद का अहमद मंसूर अल आली समूह भारतीय श्रमिकों की भर्ती करने वाले सबसे बड़े समूहों में से एक था। दरअसल, नासिरुद्दीन के नए संरक्षक भारत में भर्ती के एक दौर के बाद घर लौट रहे थे, जब दोनों की मुलाकात हुई। अल आली के दफ्तर में लाए जाने के कुछ ही मिनटों के भीतर नासिरुद्दीन को प्रशासनिक विभाग में नौकरी की पेशकश की गई, लेकिन उन्होंने अल आली से कहा कि वे समूह के लिए भारतीय मजदूरों की भर्ती करना पसंद करेंगे। “आपके पास न लाइसेंस है, न निवेश, न ही दफ्तर – कुछ भी नहीं! आप यह कैसे करेंगे?” युवक ने सब कुछ व्यवस्थित करने और जल्द से जल्द अपने नए बॉस को रिपोर्ट करने का वादा किया।
बंबई लौटने पर, उन्हें एयर इंडिया (सरकारी अंतरराष्ट्रीय विमानन कंपनी) के एक परिचित से मदद मिली, जो उन्हें कम ब्याज दर पर ऋण और संपर्क मुहैया कराने में सहायक था। यह व्यक्ति सरकार के विभिन्न विभागों से मज़बूती से जुड़ा हुआ था। युवा और महत्वाकांक्षी नासिरुद्दीन भारत में व्यापार करने का एक महत्वपूर्ण सबक सीख रहे थे: अगर आप सही लोगों को जानते हैं, तो कुछ भी संभव है। उन्होंने लाइसेंस हासिल कर लिया।
यह सब हो जाने के बाद, नासिरुद्दीन बहरीन लौट आए और अल आली समूह के साथ एक अनुबंध पर हस्ताक्षर किए। उन्होंने समूह में रंगरूटों को भेजना शुरू किया, जिसमें उनके वीजा, हवाई टिकट की व्यवस्था करना और मुंबई हवाई अड्डे पर सुगम प्रवेश सुनिश्चित करना शामिल था। यह योजनाबद्ध नहीं था, लेकिन श्रम निर्यातक एयरलाइन टिकटिंग व्यवसाय की पेचीदगियां भी सीख रहे थे, जो बाद में उनकी संपत्ति का निर्माण करेंगी।
1980 के दशक की शुरुआत तक, व्यवसाय खूब फल-फूल रहा था और अब वह अकेले इसे संभाल नहीं पा रहे थे। उन्होंने अपने छोटे भाई थकियुद्दीन को व्यवसाय में

शामिल करने का फैसला किया। उस समय, थकियुद्दीन संयुक्त अरब अमीरात (UAE) में आराम से रह रहे थे और एक स्थानीय डिपार्टमेंटल स्टोर में प्रबंधक के रूप में काम कर रहे थे। उन्होंने स्थानीय लोगों का विश्वास जीत लिया था, जिनके पास ऐसे कई स्टोरों की श्रृंखला थी। नासिरुद्दीन थकियुद्दीन को बहरीन ले गए, जहाँ उनके संरक्षक ने छोटे भाई वाहिद को धन और उज्ज्वल भविष्य का वादा करके उन्हें बहरीन में शामिल कर लिया। उनके पिता, मुसलियार ने भी थकियुद्दीन को वापस लौटने और अपने बड़े भाई के साथ मिलकर एक नया पारिवारिक व्यवसाय शुरू करने के लिए प्रोत्साहित किया।
अंततः, इसी बात ने थकियुद्दीन को यूएई में अपने लिए बनाए गए सुख-सुविधाओं और सुरक्षा भरे जीवन को त्यागने और ओदयम के गौरवशाली दिनों को पुनः प्राप्त करने का अवसर लेने के लिए प्रेरित किया। मुंबई में हमारी एक मुलाकात के दौरान उनके छोटे भाई फैसल ने मुझे बताया कि मुसलियार ने उन्हें एक ही सलाह दी थी: 'ओदयम से आगे सोचो।' थकियुद्दीन को एहसास हुआ कि खाड़ी के एक शेख के कर्मचारी के रूप में, उनका भाग्य एक मध्यमवर्गीय जीवन जीना ही था। नासिरुद्दीन द्वारा दिए गए अवसर ने उनकी उद्यमशीलता की प्रवृत्ति को जगा दिया था। इसके अलावा, वे रोमांचक समय थे। भारत में बदलाव की शुरुआत हो रही थी।
सन् 1981 में किसी समय, थाकिउद्दीन और उनके बड़े भाई एक छोटे से सूटकेस के साथ बॉम्बे पहुंचे और होटल स्टिफल्स में चेक-इन किया - जो बैकपैकर के लिए एक स्वर्ग था, जहां कोई भी कुछ ही रुपयों में रात के लिए एक कमरा प्राप्त कर सकता था।
जब जेरी कैमरिलो डन जूनियर, जिनकी रचनाओं ने नेशनल ज्योग्राफिक के पाठकों की कई पीढ़ियों को मंत्रमुग्ध किया है, 1970 में भारत आए, तो उन्होंने स्टिफ़ल्स में ठहर कर अपनी पहचान बनाई: 'यह जर्जर, खस्ताहाल होटल आलीशान ताज महल होटल से मात्र एक ब्लॉक की दूरी पर स्थित था, लेकिन यह उससे बिलकुल अलग दुनिया थी। स्टिफ़ल्स के मेहमान - यूरोप, संयुक्त राज्य अमेरिका और ऑस्ट्रेलिया से आए बेहद कम बजट वाले यात्री - अपना दिन जर्जर बालकनियों पर आराम करते हुए, सड़कों के नज़ारे देखते हुए और फैंटा सोडा पीते हुए बिताते थे। दोपहर ढलते ही सूरज की किरणें सामने लगे ताड़ के पेड़ों पर पड़तीं और उन्हें सुनहरा बना देतीं। होटल स्टिफ़ल्स का अपना एक अनोखा, जर्जर उष्णकटिबंधीय आकर्षण था, मानो यह समरसेट मॉघम की किसी कहानी से निकला हो।'

वाहिद बंधुओं ने शहर के दादर जिले में एक कार्यालय किराए पर लिया और अपने नए व्यवसाय, ईस्ट वेस्ट ट्रैवल एंड ट्रेड लिंक्स प्राइवेट लिमिटेड को बढ़ाने की दिशा में काम शुरू किया। थकियुद्दीन अपना समय संयुक्त अरब अमीरात के अजमान और मुंबई के बीच बांटते थे।
व्यवसाय में तेज़ी से वृद्धि हुई। 1983 में, ईस्ट वेस्ट ने अंतर्राष्ट्रीय हवाई परिवहन संघ (आईएटीए) द्वारा मान्यता प्राप्त एक ट्रैवल एजेंसी का अधिग्रहण किया और 1985 तक, कंपनी के अकेले मुंबई में चार कार्यालय थे और इसने पूरे भारत में अपना परिचालन फैलाना शुरू कर दिया था। जल्द ही, यह हर छह महीने में एक नए शहर में एक कार्यालय खोलने लगी। 1986 तक, यह एयर इंडिया, गल्फ एयर और कई अन्य एयरलाइनों के लिए सबसे बड़ी टिकटिंग एजेंट बन गई थी, जो एक हजार से अधिक एजेंटों के नेटवर्क के माध्यम से टिकट जारी करती थी। तब तक इसने फारस की खाड़ी में कई फर्मों के लिए हजारों भारतीयों को भर्ती भी कर लिया था, जिनमें सऊदी अरब का बिन लादेन समूह भी शामिल था।
जैसे-जैसे उनकी कंपनी बढ़ती गई, वाहिद बंधुओं को बॉम्बे में व्यापार करने की वास्तविकताओं का सामना करना पड़ा। सफलता का निर्धारण संदिग्ध राजनेताओं, गिरोह के सरगनाओं, भ्रष्ट पुलिस, उत्साही नौकरशाहों, बेईमान वित्तदाताओं और अनुभवहीन व्यापारिक साझेदारों के मिश्रण से निपटने पर निर्भर था। (उदारीकरण के दो दशक से अधिक समय बीत जाने के बाद भी, हालात बहुत ज्यादा नहीं बदले हैं।) थकियुद्दीन को इसका पहला अनुभव गल्फ एयर के साथ एक महत्वपूर्ण बातचीत के दौरान हुआ, जो ईस्ट वेस्ट की विकास संभावनाओं के लिए एक महत्वपूर्ण ग्राहक था।
‘कल्ली वल्ली (रहने दो),’ एयरलाइन के अड़ियल युवा अरब प्रतिनिधि ने बार-बार यही दोहराया, मानो थकियुद्दीन को नज़रअंदाज़ कर रहे हों। ईस्ट वेस्ट ने उनसे संपर्क करके पूरे भारत के लिए गल्फ एयर के एकमात्र जनरल सेल्स एजेंट (जीएसए) बनने का अधिकार हासिल करने की कोशिश की थी। थकियुद्दीन एयरलाइन के भारत के जीएसए की नियुक्ति को लेकर सख्त रवैये से परेशान हो रहे थे। उन्होंने, दूसरों की तरह, यही मान लिया था कि ईस्ट वेस्ट इस पद के लिए स्वाभाविक पसंद है, क्योंकि भारत में बिकने वाले गल्फ एयर के 75 प्रतिशत से अधिक टिकट पहले से ही ईस्ट वेस्ट ही जारी कर रही थी। हालांकि, गल्फ एयर के प्रतिनिधि ने ज़ोर देकर कहा कि एयरलाइन के चेयरमैन को ‘निजी शुल्क’ के

रूप में 50 लाख रुपये अग्रिम चाहिए। थकियुद्दीन को समझ आ गया कि बहस करने से कोई फायदा नहीं होगा; अगर उन्होंने भुगतान नहीं किया, तो वे कारोबार खो देंगे। वे जल्दी से कार्यालय वापस गए और शहर में अपने विभिन्न कार्यालयों और बैंक खातों से जितना भी पैसा मिल सकता था, उसे इकट्ठा करने में जुट गए। कुछ भरोसेमंद कर्मचारियों की मदद से, थकियुद्दीन ने एक बड़े सूटकेस में 50,000 नोट भर लिए, जिन्हें करीने से बंडलों में बांधा गया था, प्रत्येक बंडल में 100 नोट थे। किसी से भी सलाह लिए बिना - यहाँ तक कि बहरीन में मौजूद नासिरुद्दीन से भी नहीं - थकियुद्दीन अपनी निजी फीस देने के लिए गल्फ एयर के कार्यालय चला गया।
ईस्ट वेस्ट के भविष्य के विकास के लिए मंच सुरक्षित करने के प्रति आश्वस्त होकर, थाकिउद्दीन ने व्यावहारिक पहलुओं पर ध्यान देना शुरू किया: उन्होंने बैंक गारंटी की व्यवस्था की, गल्फ एयर के लिए एक समर्पित कार्यालय की व्यवस्था की और एयरलाइन टिकट बाजार पर ईस्ट वेस्ट की पकड़ मजबूत करने की रणनीति बनाने लगे। लेकिन उन्हें एक बड़ा झटका लगा। एक सुबह, उन्होंने अखबार खोला तो पहले पन्ने पर एक लेख देखा जिसमें गल्फ एयर द्वारा एक छोटी ट्रैवल एजेंसी, जेट एयर को भारत के लिए अपना एकमात्र जीएसए (GSA) नियुक्त करने की खबर थी।
जेट एयर का नेतृत्व नरेश गोयल कर रहे थे, जिन्होंने नई दिल्ली की एक टिकट बुकिंग कंपनी में सहायक के रूप में अपना पेशेवर जीवन शुरू किया था। उन्होंने 1970 के दशक के उत्तरार्ध में जेट एयर की कमान संभाली थी। पतली मूंछों और चेहरे पर हमेशा रहने वाली चौड़ी मुस्कान वाले छोटे कद के गोयल आगे चलकर भारत के विमानन उद्योग में एक प्रतिष्ठित व्यक्ति बन गए। हालांकि, उस समय जेट एयर एक छोटी ट्रैवल एजेंसी थी जो कुछ अफ्रीकी एयरलाइनों के साथ काम करती थी।
गल्फ एयर प्रकरण में अपमानित होने के बावजूद, थकियुद्दीन पीछे नहीं हटे। उनका परिवार स्तब्ध रह गया, लेकिन तब तक थकियुद्दीन उनके व्यवसाय के आक्रामक नेता बन चुके थे। उन पर भरोसा करना ज़रूरी था। उनकी पहली प्रतिक्रिया गल्फ एयर के प्रतिनिधि को फोन करके उनसे भुगतान की गई राशि वापस मांगने की थी। थकियुद्दीन ने धमकी दी कि अगर ऐसा नहीं हुआ, तो वे भारतीय अधिकारियों से शिकायत करेंगे। कहने की ज़रूरत नहीं है कि

थकियुद्दीन को अपना पैसा कभी वापस नहीं मिला - अधिकारियों से शिकायत करना तो सरासर व्यर्थ था।
फिर, 1987 की एक सुहावनी गर्मी के दिन, गोयल ईस्ट वेस्ट ट्रैवल के दफ्तर में दाखिल हुए। जेट एयर को जीएसए अनुबंध मिले लगभग एक साल बीत चुका था। उन्होंने हाथ जोड़कर थाकिउद्दीन का अभिवादन किया। गोयल ने कहा, 'अगर मुझे गल्फ एयर का जीएसए अनुबंध नहीं मिलता तो मैं बर्बाद हो जाता।' गोयल के अनुसार, उन्हें यह भी पता नहीं था कि ईस्ट वेस्ट भी इस दौड़ में शामिल है, और उन्होंने जीएसए जीतने के लिए अपनी सारी बचत दांव पर लगा दी थी। लेकिन थाकिउद्दीन को पूरा यकीन था कि जेट एयर के मालिक ने बेईमानी की है, और गल्फ एयर का प्रतिनिधि भी इस साजिश में शामिल है।
इस प्रकार उस दौर के भारतीय कॉर्पोरेट जगत की सबसे बड़ी प्रतिद्वंद्विताओं में से एक की शुरुआत हुई।
गल्फ एयर पर अपना नियंत्रण स्थापित करने के बाद गोयल ने कभी पीछे मुड़कर नहीं देखा। वे जल्द ही कुवैत एयरवेज के जीएसए (गाइडेड सोशल एजेंट) बन गए और कई नई साझेदारियों के साथ कारोबार बढ़ाने लगे। शुरुआत में, थकियुद्दीन ने जेट एयर के बढ़ते प्रभाव को रोकने की कोशिश की: उन्होंने गल्फ एयर के कर्मचारियों द्वारा जेट एयर में स्थानांतरण के खिलाफ दायर मुकदमे को वित्त पोषित किया। लेकिन जल्द ही उन्होंने यह प्रयास छोड़ दिया क्योंकि अब ईस्ट वेस्ट को उनके पूरे ध्यान की आवश्यकता थी। हालांकि जेट एयर का सितारा बुलंद हो रहा था, लेकिन भारत में हवाई टिकटों के कारोबार पर दबदबा बनाने वाली ईस्ट वेस्ट की बढ़ती समृद्धि के सामने वह फीकी पड़ गई। 1980 के दशक के अंत तक, ईस्ट वेस्ट ने फारस की खाड़ी में काम करने के लिए 75,000 से अधिक भारतीयों की भर्ती की थी और प्रतिदिन लगभग 600 हवाई टिकट जारी कर रही थी। जब ईस्ट वेस्ट तेजी से आगे बढ़ रही थी, उसी समय भारत में एक महत्वपूर्ण राजनीतिक उथल-पुथल चल रही थी, और इसने वाहिद परिवार को एक सुनहरा अवसर प्रदान किया।
1980 का दशक आशा और उथल-पुथल दोनों से भरा था। इंदिरा गांधी की हत्या के बाद, मात्र चालीस वर्ष के राजीव गांधी देश के सबसे युवा प्रधानमंत्री बने। उन्होंने शीत युद्ध की मानसिकता से बाहर निकलकर और संयुक्त राज्य अमेरिका के साथ संबंध मजबूत करते हुए वैश्विक मंच पर भारत की स्थिति को नया रूप दिया। भारत को एक क्षेत्रीय शक्ति बनाने की अपनी महत्वाकांक्षा के प्रतीक

के रूप में, उन्होंने भारतीय सेना को श्रीलंका भेजा, हालांकि इसके परिणाम विनाशकारी रहे। 13 जून 1985 को, गांधी ने अमेरिकी कांग्रेस के संयुक्त सत्र के समक्ष अपने दृष्टिकोण को संक्षेप में प्रस्तुत किया: 'भारत एक पुराना देश है, लेकिन एक युवा राष्ट्र है; और हर जगह के युवाओं की तरह, हम भी अधीर हैं। मैं युवा हूँ और मेरा भी एक सपना है। मैं एक ऐसे भारत का सपना देखता हूँ जो मजबूत, स्वतंत्र, आत्मनिर्भर हो और मानवता की सेवा में विश्व के अग्रणी राष्ट्रों में से एक हो।'
अपने कार्यकाल के दौरान, राजीव गांधी ने राज्य के एकाधिकारों को समाप्त करने और निजी क्षेत्र को समर्थन देने का दृढ़ संकल्प लिया। उन्होंने शुल्क कम किए और समग्र नौकरशाही नियंत्रणों को कम किया, और दूरसंचार क्षेत्र में एक क्रांति ला दी, जिसका प्रतीक पूरे देश में हजारों की संख्या में पीले रंग के सार्वजनिक कॉल कार्यालय (पीसीओ) बूथों का तेजी से फैलना था। इसके अलावा, गांधी ने अपनी पार्टी के पुराने नेताओं के विरोध के बावजूद कई उपाय लागू किए: इनमें भारतीय समाज के सबसे निचले स्तर तक सत्ता का विकेंद्रीकरण करने के लिए पंचायती राज व्यवस्था, निजी क्षेत्र को लाभप्रद बनाने के लिए प्रोत्साहन और निजी औद्योगिक उत्पादन बढ़ाने के लिए सब्सिडी शामिल हैं। यद्यपि भारत एक साम्यवादी शासन नहीं था, फिर भी वह सोवियत संघ के प्रभाव में था, उसकी कई आर्थिक नीतियों का अनुसरण करता था, सैन्य आधुनिकीकरण के लिए मॉस्को पर निर्भर था और पूंजीवादी साजिशों में भी उसकी भूमिका थी। हालांकि, युवा प्रधानमंत्री ने एक अलग रुख अपनाया और ऐसी प्रक्रियाओं की शुरुआत की, जो अंततः आर्थिक उदारीकरण कार्यक्रम की ओर ले गईं, जो आज भी जारी है। उन्होंने विमानन क्षेत्र में विशेष रुचि दिखाई, क्योंकि वे स्वयं सरकारी स्वामित्व वाली एयर इंडिया में वाणिज्यिक पायलट रह चुके थे।
ईस्ट वेस्ट, जेट एयर और अन्य अग्रणी एयरलाइन कंपनियों का उदय निजी स्वामित्व वाली एयरलाइनों के विकास का अग्रदूत था। टिकट बिक्री से विमान उड़ाने तक का सफर सरकार की मदद से तय हुआ – और आज भी ऐसा ही है। 2016 में भी, सरकारी अनुमतियाँ और परमिट बेहद ज़रूरी हैं। सरकार जिस तरह से उद्यमियों का गला घोंट सकती है, वह चौंका देने वाला है: स्थानीय पुलिस से सुरक्षा छीनना, कारखाने परिसर के बाहर सार्वजनिक सड़क की मरम्मत न करना, लाइसेंस, बिजली, कठोर श्रम कानून और जटिल कर लगाना – सूची बहुत लंबी है। सरकार की

भरपूर मदद न केवल व्यवसाय शुरू करने और चलाने के लिए ज़रूरी है, बल्कि उद्यम पर सरकार के जटिल नियंत्रण को बनाए रखने के लिए भी आवश्यक है। थकियुद्दीन और उनके परिवार के कांग्रेस से लंबे समय से संबंध थे। केरल विश्वविद्यालय में कॉलेज के दिनों में वे पार्टी के छात्र नेता भी रह चुके थे। इसी संबंध और केरल के सामाजिक संपर्कों के माध्यम से थकियुद्दीन गांधी जी के प्रभावशाली निजी सचिव विंसेंट जॉर्ज से मित्रता करने में सफल रहे, जिसके चलते उन्हें स्वयं प्रधानमंत्री से मिलने का अवसर मिला। थकियुद्दीन के दावे के अनुसार, उन मुलाकातों के दौरान गांधी जी ने उनसे एक एयरलाइन शुरू करने पर विचार करने का आग्रह किया था।
1989 में, नई ओपन स्काई नीति के तहत, सरकार ने भारतीय विमानन क्षेत्र की क्षमता बढ़ाने के लिए एयर टैक्सी लाइसेंस जारी करना शुरू किया। तब तक, अंतरराष्ट्रीय मार्गों के लिए एयर इंडिया और घरेलू मार्गों के लिए इंडियन एयरलाइंस का भारतीय आसमान पर एकाधिकार था। पहले चरण में बीस से अधिक लाइसेंस जारी किए गए, जिनमें से अधिकांश टाटा और बिड़ला जैसे बड़े भारतीय व्यापारिक घरानों को मिले। ईस्ट वेस्ट, जो अब थाकिउद्दीन के सशक्त नेतृत्व में थी, हालांकि उनके बड़े भाई नासिरुद्दीन कंपनी के अध्यक्ष बने रहे, प्राप्तकर्ताओं में से एक थी। इस समय तक, थाकिउद्दीन राजीव गांधी को अच्छी तरह जान चुके थे और नई दिल्ली में महत्वपूर्ण लोगों से अपने संपर्क बना चुके थे। फिर स्थिति बदल गई।
21 मई 1991 का दिन था, उमस भरा और गर्मी से भरा हुआ, और तमिलनाडु में चुनावी माहौल छाया हुआ था। गांधी जी राज्य में चुनाव प्रचार कर रहे थे। संकेत मिल रहे थे कि लगभग तीन साल के हाशिए के बाद वे सत्ता में वापसी कर रहे हैं। मद्रास (अब चेन्नई) से 40 किलोमीटर दूर श्रीपेरुम्बुदुर में देर शाम वे भीड़ में प्रवेश कर रहे थे, तभी पीले सलवार सूट और हरे शॉल में लिपटी चश्माधारी युवती थेनमोझी राजारत्नम उर्फ धनु उर्फ गायत्री ने श्रद्धापूर्वक उनके पैर छूने के लिए आगे कदम बढ़ाया। जैसे ही वह झुकी, धनु ने अपनी बेल्ट में लगे बम का ट्रिगर दबा दिया, जिसमें लगभग एक किलोग्राम आरडीएक्स और छर्रे भरे हुए थे। एलटीटीई की इस महिला हत्यारे ने पल भर में खुद को, गांधी परिवार के वंशज को और चौदह अन्य लोगों को मार डाला।
राजीव गांधी की हत्या की खबर फैलते ही, उस समय बंबई में पढ़ाई कर रहे फैसल वाहिद ने थकियुद्दीन को फोन करके यह खबर दी। शाम ढल चुकी थी। दुखी

ईस्टर्न एयरलाइंस और मिडवे एयरलाइंस दोनों ने संयुक्त राज्य अमेरिका में अपना परिचालन बंद कर दिया था।
किसी भी संकट की तरह, यह अवसर का भी समय था। इन अमेरिकी एयरलाइनों के दिवालिया होने से देश भर में एक हजार से अधिक बोइंग 737 विमानों का बेड़ा बेकार पड़ा रहा। कोई भी कंपनी जो अग्रिम जमा राशि और 100,000 डॉलर से 120,000 डॉलर प्रति माह के बीच किराया देने को तैयार थी, उसे पूरी तरह से चालू बोइंग 737 मिल सकता था। ऐसा लग रहा था मानो स्वयं भगवान ईस्ट वेस्ट एयरलाइंस को उड़ान भरने में मदद कर रहे हों।
थकियुद्दीन ने गिनीज पीट एविएशन के साथ साझेदारी की, जो वाणिज्यिक विमान बिक्री और पट्टे पर देने वाली कंपनी थी। इसकी स्थापना टोनी रयान सहित कई लोगों ने की थी, जो एक आयरिश अरबपति थे और बाद में बेहद सफल कम लागत वाली एयरलाइन रयान एयर के संस्थापक बने। भारत द्वारा हवाई क्षेत्र को खोलने का कदम मंदी से जूझ रहे उद्योग के लिए आशा की किरण लेकर आया; जल्द ही, दुनिया भर से विमान पट्टे पर देने वाले अधिकारी मुंबई में उमड़ पड़े। ईस्ट वेस्ट को लुभाने के लिए अथक प्रयास किए गए; कई अधिकारियों ने वाहिद बंधुओं को उनसे विमान पट्टे पर लेने के लिए मनाने की कोशिश की। मुंबई में टैक्सी किराए पर लेना लगभग उतना ही आसान था। केवल एयरलाइन ऑपरेटिंग परमिट की आवश्यकता थी; बाकी सब कुछ बातचीत से तय किया जा सकता था।
ईस्ट वेस्ट एयरलाइंस की शुरुआत महज 35 करोड़ रुपये के कुल निवेश से हुई, जिसे वाहिद परिवार ने अपेक्षाकृत आसानी से जुटा लिया, जबकि वे एक नए उदारीकृत बाजार में एक अप्रमाणित व्यवसाय शुरू कर रहे थे। उस समय इतना आशावाद था कि ईस्ट वेस्ट को शुरुआत के लिए पर्याप्त पूंजी मिल गई, जिसमें फेयरग्रोथ फाइनेंशियल सर्विसेज से 10 करोड़ रुपये, भारतीय औद्योगिक विकास बैंक (आईडीबीआई) से 15 करोड़ रुपये और नासिरुद्दीन के निजी निवेश के रूप में 10 करोड़ रुपये शामिल थे। बड़े भाई बॉम्बे और बहरीन के बीच अपना समय बांटते रहे, जबकि थाकिउद्दीन ने कंपनी का संचालन संभाला। वाहिद परिवार ने गिनीज पीट एविएशन से 110,000 डॉलर प्रति माह के किराए पर एक बोइंग 737 लीज पर लिया। वाहिद परिवार की ट्रैवल एजेंसी, ईस्ट वेस्ट ट्रैवल एंड ट्रेड लिंक्स, नई एयरलाइन की होल्डिंग कंपनी बन गई।
कंपनी में कई लोग चाहते थे कि पहली उड़ान 25 दिसंबर 1991 को हो, जो थकियुद्दीन के जन्मदिन के साथ मेल खाती थी, और लॉन्च की तैयारियां ज़ोरों

से चल रही थीं। फैसल विमान लेने के लिए डबलिन में थे। 12 दिसंबर को थकियुद्दीन ने उन्हें फोन किया, और उनकी आवाज़ असामान्य रूप से उदास लग रही थी। उन्होंने कहा, 'हमें एक समस्या है।' एयरलाइन को जल्दी शुरू करने की हड़बड़ी में, वे भारत के आयात नियमों की बारीकियों को नज़रअंदाज़ कर गए थे, जिसमें यह शर्त थी कि देश में लाए जाने वाले किसी भी विमान के कुल मूल्य पर 33 प्रतिशत प्रतिपूरक शुल्क लगाया जाएगा। यह शुल्क अकेले ही लीज़ की लागत से कहीं अधिक होता और ईस्ट वेस्ट के सीमित परिचालन बजट पर भारी दबाव डालता।
थकियुद्दीन और नासिरुद्दीन कर हटाने के लिए नीति निर्माताओं से पैरवी करने राजधानी गए। लेकिन उन्हें एक अलग ही नई दिल्ली मिली। हालाँकि कांग्रेस अभी भी सत्ता में थी, लेकिन गांधी जी के करिश्माई नेतृत्व का अभाव था। पी.वी. नरसिम्हा राव प्रधानमंत्री थे। और वे गांधी परिवार और, परिणामस्वरूप, उन लोगों को बिल्कुल पसंद नहीं करते थे जिन्हें परिवार ने संरक्षण दिया था।
राव सरकार भुगतान संतुलन की समस्याओं से बचने के लिए अर्थव्यवस्था का व्यापक पुनर्गठन कर रही थी और मुक्त बाजार अर्थव्यवस्था को स्थापित करने का भरसक प्रयास कर रही थी। वित्त मंत्री के रूप में इस आर्थिक क्रांति का नेतृत्व अर्थशास्त्री डॉ. मनमोहन सिंह कर रहे थे, जो जिनेवा से भारत लौटे थे, जहां उन्होंने विकासशील देशों के समूह, दक्षिण आयोग का नेतृत्व किया था। बाद में वे 2004 से 2014 तक भारत के सबसे लंबे समय तक सेवा करने वाले प्रधानमंत्रियों में से एक बने। डॉ. सिंह ने सहानुभूति जताते हुए भी थाकिउद्दीन से कहा कि वे शुल्क माफ नहीं कर सकते। मंत्री ने सुझाव दिया कि ईस्ट वेस्ट विरोध जताते हुए शुल्क का एक हिस्सा चुका दे। उन्होंने बताया कि चूंकि विमान पट्टे पर लिए गए थे, इसलिए ईस्ट वेस्ट विमान लौटाते समय शुल्क की वसूली कर सकती है। थाकिउद्दीन ने यह सलाह मान ली और ईस्ट वेस्ट ने विरोध जताते हुए लगभग 3 करोड़ रुपये शुल्क का भुगतान किया, जिससे जनवरी 1992 में एयरलाइन का पहला विमान अंततः भारतीय धरती पर उतर सका।
28 फरवरी 1992 की सुबह-सुबह, कई राजनेता, पत्रकार और वाहिद बंधुओं के मित्र लगभग चार दशकों में देश की पहली निजी घरेलू उड़ान में सवार होने के लिए एकत्र हुए। लगभग चालीस यात्री भी थे जिन्होंने टिकट खरीदा था। ईस्ट वेस्ट के एयर टैक्सी ऑपरेटर लाइसेंस की शर्तों के अनुसार, कंपनी अपना

टाइमटेबल या किराया प्रकाशित नहीं कर सकती थी, इसलिए यात्रियों को आकर्षित करने का एकमात्र तरीका मौखिक प्रचार ही था। समाजवादी युग की नींद से जाग रहे देश के लिए, ईस्ट वेस्ट ग्लैमर और तेज़ कनेक्टिविटी का वादा लेकर आई थी। अगले दिन सुबह एक प्रमुख राष्ट्रीय समाचार पत्र ने लिखा, 'इंडियन एयरलाइंस को सावधान रहना चाहिए।'
सुबह 5:30 बजे, बोइंग 737 ने केरल की वाणिज्यिक राजधानी कोचीन (अब कोच्चि) के लिए उड़ान भरी, जो वाहिद बंधुओं का गृह राज्य है। कोचीन में रुकने के बाद, विमान वापस मुड़ा और कोचीन में सवार यात्रियों को लेकर मुंबई लौट आया। मुंबई पहुँचकर, विमान ने नए यात्रियों को लेकर तटीय कर्नाटक के मंगलौर के लिए उड़ान भरी। मंगलौर की पहली उड़ान में लगभग एक दर्जन टिकट खरीदने वाले यात्री और फिल्म उद्योग से फैसल के कई दोस्त थे, जिनमें सुष्मित सेन, आमिर खान और फैसल खान शामिल थे। वाहिद बंधुओं के अधिकांश निर्णयों की तरह, ईस्ट वेस्ट की पहली उड़ानों के लिए कोचीन और मंगलौर को चुनने के पीछे भावनात्मक और प्रतीकात्मक दोनों ही मजबूत कारण थे। थकियुद्दीन अक्सर कोचीन की यात्रा करते थे, जो उनके बचपन के घर के करीब था, और मंगलौर, जो उनकी पत्नी का जन्मस्थान था, और उन्हें इंडियन एयरलाइंस में कभी टिकट नहीं मिल पाते थे।
ईस्ट वेस्ट के कॉर्पोरेट कार्यालय में उस समय ज़बरदस्त उत्साह, उमंग और साथ ही कुछ हद तक अतार्किकता का माहौल था। एयरलाइन घरेलू उड़ानों के लिए नए मानक स्थापित कर रही थी और अपने अचानक होने वाले जादू के शो, आइसक्रीम उत्सव और लाइव संगीत प्रस्तुतियों से सुर्खियाँ बटोर रही थी। यह अहंकार थकियुद्दीन के कंपनी चलाने के तरीके में भी झलकता था: इंडियन एयरलाइंस के पायलटों के लगभग 25,000 रुपये के मासिक वेतन की तुलना में, उन्होंने ईस्ट वेस्ट के पायलटों को चौंका देने वाला 1,00,000 रुपये प्रति माह का वेतन दिया। एक दिन जब मंगलौर से केवल एक ही यात्री ने किराया दिया, तो प्रबंधक ने उड़ान रद्द करने का सुझाव दिया, लेकिन थकियुद्दीन ने उनकी बात नहीं मानी। भारत के मशहूर हस्तियों के प्रति जुनूनी राजनीतिक और व्यावसायिक माहौल में, वह एक नए उद्यमी थे, जिन्हें हर कोई लुभाना चाहता था, और वह अक्सर अपने कई चाहने वालों को तरजीही सीटें और चार्टर्ड उड़ानें देकर उनकी इच्छा पूरी करते थे। कई राजनेता ईस्ट वेस्ट की उड़ानों में उनके मेहमान होते थे। बदले में, वह काउंटरवेलिंग ड्यूटी को पलटने के लिए उन्हें

लुभाने में ज़रा भी संकोच नहीं करते थे। अंततः, उन्होंने काउंटरवेलिंग ड्यूटी को समाप्त करने के लिए 125 सांसदों के हस्ताक्षर एकत्र किए, जिनमें केरल के लगभग सभी सांसद शामिल थे। इस अभियान की बदौलत, डॉ. मनमोहन सिंह ने धीरे-धीरे ड्यूटी को कम किया, पहले 18 प्रतिशत तक, फिर 8 प्रतिशत तक, और अंततः कुछ वर्षों बाद इसे पूरी तरह से समाप्त कर दिया।
ईस्ट वेस्ट ने अपने पहले ही साल में शानदार सफलता हासिल की – यह एक बड़ी उपलब्धि थी, और न केवल भारतीय मानकों के हिसाब से। 1992 में इसका राजस्व 130 करोड़ रुपये से अधिक था, जिसमें 8 करोड़ रुपये का लाभ शामिल था – यह उसी वर्ष इंडियन एयरलाइंस को हुए 150 करोड़ रुपये से अधिक के नुकसान के बिल्कुल विपरीत था। ईस्ट वेस्ट के टिकट इंडियन एयरलाइंस की तुलना में औसतन 20 प्रतिशत सस्ते थे, और इसकी उड़ानें जल्द ही पूरी तरह से भर गईं। 1992 के मध्य तक, कंपनी ने अपने बेड़े में तीन और विमान शामिल कर लिए थे, और उसका लक्ष्य हर छह महीने में दो और विमान जोड़ना था।
1992 के अंत में, सरकारी स्वामित्व वाली इंडियन एयरलाइंस और एयर इंडिया के पायलटों ने बेहतर वेतन और कार्य स्थितियों की मांग को लेकर हड़ताल की घोषणा की। सरकार के बातचीत के प्रयास विफल रहे, क्योंकि पायलट अपने रुख पर अड़े रहे। थकियुद्दीन और नासिरुद्दीन को तत्कालीन प्रधानमंत्री राव और नागरिक उड्डयन मंत्री माधवराव सिंधिया के साथ बैठक के लिए नई दिल्ली बुलाया गया। प्रधानमंत्री कार्यालय में हुई उस बैठक में सिंधिया ने ही अधिकांश बातें कहीं। उन्होंने कहा कि सरकार का रुख स्पष्ट है: हड़ताली पायलटों को कुचलने के लिए ईस्ट वेस्ट को यथासंभव अधिक से अधिक उड़ानें, हर संभव मार्ग पर संचालित करनी होंगी। सिंधिया ने प्रधानमंत्री के सामने वादा किया, 'सरकार आपको हर संभव सहायता प्रदान करेगी।' आसन्न संकट को देखते हुए, अपने रूठे होंठों और चुप्पी के लिए प्रसिद्ध राव ने अनिच्छा से सहमति में सिर हिलाया।
सरकार के इस आह्वान और सत्ता के शीर्ष स्तर तक एक बार फिर पहुँच की संभावना से उत्साहित होकर, थाकिउद्दीन ने एक जोखिम भरा कदम उठाया और अपने बेड़े को दोगुने से भी अधिक बढ़ाने का फैसला किया। बैठक के कुछ ही घंटों के भीतर, उन्होंने दो लीजिंग कंपनियों से फोन पर बात की और कुछ ही दिनों में, सात बिल्कुल नए विमानों को नाइट्रोजन कवर से निकालकर ईस्ट वेस्ट के रंगों में रंग दिया गया। जनवरी 1993 तक, ईस्ट वेस्ट एयरलाइंस का बेड़ा पाँच से बढ़कर

बारह हो गया था, यानी दोगुने से भी अधिक। कंपनी के प्रमुख सलाहकारों में से एक, ब्रिटिश एयरवेज के एक अनुभवी अधिकारी ने इस अंधाधुंध विस्तार को आत्मघाती कदम बताते हुए इस्तीफ़ा देने की धमकी दी। लेकिन थाकिउद्दीन ने उनकी बात नहीं मानी। पायलटों की हड़ताल अनिश्चित काल तक जारी रही और नई दिल्ली ईस्ट वेस्ट को काम सौंपने के लिए उत्सुक थी, ऐसे में थाकिउद्दीन को लगा कि सारी शक्ति उन्हीं के हाथ में है। लेकिन, किसी भी राजनीतिक लाभ की तरह, इसकी भी एक कीमत चुकानी पड़ी।
वाहिद परिवार पर निर्भर रहने के बजाय, सिंधिया ने घरेलू मार्गों पर विमानों की कमी को पूरा करने के लिए उज़्बेक एयरलाइंस से तीन इंजन वाले कुछ टुपोलेव-154 विमान पायलटों सहित लीज़ पर लिए थे। 9 जनवरी 1993 को राजधानी के घने कोहरे से ढके हवाई अड्डे पर, उन्हीं में से एक टुपोलेव-154 विमान ने विचित्र तरीके से लैंडिंग की। पहले उसका बायां पहिया रनवे से टकराया, फिर वह फिसलकर पलट गया और आग की लपटों में घिरते हुए तीन टुकड़ों में टूट गया। विमान में सवार 163 यात्री और चालक दल के सदस्य चमत्कारिक रूप से बच गए। हड़ताली पायलटों और ट्रेड यूनियनों के नेतृत्व में तत्काल जन आक्रोश ने सिंधिया को इस्तीफा देने के लिए मजबूर कर दिया।
भारतीय अभिजात वर्ग के चहेते वाहिद परिवार 1992 में बंबई में भड़के धार्मिक दंगों से तो सुरक्षित रहे – ये दंगे उसी साल 6 दिसंबर को हिंदू कट्टरपंथियों द्वारा बाबरी मस्जिद के विध्वंस के बाद शुरू हुए थे – लेकिन राष्ट्रीय राजनीति की अनिश्चितताओं से नहीं बच पाए। सिंधिया ने ईस्ट वेस्ट एयरलाइंस से जो वादे किए थे, वे उनके साथ ही खत्म हो गए। राव ने इसी संकट का फायदा उठाते हुए वाहिद परिवार से संबंध तोड़ लिए, जिन्हें वे गांधी के शिष्य मानते थे।
भारतीय आसमान में प्रतिस्पर्धा भी तीव्र हो रही थी। नरेश गोयल की जेट एयरवेज ने मई 1993 में उड़ान भरी। देश की सबसे सफल निजी एयरलाइन बनने वाली इस एयरलाइन के लिए शुरुआत शुभ नहीं रही। पहली उड़ान के दौरान, इसका एक बोइंग-737-300 विमान तमिलनाडु के कोयंबटूर में गलत हवाई अड्डे पर उतर गया। ईस्ट वेस्ट द्वारा उड़ाए जाने वाले 737-200 विमानों के विपरीत, जेट के बोइंग-737-300 विमानों के इंजन काफी नीचे लगे होते थे, जिससे दुर्घटनाओं का खतरा बढ़ जाता था। गोयल ने ईस्ट वेस्ट के कर्मचारियों को

अपने यहाँ लाने के लिए तेजी से प्रयास शुरू किए और अपने प्रतिद्वंद्वी की कई रणनीतियों को अपनाया।
1993 के मध्य तक, आयकर विभाग, राजस्व खुफिया विभाग और अन्य एजेंसियों ने ईस्ट वेस्ट के खिलाफ आक्रामक कार्रवाई शुरू कर दी थी। सुरक्षा एजेंसियों ने सरकार को पहले ही बता दिया था कि वाहिद दाऊद इब्राहिम गिरोह से मिले हुए हैं और उनके खिलाफ पुख्ता सबूत मौजूद हैं। कई लोगों को शक था कि वाहिद अब सरकार की नजरों से गिर चुके हैं। फैसल ने बाद में याद करते हुए कहा, 'प्रतिस्पर्धा से लड़ने के बजाय, हम आग बुझाने में लगे हुए थे।' हालांकि, उस समय भी वाहिदों को यह एहसास नहीं था कि उन्हें पहले ही कहीं अधिक दुर्भावनापूर्ण तरीके से कमजोर किया जा चुका था।

12 सितंबर 1992 को सहायक पुलिस निरीक्षक कृष्णावतार गुलाबसिंह ठाकुर सोफे पर लेटकर सोने की तैयारी कर रहे थे। उनके साथी कांस्टेबल पी.जी. जावसेन और के.बी. भानवत, जे.जे. अस्पताल के वार्ड 18 के ठीक बाहर गहरी नींद में सो रहे थे, उनकी.303 राइफलें बेंचों पर टिकी हुई थीं। वार्ड के अंदर शैलेश हलदंकर सो रहा था, जो अरुण गावली गिरोह का सदस्य था, जिसका उस समय के प्रभावशाली दाऊद गिरोह से मुकाबला था। बॉम्बे का अंडरवर्ल्ड प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप से निर्माण और हिंदी फिल्मों सहित कई व्यवसायों को नियंत्रित करता था और स्थानीय राजनीति में भी एक महत्वपूर्ण शक्ति था। हल्दंकर गहरी नींद में सो रहा था, उसे पुलिस की सुरक्षा का पूरा भरोसा था ताकि बदले की कार्रवाई से उसे बचाया जा सके। कुछ ही दिन पहले उसने दाऊद के बहनोई इब्राहिम पार्कर की गोली मारकर पूरे शहर को स्तब्ध कर दिया था। पार्कर की हत्या से दाऊद बेहद क्रोधित हो गया था। उसके लिए यह बॉम्बे में उसकी सत्ता के लिए एक चुनौती और एक भावनात्मक आघात दोनों था।
एक दंपति रात करीब 1:30 बजे चुपचाप अस्पताल परिसर में दाखिल हुए और एक घंटे से अधिक समय तक बिना किसी बाधा के पूरे परिसर का जायज़ा लिया। अस्पताल परिसर से निकलते ही उन्होंने दाऊद के छह खास गुंडों को सूचना दी कि हलदंकर और उसका साथी बिपिन शेरे वार्ड 18 में हैं, जहाँ उनकी सुरक्षा

में सिर्फ एक पुलिसकर्मी और चार कांस्टेबल तैनात हैं। उन्होंने अस्पताल के स्थान और बाहर निकलने के रास्तों का नक्शा तैयार कर लिया।
सुबह 3:40 बजे, छह लोग बिना किसी रोक-टोक के वार्ड 18 में घुस गए। उनके पास एके-47 समेत कई हथियार थे, जो मुंबई के आपराधिक गिरोहों के लिए भी पहली बार था। हमलावरों के दस्ते ने अंधाधुंध फायरिंग शुरू कर दी। देखते ही देखते हल्दंकर की मौत हो गई और पुलिसकर्मी पलटे हुए फर्नीचर के पीछे छिप गए। हमलावरों ने देखा कि उनका दूसरा निशाना शेरे वहां नहीं था, और उन्होंने पुलिसकर्मियों पर निशाना साध लिया। इंस्पेक्टर ठाकुर सोफे के पीछे छिपे, अपनी सर्विस रिवॉल्वर निकाली और उन पर गोली चला दी। कांस्टेबल भानवत और जवसेन ने भी अपनी राइफलों से फायरिंग शुरू कर दी, जिससे दो हमलावर घायल हो गए।
हमलावर दस्ते ने पुलिस टीम पर जवाबी फायरिंग की और घेरा तोड़ने की कोशिश की। दो कांस्टेबल गंभीर रूप से घायल हो गए, जबकि तीसरे के पैर में गोली लगी। इस हमले में एक नर्स, एक मरीज और उसके एक रिश्तेदार भी घायल हुए। उन पांच मिनटों के दौरान वार्ड 18 में 500 से अधिक गोलियां चलाई गईं। बॉम्बे के अंडरवर्ल्ड के लिए, जो पुलिस से टकराव से हमेशा बचता रहा था, यह एक अभूतपूर्व और नाटकीय हमला था। इसने स्थानीय, राष्ट्रीय और अंततः अंतरराष्ट्रीय स्तर पर दूरगामी राजनीतिक और व्यावसायिक परिणाम उत्पन्न किए।
ईस्ट वेस्ट एयरलाइंस इस झड़प की चपेट में आ गई।
कुछ ही महीनों बाद, 6 दिसंबर 1992 को अयोध्या में 500 साल पुरानी बाबरी मस्जिद को ध्वस्त कर दिया गया। इस विध्वंस के कारण पूरे भारत में सांप्रदायिक हिंसा भड़क उठी, जिसमें सैकड़ों लोगों की जान चली गई। इस घटना ने मुंबई के मुस्लिम समुदाय के एक वर्ग, जिसमें मुस्लिम-बहुल अंडरवर्ल्ड भी शामिल था, की ओर से गंभीर प्रतिक्रिया को जन्म दिया। इसके बाद के महीनों में, मुंबई में खूनी सांप्रदायिक दंगे हुए, जिनमें 900 से अधिक लोगों की जान चली गई। इसी पृष्ठभूमि में 12 मार्च 1993 को सिलसिलेवार बम विस्फोटों ने शहर को हिलाकर रख दिया, जिनमें 257 लोग मारे गए। पुलिस ने दाऊद इब्राहिम और तस्कर टाइगर मेमन को इसके लिए जिम्मेदार ठहराया और वे तुरंत देश के सबसे वांछित अपराधी बन गए। इसके बाद फैली अराजकता ने मुंबई के अंडरवर्ल्ड को दो हिस्सों में बांट दिया।

23 जुलाई 1993 को, दिल्ली पुलिस की एक टीम ने दिल्ली के घनी आबादी वाले मध्यमवर्गीय इलाके गगन विहार में एक टोयोटा गाड़ी को रोका। गाड़ी में सवार लोग कुछ महीने पहले वार्ड 18 में आतंक मचाने वाले हत्यारों के गिरोह के प्रमुख सदस्य निकले। जांचकर्ताओं के अनुसार, सितंबर 1992 में अस्पताल में हुई गोलीबारी के कुछ घंटों बाद, हत्यारों का गिरोह बॉम्बे सबअर्बन इलेक्ट्रिसिटी सप्लाई उपक्रम के एक गेस्ट हाउस में ठहरा था, जहां केंद्रीय मंत्रिमंडल के एक कनिष्ठ मंत्री के निजी कर्मचारी ने उनके लिए अपने नाम से एक सुइट बुक कराया था। मंत्री, कल्पनाथ राय, उत्तर प्रदेश राज्य से कांग्रेस पार्टी के एक प्रमुख नेता थे। उनके भतीजे, वी.एन. राय ने गेस्ट हाउस में हत्यारों के गिरोह की मेजबानी की थी, जो सरकार या निजी कंपनियों के स्वामित्व वाले कई अन्य आवासों की तरह, यात्रा करने वाले अधिकारियों के लिए होटलों के विकल्प के रूप में काम करता था।
दिल्ली पुलिस को पता चला कि मंत्री राय के कर्मचारियों ने भी राष्ट्रीय राजधानी में उनके लिए आवास की व्यवस्था की थी। ये लोग मंत्री के आधिकारिक आवास 25 मीना बाग में भी रुके थे। और यहीं से मामला पेचीदा हो गया – और ईस्ट वेस्ट को भी इसमें उलझा दिया।
जांच के दौरान, पुलिस ने दक्षिण दिल्ली के एक अपार्टमेंट पर छापा मारा और अपराधियों से संबंधित कई सामान बरामद किए, जिनमें मोहम्मद फारूक के नाम का एक लिफाफा भी शामिल था। फारूक हवाला का एक प्रमुख संचालक था और धन शोधन में दाऊद इब्राहिम से उसके घनिष्ठ संबंध थे। पुलिस ने पाया कि यह लिफाफा दिल्ली स्थित ईस्ट वेस्ट एयरलाइंस के प्रभावशाली प्रमुख साबू चाको को पहुंचाया जाना था। बाद में, जांचकर्ताओं ने दावा किया कि उन्हें इस बात के भी सबूत मिले हैं कि चाको ने ही ईस्ट वेस्ट एयरलाइंस के माध्यम से फारूक और उसकी पत्नी के कनॉट प्लेस के पास स्थित होटल हंस प्लाजा में ठहरने के दौरान उनके होटल बिल का भुगतान करवाया था।
चाको सिर्फ एक एयरलाइन मैनेजर ही नहीं थे, बल्कि विंसेंट जॉर्ज के बहनोई भी थे। जॉर्ज ही वह व्यक्ति थे जिन्होंने थकियुद्दीन को राजीव गांधी से मिलवाया था और बाद में वाहिद परिवार के लिए एक महत्वपूर्ण वार्ताकार बने। जॉर्ज की सिफारिश पर थकियुद्दीन ने अपने बहनोई को नई दिल्ली में ईस्ट वेस्ट एयरलाइंस के संचालन का प्रमुख नियुक्त किया था। भारत के जटिल घरेलू विमानन नियमों को समझने में ईस्ट वेस्ट एयरलाइंस की मदद करने वाले चाको

जमीनी स्तर पर एक महत्वपूर्ण व्यक्ति थे। राजीव गांधी की हत्या तक उन्होंने खुद को एक कुशल राजनीतिक रणनीतिकार और समस्या-समाधानकर्ता साबित किया था।
लिफाफे के मिलने के बाद, उनके खिलाफ साजिशें शुरू हो गईं: सुरक्षा एजेंसियों और जॉर्ज व चाको के विरोधियों ने दाऊद से कथित संबंध बताकर चाको और ईस्ट वेस्ट एयरलाइंस दोनों की छवि खराब करने की कोशिश की। कई साल बाद, सुप्रीम कोर्ट ने चाको के खिलाफ सभी आरोप खारिज कर दिए और वे अमेरिका चले गए। लेकिन 1993 की गर्मियों में, उन्हें बलि का बकरा बना दिया गया।
इस सार्वजनिक मामले में थकियुद्दीन और ईस्ट वेस्ट एयरलाइंस संदिग्धों की श्रेणी में थे। दाऊद इब्राहिम से उनके संभावित संबंधों को लेकर संदेह बढ़ता जा रहा था। दिल्ली में गिरफ्तार दाऊद के सहयोगियों से पूछताछ के दौरान पुलिस ने दावा किया कि उन्हें बताया गया था कि डॉन के प्रमुख वित्तीय सहयोगियों में से एक ने पिछले कई वर्षों में ईस्ट वेस्ट को बड़ी रकम सौंपी थी, जिसमें अकेले 1992 की गर्मियों में 5 करोड़ रुपये शामिल थे। इसके बाद टाइम्स ऑफ इंडिया ने एक रिपोर्ट प्रकाशित की जिसमें दावा किया गया कि ईस्ट वेस्ट के ट्रैवल डिवीजन ने 1993 के मुंबई बम धमाकों के बाद मेमन परिवार को भारत से भागने के लिए टिकट जारी किए थे। टाइगर मेमन बम धमाकों का मुख्य साजिशकर्ता था, जो हमले के कुछ ही दिनों के भीतर अपने परिवार के साथ दुबई के रास्ते पाकिस्तान भाग गया था।
दरअसल, परिवार के टिकट एक अन्य फर्म, एक छोटी ट्रैवल एजेंसी द्वारा जारी किए गए थे, जिसका नाम मिलता-जुलता था: ईस्ट वेस्ट ट्रैवल एंड टूर्स, जो मुंबई में एक महत्वपूर्ण ट्रैवल ऑपरेटर बनी हुई है।
ईस्ट वेस्ट एयरलाइंस ने इस बढ़ते घोटाले से खुद को जल्द से जल्द अलग करने की कोशिश की। उसने अखबारों के पहले पन्ने पर विज्ञापन देकर अपनी बेगुनाही साबित करने और ग्राहकों को आश्वस्त करने का प्रयास किया। लेकिन नुकसान हो चुका था।
चारों ओर फैली नकारात्मक प्रचार और संदेह के बावजूद, 1994 में ईस्ट वेस्ट भारत की पहली निजी एयरलाइन बनी जिसे निर्धारित मार्गों पर उड़ान भरने का अधिकार मिला। सरकार के लिए ईस्ट वेस्ट को लाइसेंस देने से इनकार करना मुश्किल हो गया था, क्योंकि यह स्पष्ट हो गया था कि कंपनी का 1993 के बम धमाकों से कोई संबंध नहीं था। अंततः नागरिक उड्डयन मंत्रालय के

अधिकारियों को प्रभावित करने वाली बात थकियुद्दीन की विभिन्न प्रेरक क्षमताएं थीं, जिनका उपयोग उन्होंने व्यवस्था को संचालित करने के लिए किया था। आधिकारिक रूप से पंजीकृत एयरलाइन बनना ईस्ट वेस्ट के लिए एक बहुत बड़ी उपलब्धि थी, क्योंकि अब वह कानूनी रूप से अपने मार्गों और किरायों की घोषणा कर सकती थी और यात्रियों को आकर्षित करने के लिए अपने प्रचार प्रयासों को तेज कर सकती थी।
कंपनी ने 1993 की उथल-पुथल को जल्दी ही पीछे छोड़ दिया। इसने 1994 के मध्य में बॉम्बे स्टॉक एक्सचेंज (बीएसई) पर अपना प्रारंभिक सार्वजनिक प्रस्ताव (आईपीओ) भी जारी किया। यह निर्णय आसान नहीं था। 1992 में बीएसई को एक शर्मनाक आर्थिक संकट का सामना करना पड़ा था, जिसे कुख्यात हर्षद मेहता के नेतृत्व में स्टॉकब्रोकरों के एक समूह ने अंजाम दिया था। मेहता एक ऐसा व्यापारी था जिसने अपनी शान-शौकत भरी जीवनशैली और शेयर बाजार की चालाकी से जनता का ध्यान आकर्षित किया था। बाद की जांच में मेहता के बड़े पैमाने पर किए गए घोटाले का खुलासा हुआ - उसने शेयरों की कीमतों में हेरफेर किया था, जिसके परिणामस्वरूप सरकारी बैंकों को भारी नुकसान हुआ था। शेयर बाजार में जनता का विश्वास चकनाचूर हो गया था। कंपनी के आंतरिक अनुमानों के अनुसार 250 करोड़ रुपये तक जुटाने की क्षमता होने के बावजूद, ईस्ट वेस्ट ने अपने बैंकरों की सलाह पर 55 करोड़ रुपये के अपेक्षाकृत कम बजट वाले आईपीओ का विकल्प चुना। पहले ही दिन, इसके शेयरों की मांग पांच गुना से अधिक हो गई और अंततः 23 गुना से भी अधिक हो गई। यह कंपनी में जनता के भारी विश्वास का प्रतीक था, जो निजी उद्यम में भारत के नए गौरव का भी प्रतीक है। नई पूंजी जुटाने के बाद, ईस्ट वेस्ट ने विस्तार के अगले चरण की शुरुआत की। 1994 के अंत में, इसने बोइंग-737-400 विमानों के एक नए बेड़े का ऑर्डर दिया और घरेलू मार्गों पर बिजनेस क्लास की शुरुआत की। योजना यह थी कि इन नए विमानों में से तीन को मलेशियाई एयरलाइंस से लीज पर लिया जाए, जिसने पहले ही बोइंग को कई विमानों का ऑर्डर दे दिया था। ईस्ट वेस्ट के पायलटों और तकनीशियनों ने कुआलालंपुर और संयुक्त राज्य अमेरिका में बोइंग सुविधाओं में अपना प्रशिक्षण पूरा किया, और ईस्ट वेस्ट ने अपने नए विमानों के आयात के लिए आवेदन प्रस्तुत किए।
1994 की उस नाजुक गर्मी के दौरान, नरेश गोयल हमेशा की तरह मुस्कुराते हुए थकियुद्दीन से मिलने आए। उन्होंने अपने 737-300 विमानों और उनके कम ऊंचाई

वाले इंजनों की समस्या के बारे में शिकायत की और कहा कि वे ईस्ट वेस्ट की तरह बोइंग-737-200 विमान लेने जा रहे हैं। फैसल के अनुसार, थकियुद्दीन ने उन्हें कई नए 737-400 विमान लीज पर लेने की अपनी योजना के बारे में बताया और कहा कि ये नए मॉडल मलेशियाई एयरलाइंस से तुरंत उपलब्ध हैं।
कुछ दिनों बाद, भारत के केंद्रीय विमानन नियामक, नागरिक उड्डयन महानिदेशालय (डीजीसीए) ने ईस्ट वेस्ट को एक पत्र भेजा जिसमें कहा गया कि चूंकि सरकार इन नए मॉडलों से 'परिचित नहीं' है, इसलिए कंपनी को विमान मैनुअल की तीन प्रतियां जमा करनी होंगी। मैनुअल में संवेदनशील बौद्धिक संपदा (विमान के ब्लूप्रिंट और चित्र सहित) शामिल थी जिसे बोइंग सार्वजनिक नहीं करना चाहता था। बोइंग ने बताया कि यह मांग ही हास्यास्पद थी और उसने मैनुअल देने से इनकार कर दिया। ईस्ट वेस्ट के रंगों में रंगे तीनों विमान कुआलालंपुर में बेकार पड़े रहे, लेकिन डीजीसीए ने नरमी दिखाने का कोई संकेत नहीं दिया। थाकिउद्दीन और नासिरुद्दीन ने विमानन मंत्रालय से पैरवी करने की कोशिश की और सरकार के उच्च अधिकारियों के सामने अपना पक्ष रखा। लेकिन डीजीसीए अपने रुख पर अड़ा रहा।
मलेशियन एयरलाइंस, जिसे एक महीने का किराया अग्रिम और पांच महीने की जमा राशि मिल चुकी थी, ने अनुबंध समाप्त करने का नोटिस जारी किया। एयरलाइन ने शर्त रखी कि ईस्ट वेस्ट के पास विमान लीज पर लेने के लिए तीन दिन का समय है, और यदि वह ऐसा नहीं कर पाती है, तो उसे उस समय सीमा के दो दिनों के भीतर विमान पूरी तरह से खरीद लेना चाहिए; अन्यथा अनुबंध रद्द हो जाएगा। ईस्ट वेस्ट के शीर्ष अधिकारी बेबस थे। भारत की कुख्यात नौकरशाही ने उनकी महत्वाकांक्षी विस्तार योजनाओं को चौपट कर दिया था। एक सप्ताह बाद, मलेशियन एयरलाइंस ने अनुबंध समाप्त कर दिया और ईस्ट वेस्ट को अपनी अग्रिम राशि वापस नहीं मिली।
कुछ सप्ताह बाद, वही तीन बोइंग-737-400 जेट एयरवेज के बेड़े के हिस्से के रूप में भारत में उतरे। भारतीय विमानन बाजार स्तब्ध रह गया। कुछ ही हफ्तों के संचालन के बाद, यात्रियों ने बताया कि विमान के पिछले हिस्से का कुछ रंग उखड़ने लगा था, जिससे नीचे ईस्ट वेस्ट के रंग दिखाई देने लगे थे। नरेश गोयल ने अपनी इस सफलता का बखान तो नहीं किया, लेकिन ईस्ट वेस्ट के लिए यह उनकी क्रूरता की दूसरी स्पष्ट चेतावनी थी। भले ही यह सच हो, गोयल को दोष नहीं दिया जा सकता, क्योंकि वे भी भारतीय नौकरशाही में काम करना सीख रहे थे। जो

भी इस व्यवस्था को समझता है, वह जानता है कि किसी शक्तिशाली गांधी या कुछ वरिष्ठ राजनीतिक हस्तियों को जानना ही काफी नहीं था; आपको शासन के हर स्तर तक पहुंचना पड़ता था, एक वरिष्ठ पदाधिकारी के कार्यालय के बाहर खड़े सहायक से लेकर सर्वोच्च पद तक।
1995 के मध्य तक, ईस्ट वेस्ट एक चौराहे पर खड़ा था: उसकी विस्तार योजनाएँ विफल हो चुकी थीं, प्रतिस्पर्धा तीव्र हो रही थी और प्रतिद्वंद्वी कंपनियाँ उसके कर्मचारियों को अपने यहाँ काम पर रख रही थीं। मई के अंतिम सप्ताह में हुई बोर्ड बैठक में, फैसल ने थाकिउद्दीन के शब्दों को याद करते हुए बताया, ‘हमें दिखावा करने की ज़रूरत नहीं है: नरेश गोयल हमारे पीछे पड़े हैं। दमानिया एयरलाइंस [दूसरी प्रमुख निजी कंपनी] हमारे साथ है। हमें उससे मुकाबला करना होगा।’ थाकिउद्दीन ने जेट एयरवेज से मुकाबला करने की योजना बनाई। उन्होंने कहा कि पहले कदम के रूप में, कंपनी को विमानन उद्योग की कार्यप्रणाली में पारंगत किसी व्यक्ति को नियुक्त करने की आवश्यकता है – परिवार से बाहर का कोई व्यक्ति, शायद कोई विदेशी – जो कंपनी के दैनिक कार्यों का नेतृत्व कर सके। दीर्घकालिक विकास को ध्यान में रखते हुए ईस्ट वेस्ट का पुनर्गठन करना होगा। अंत में, थाकिउद्दीन का मानना था कि ईस्ट वेस्ट के लिए अपने विमानों के बेड़े को बढ़ाना आवश्यक है। उन्होंने गोयल की जेट एयरवेज के खिलाफ एक व्यापक आक्रमण की घोषणा की। आसमान में लड़ाई तेज होती जा रही थी।
थकियुद्दीन ने ईस्ट वेस्ट के पुनर्गठन और सीईओ, सीएफओ और अन्य शीर्ष अधिकारियों की नियुक्ति के लिए प्राइस वाटरहाउस को सलाह देने हेतु नियुक्त किया। कंपनी ने बोइंग के 737-400 के उन्नत संस्करण को लीज पर लेने की योजना भी बनाई। हालांकि, उस दुर्भाग्यपूर्ण बोर्ड बैठक के कुछ ही दिनों बाद, थकियुद्दीन को बोइंग के एक उपाध्यक्ष, जो उनके पुराने परिचित थे, का फोन आया। 'ताकी, हमारे पास एक समस्या है। भारत में एक 737-400 में संरचनात्मक खराबी आ गई है। हमें इसे ठीक करने के लिए एक इंजीनियर की आवश्यकता है और आप ही एकमात्र व्यक्ति हैं जो इसे ठीक कर सकते हैं।' थकियुद्दीन मदद करने के लिए राज़ी हो गए, क्योंकि उन्हें पता था कि ईस्ट वेस्ट को मलेशियन एयरलाइंस से 737-400 विमानों का ऑर्डर न मिलने के बाद से उनके बोइंग-प्रमाणित इंजीनियरों की टीम बेकार बैठी थी। उन्हें बाद में पता चला कि बोइंग के अधिकारी जेट एयरवेज द्वारा हाल ही में खरीदे गए 400

वेस्ट ने अपना अब तक का सबसे अधिक मासिक राजस्व दर्ज किया। वाहिद परिवार ने मैरियट इंटरनेशनल के साथ साझेदारी करके दक्षिणी केरल के कोवलम स्थित उनकी एक संपत्ति पर भारत में अपना पहला होटल खोला। कर्मचारियों का मनोबल चरम पर था। कंपनी ने दो और 737-400 विमानों के लीज़-परचेज़ समझौते पर हस्ताक्षर किए थे। अंततः, ऐसा लग रहा था कि वह प्रतिस्पर्धा में आगे निकल रही है।
ईस्ट वेस्ट की वृद्धि को बनाए रखने के लिए, थाकिउद्दीन ने 1995 के पतझड़ में इक्विटी निवेश की तलाश शुरू की। संयुक्त अरब अमीरात की नई एयरलाइन, अमीरात, तेजी से विस्तार कर रही थी और उसने रुचि दिखाई। थाकिउद्दीन अमीरात समूह के प्रमुख अधिकारियों से मिलने दुबई गए। बातचीत सुचारू रूप से चली। दोनों पक्षों ने एक समझौता ज्ञापन पर हस्ताक्षर किए, जिसके तहत अमीरात ईस्ट वेस्ट में निवेश करेगी, विमानों का रखरखाव करेगी और अन्य प्रकार की सहायता प्रदान करेगी। यह एक तरह की बड़ी सफलता थी। कुछ दिनों बाद, अमीरात के एक वरिष्ठ अधिकारी ने मीडिया को बताया कि उनकी कंपनी एक भारतीय कंपनी के साथ साझेदारी कर रही है। हालांकि उन्होंने एयरलाइन का नाम नहीं बताया, लेकिन बाजार में सभी को यह स्पष्ट हो गया कि भारतीय साझेदार कौन है। इस जानकारी के लीक होने के कुछ ही दिनों के भीतर, नई दिल्ली सरकार ने घोषणा की कि कोई भी विदेशी एयरलाइन भारतीय विमानन कंपनियों में निवेश नहीं कर सकती है, और इक्विटी निवेशकों वाली किसी भी एयरलाइन को विदेशी निवेशकों से अपने संबंध तोड़ने होंगे। जेट एयरवेज में कुवैत एयरवेज और गल्फ एयर का महत्वपूर्ण निवेश था, इसलिए सभी ने मान लिया कि सरकार ने निजी एयरलाइनों के भारतीय स्वामित्व की गारंटी देने के उद्देश्य से एक नेक नीति जारी की है। यह एक उचित घोषणा प्रतीत हुई। लेकिन, थाकिउद्दीन के लिए यह एक बार फिर इस बात का संकेत था कि गोयल उसके पीछे पड़े हैं।
हालांकि, उन्हें प्रतिक्रिया देने का समय नहीं मिला। 13 नवंबर 1995 को, थकियुद्दीन को घर लौटते समय गोली मार दी गई। उनकी हत्या ने ईस्ट वेस्ट को लंबे समय तक चलने वाले और अंततः घातक उथल-पुथल में धकेल दिया। अगले दो वर्षों तक, कंपनी लगातार संकट में रही और अंततः 1997 में ढह गई। थकियुद्दीन की हत्या की जांच दो साल तक खिंची और भारतीय खुफिया एजेंसियों द्वारा वर्षों से प्राप्त गुप्त सूचनाओं के अनुसार, पुलिस अंततः गलत निष्कर्ष पर पहुंची। वह त्रुटिपूर्ण और अपूर्ण जांच भारतीय संस्थानों,

[illegible]

6

हत्या का विश्लेषण

शोक के माहौल में डूबा एक बोइंग-737 विमान 14 नवंबर 1995 की दोपहर को आकाश में उड़ान भर रहा था। ईस्ट वेस्ट एयरलाइंस की उड़ानों में आमतौर पर पाई जाने वाली चहल-पहल का कोई नामोनिशान नहीं था; अंदर का वातावरण गमगीन था। सबसे आगे, एक ताबूत में, थकियुद्दीन वाहिद का शव रखा था। त्रिवेंद्रम जाने वाली उस उड़ान में केवल करीबी रिश्तेदार और कंपनी के कुछ वरिष्ठ अधिकारी ही सवार थे।
थकियुद्दीन अपनी उड़ानों में हमेशा सबसे जीवंत व्यक्ति होते थे, यात्रियों से घुलमिल जाते थे, उन्हें आश्चर्यचकित करते थे और उनकी हर मांग को पूरा करने के लिए हर संभव प्रयास करते थे। उनकी पसंदीदा यात्रियों में से एक, मदर टेरेसा, को ईस्ट वेस्ट की सभी उड़ानों में मुफ्त टिकट प्राप्त था। भारतीय राजनीतिक नेता, कॉरपोरेट जगत के दिग्गज, फिल्मी हस्तियां और अन्य प्रतिष्ठित लोग अक्सर उनके यात्री होते थे। वाहिद बंधुओं ने सेवा के मामले में भी बहुत सख्त मानक लागू किए थे।
सजीना और उसके बच्चे, थाकिउद्दीन के भाई-बहन, सभी स्तब्ध बैठे थे। अपनी पहली उड़ान के आसमान में गूँजने के महज़ पैंतालीस महीने बाद, ईस्ट वेस्ट के प्रबंध निदेशक अपनी अंतिम यात्रा पर घर लौट रहे थे। वे अपने चालीसवें जन्मदिन से कुछ ही दिन दूर थे।
फिर भी, यह यात्रा ओदयम में हाजी अब्दुल वाहिद मुसलियार के परिवार के उतार-चढ़ाव भरे जीवन के अनुरूप थी। यह एक ऐसा गाँव था जहाँ लोग दौलत की तलाश में अवैध नावों पर सवार होते थे और इस्लामी विद्वान मुसलियार अपने एंकोवी (एक प्रकार की मछली) के कारोबार को चलाने के लिए रोजाना सूरज पर दांव लगाते थे। यहीं पर युवा थकियुद्दीन ने अपने पिता के साथ इस रोजमर्रा के जोखिम भरे काम में मदद करते हुए व्यापार के बुनियादी सबक सीखे। वाहिद भाइयों को अपने पिता से जोखिम लेने का जज़्बा विरासत में मिला। दाऊद से उनके संबंधों को लेकर हमेशा से कानाफूसी होती रही है, और मेरी मुलाकात में कई सुरक्षा अधिकारियों को यकीन था कि ईस्ट वेस्ट उन व्यवसायों में से एक था जिसमें गिरोह के सरगना का सक्रिय वित्तीय हित था। उस दौरान बॉम्बे में तैनात एक

वरिष्ठ पुलिस अधिकारी का कहना है कि 'दाऊद से उनकी निकटता में कोई संदेह नहीं था'। यह एक ऐसा आरोप है जिसे फैसल और परिवार के अन्य सदस्य पूरी तरह से नकारते हैं और सबूत की मांग करते हैं।
जैसे ही विमान दक्षिण भारत में प्रवेश किया, आसमान में अंधेरा छा गया और तेज़ बारिश शुरू हो गई। इस क्षेत्र में अशांति कोई असामान्य बात नहीं थी और पायलटों को इससे निपटने का प्रशिक्षण दिया जाता था। लेकिन विमान के अंदर, वाहिद बहनों में से एक छोटी बहन, आमिना को सांस लेने में तकलीफ होने लगी। अंतिम संस्कार यात्रा पर जा रहे विमान में चिकित्सा दल की आवश्यकता नहीं समझी गई। फैसल, जो पिछली रात लंदन से लौटा था और ताबूत के पास बैठा था, अन्य लोगों के साथ आमिना की ओर दौड़ा। हर पल उसकी हालत बिगड़ती जा रही थी। कुछ परामर्श के बाद, पायलट ने आपातकाल घोषित कर विमान को निकटतम हवाई अड्डे, बेंगलुरु की ओर मोड़ दिया। डॉक्टरों ने कहा कि यह केवल थकान थी, और कुछ नहीं।
सजीना को इस घटना में कुछ रहस्यमय संकेत नज़र आए। अठारह साल बाद, मेरी मुलाक़ात मुंबई के एक समृद्ध इलाके में वाहिद परिवार के एक अपार्टमेंट में हुई। अपने जीवन को पूरी तरह बदल देने वाले उन दो दिनों को याद करते हुए सजीना ने बताया: ‘अपनी अंतिम यात्रा में भी थाकिउद्दीन बेंगलुरु आए थे; यह उनकी ओर से एक संकेत था कि वे चाहते थे कि हम वहीं बस जाएँ। अपनी मृत्यु से कुछ समय पहले से ही वे शहर में बसने की बात कर रहे थे।’ थाकिउद्दीन की हत्या के बाद वह बेंगलुरु चली गईं। बेंगलुरु, जिसे भारत की सिलिकॉन वैली कहा जाता है, वह जगह थी जहाँ ईस्ट वेस्ट, सरकारी नियंत्रण वाली हिंदुस्तान एयरोनॉटिक्स लिमिटेड के साथ साझेदारी में एक एमआरओ (रखरखाव, मरम्मत और ओवरहाल) सुविधा स्थापित करने की प्रक्रिया में थी। थाकिउद्दीन की मृत्यु के बाद, एमआरओ परियोजना शुरू नहीं हो पाई, लेकिन उनकी पत्नी और बच्चे कुछ हफ़्तों बाद शहर में बस गए, उस हवाई अड्डे से ज़्यादा दूर नहीं जहाँ ईस्ट वेस्ट अपनी एमआरओ सुविधा स्थापित करने की योजना बना रही थी।
आज सजीना एक ट्रैवल कंपनी का प्रबंधन करती हैं, जिसकी शुरुआत मूल रूप से एक फ्रांसीसी नागरिक ने की थी और अपने सुनहरे दौर में ईस्ट वेस्ट ने इसे अधिग्रहित कर लिया था। एयरलाइंस के पतन के बाद, वाहिद परिवार के अधिकांश सदस्य अपने पुराने काम पर लौट आए: एयरलाइन टिकट बेचना और खाड़ी क्षेत्र,

मुख्य रूप से बेंगलुरु, तिरुवनंतपुरम और मुंबई के लिए कर्मचारियों की भर्ती करना।
जिस दिन थकियुद्दीन की मृत्यु हुई, ईस्ट वेस्ट एयरलाइन के एक पायलट ने सबसे पहले सजीना और बच्चों को बताया कि कुछ गड़बड़ है। उसने कहा कि एक दुर्घटना हुई है और वे थकियुद्दीन को अस्पताल ले जा रहे हैं। सजीना को लगा कि शायद उसके पति को दिल का दौरा पड़ा होगा। जल्द ही, एक-एक करके एयरलाइन के कर्मचारी आने लगे। किसी ने भी उसे सच नहीं बताया, लेकिन जब उसने अस्पताल जाने की ज़िद की, तो सबने उसे घर पर ही रहने को कहा। जैसे-जैसे शाम ढलती गई, उसने घर पर लगे दस लाइन वाले टेलीफोन बूथ के कर्मचारियों को फोन करने वालों को उसके पति की मृत्यु के बारे में बताते हुए सुना।
ऐसा नहीं था कि सजीना को थकियुद्दीन की जान को खतरे के बारे में पता नहीं था। वाहिद परिवार जब एयरलाइन की अंतिम तैयारियां कर रहा था, तब 'लोग घर पर फोन करके कहते थे, "अपने पति से कहो कि एयरलाइन शुरू न करें"।' लेकिन थकियुद्दीन ने इसे अपने प्रतिद्वंद्वियों की धमकियों के रूप में खारिज कर दिया।
‘हम फिर कभी पहले जैसे नहीं रहे,’ फैसल ने फुसफुसाते हुए कहा। हम उसी अपार्टमेंट में बैठे थे जहाँ वह कभी अपने भाई के परिवार के साथ रहता था। उसने कई बातें बताईं। लंदन में एक व्याकुल सहकर्मी से फोन पर अपने भाई की मौत की खबर कैसे मिली, एयरलाइन चलाने के दौरान के खुशहाल और व्यस्त दिन, थकियुद्दीन का प्रभावशाली व्यक्तित्व, उनके पिता के सपने, तेज कारों और तेज कारोबार से भरी उसकी अपनी जवानी। अपार्टमेंट की स्लाइडिंग कांच की खिड़कियों से अरब सागर डूबते सूरज की किरणों में नहाया हुआ था और काली चट्टानें चमक रही थीं। कुछ मछली पकड़ने वाली नावें चट्टानों पर टिकी थीं, अन्य लहरों में तैर रही थीं, और उन सभी पर भगवा झंडे लहरा रहे थे। थकियुद्दीन की हत्या के बाद बीते दो दशकों में यह रमणीय दृश्य बहुत ज्यादा नहीं बदला था, लेकिन बाहर का शहर पूरी तरह बदल चुका था।
फैसल एक जर्जर डाइनिंग चेयर पर बैठा था। उसका कुशन पिचका हुआ था और पॉलिश फीकी पड़ चुकी थी। फर्नीचर और घर की लगभग हर चीज़, थकियुद्दीन की मृत्यु के दिन जैसी थी, वैसी ही पड़ी थी। फैसल और उसका परिवार ही कभी-कभार यहाँ आने वाले इकलौते लोग थे।

कुछ सौ गज की दूरी पर, पेरी क्रॉस रोड पर, एक भूखंड है जिसके लिए थकियुद्दीन ने पारिवारिक घर बनाने के लिए अग्रिम भुगतान किया था। आज, ऊंची दीवारों के पीछे, भारत के क्रिकेट के दिग्गज सचिन तेंदुलकर का नया घर खड़ा है। जमीन मालिकों के बीच विवाद के बाद थकियुद्दीन का जमीन खरीदने का सौदा रद्द हो गया था। तेंदुलकर ने 6,000 वर्ग फुट का तीन मंजिला घर बनाया है, जिसमें ऊपरी मंजिल पर एक स्विमिंग पूल और जिम के साथ-साथ एक निजी बगीचा भी है। तेंदुलकर ने 2008 में इस भूखंड और उस पर बने पुराने विला को खरीदने के लिए 39 करोड़ रुपये का भुगतान किया था, जो वाहिद परिवार द्वारा लगभग दो दशक पहले अपनी एयरलाइन शुरू करने के लिए आवश्यक राशि से कहीं अधिक था। मुंबई में अब नए हीरो आ गए हैं और भारत के तीव्र विकास के सामने पूरब-पश्चिम महज़ एक छोटा सा हिस्सा बनकर रह गया है। कुछ पुराने निवासियों को छोड़कर, न्यू जलदर्शन स्थित डुप्लेक्स अपार्टमेंट के मालिकों के बारे में शायद ही कोई ज़्यादा जानता हो – इस देश में 1995 और 2016 में कितना बड़ा अंतर है!
इन दशकों में भारत की समाजवादी अर्थव्यवस्था की जगह मुक्त बाज़ार नीति ने नहीं ली है। सरकार ने बाज़ार या नियमों से पूरी तरह से हाथ नहीं खींचा। बल्कि, उसने नए-नए तरीके खोजे हैं जिनसे नए तरह के व्यापारियों को प्रभावित किया जा सके और उनकी मदद की जा सके, क्योंकि उनका दायरा नाटकीय रूप से बढ़ गया है। जो बात स्थिर है, वह है भ्रष्ट राजनेता-व्यापारी- अपराधी गिरोहों की शासन पर पकड़। यह पकड़ इतनी गहरी है कि भारतीय लोकतंत्र का कोई भी आम पर्यवेक्षक, आज के खुलासों और गुप्त कैमरों के दौर में भी, इसकी कल्पना भी नहीं कर सकता।

14 नवंबर को जब थकियुद्दीन का शव घर लाया गया, तो हजारों लोग वाहिद परिसर और सामने की संकरी सड़क पर उमड़ पड़े। पैतृक घर के बगल में एक नया आलीशान घर था, जिसे वाहिद भाइयों ने हाल ही में अपनी सबसे बड़ी बहन के लिए बनवाया था। भूखंड के पीछे लगभग आधा दर्जन गायें चर रही थीं, जिनकी देखभाल उनकी मां सलमा बीवी स्वयं करती थीं।
उस इलाके में किसी अंतिम संस्कार के लिए इतनी बड़ी भीड़ पहले कभी नहीं देखी गई थी। स्थानीय लोगों के लिए वह नायक थे, न कि उनके कथित अंडरवर्ल्ड

संबंधों के कारण अभिशाप। प्रमुख सुन्नी उपदेशक कंथापुरम ए.पी. अबू बकर मुसलियार ने नमाज़ पढ़ाई। राजनीतिक नेता, प्रतिष्ठित नागरिक और आम लोग थकियुद्दीन के पार्थिव शरीर के साथ-साथ चले, जब उसे संकरी गलियों से होते हुए वाहिद के घर से लगभग 2 किलोमीटर दूर एक मस्जिद तक ले जाया गया। मस्जिद नवनिर्मित थी - अरब सागर के किनारे स्थित, भव्य मीनारें चारों ओर लगे नारियल के पेड़ों जितनी ऊंची थीं। यह वाहिद परिवार द्वारा स्थानीय समुदाय को दिया गया एक उपहार था। कुछ ही महीने पहले बनकर तैयार हुई इस मस्जिद में 2,000 से अधिक लोग आ सकते थे। यह एक पुरानी, काफी छोटी मस्जिद के स्थान पर बनाई गई थी, जो ज्यादातर लकड़ी की बनी थी, जिसके कुछ हिस्से नई संरचना में बरकरार रखे गए थे। यह मस्जिद उस शांत गांव के लिए लगभग बहुत बड़ी थी, ठीक वाहिद परिवार की तरह।
थकियुद्दीन की कब्र मस्जिद से कुछ ही दूरी पर एक ढलान वाली ज़मीन पर है। एक साल बाद, 21 नवंबर को, उनके पिता, जो अपने जीवन के अंतिम वर्षों में पार्किंसंस रोग से पीड़ित थे, का निधन हो गया और उन्हें थकियुद्दीन के बगल में ही दफना दिया गया। मुसलियार, जो अपने बड़े बेटे के इलाज के लिए बहरीन में थे, को थकियुद्दीन की हत्या के बारे में किसी ने नहीं बताया, लेकिन सभी का मानना है कि उन्हें इसकी जानकारी थी। उनकी सेहत जल्द ही बिगड़ गई। घर लौटने पर, मुसलियार की मृत्यु से कुछ दिन पहले, जब किसी ने उनसे थकियुद्दीन के बारे में वर्तमान काल में बात की, तो उन्होंने जवाब दिया: 'तुम सब झूठ बोल रहे हो।' यह उन कुछ दुर्लभ पलों में से एक था जब उन्होंने अपने बेटे की मृत्यु के बारे में बात की। कुछ दिनों बाद, उनका भी देहांत हो गया। थकियुद्दीन की मृत्यु के बाद, सलमा बीवी की दिनचर्या भी बदल गई। अब उन्हें अपनी गायों और आगंतुकों में कोई दिलचस्पी नहीं रही। वे अपने घर के बरामदे में बैठकर गीत गातीं। वे एक नायक के बारे में गातीं, उसके शरारती और उद्यमशील बचपन के बारे में, उसकी जवानी के संघर्षों के बारे में और दूर देशों में अर्जित उसकी अपार दौलत के बारे में। अंत में वे उस नायक की मृत्यु के बारे में भावपूर्ण गीत गातीं, जिसे एक शाम दुष्टों ने उस गली में बेरहमी से मार डाला था जहाँ उसका आदर किया जाता था। गीत समाप्त होते ही उनकी आँखों में आँसू भर आते और वे फूट-फूटकर रोने लगतीं। वे धार्मिक परंपराओं की लोककथाएँ सुना रही थीं, और साथ ही अपने प्रिय पुत्र के असाधारण जीवन की कहानी भी कह रही थीं। उनके वर्णन में उसकी वीरता पर कोई

संदेह नहीं था। बंबई में उसका नैतिक रूप से जटिल जीवन गाँव में उनके अपने जीवन से बिल्कुल अलग था, जहाँ वे अपनी गायों की देखभाल करतीं, गाँव वालों का अभिवादन करतीं और जहाँ थकियुद्दीन और अन्य भाई-बहन नियमित रूप से मिलने आते थे। उनकी मृत्यु 2012 में हुई और उन्हें थाकिउद्दीन और उनके पति के बगल में दफनाया गया।
छोटी-छोटी पट्टियों से शवों की स्थिति का पता चलता है। तीनों कब्रों के ऊपर एक गुलमोहर का पेड़ है जो हर ग्रीष्म ऋतु में फूलों और लपटों से भर जाता है। इसे फैसल ने अपने भाई की मृत्यु के बाद लगाया था। कब्रिस्तान से दृश्य बेहद खूबसूरत है। लहरों की पृष्ठभूमि में भव्य मस्जिद दिखाई देती है। वाहिद परिवार की कहानी में समुद्र की उपस्थिति हमेशा बनी रहती है। समुद्र की मछलियों ने परिवार की शुरुआती दौलत बनाई; यह पड़ोसियों और रिश्तेदारों के लिए फारस की खाड़ी तक जाने का अवैध रास्ता भी था; और इसकी हवाओं में रोमांच और बेपरवाही की भावना समाई हुई थी जिसने वाहिद भाइयों के पूर्व-पश्चिम के सपने को जन्म दिया। ये हवाएँ कई कहानियाँ भी घर तक लेकर आईं। उदाहरण के लिए, परिवार के दाऊद इब्राहिम से कथित संबंध। इन संदेहों को पुष्ट करने और इस सिद्धांत को विश्वसनीयता प्रदान करने वाली बात यह है कि वाहिद भाइयों द्वारा एक एयरलाइन शुरू करना असंभव है।

बॉम्बे पुलिस के लिए, थाकिउद्दीन की हत्या की जांच का नतीजा पहले से ही तय था।
राकेश मारिया, जो उस समय पुलिस उपायुक्त थे, एक युवा आईपीएस अधिकारी थे जिनकी कुछ हद तक नाटकीय पुलिसिंग शैली पहले से ही चर्चा का विषय थी। वे इस मामले के प्रभारी थे। थकियुद्दीन की मौत की जांच शुरू करने से कुछ ही सप्ताह पहले, मारिया ने छोटा राजन के एक प्रमुख हत्यारे से गहन पूछताछ की थी, जो 1993 के धमाकों के बाद दाऊद से अलग हो गया था। भारतीय जांचकर्ताओं के अनुसार, दाऊद ने एक अन्य तस्कर, टाइगर मेमन, और पाकिस्तानी खुफिया एजेंसी, इंटर-सर्विसेज इंटेलिजेंस (आईएसआई) के साथ मिलकर धमाकों को अंजाम दिया था। उन दिनों की गूंज आज भी भारत में महसूस की जा रही है। 30 जुलाई 2015 को, टाइगर के छोटे भाई याकूब मेमन, जो धमाकों के एक साल बाद मेमन परिवार के कई सदस्यों के साथ पाकिस्तान से भारत लौटे थे, को उनके 53 वें

जन्मदिन पर फांसी दे दी गई - इस फैसले की उदारवादी मीडिया में व्यापक रूप से निंदा की गई और इसे राष्ट्र की रक्तपात की प्यास बुझाने के अलावा कुछ नहीं बताया गया। धमाकों को अंजाम देने के लिए जिम्मेदार कई अन्य लोग अभी भी जेल में हैं। इस बीच, अयोध्या में हुए दंगों और मस्जिद विध्वंस के आरोपियों को अभी तक सजा नहीं मिली है। यही घटना 1993 के प्रतिशोधात्मक बम विस्फोटों का कारण बनी थी। वास्तव में, कई आरोपी भारतीय सार्वजनिक जीवन में शक्तिशाली पदों पर आसीन हैं।
मुंबई धमाकों के बाद, दुबई में रह रहे दाऊद ने भारत के अमीर और ताकतवर लोगों के बीच अपनी सामाजिक स्वीकृति खो दी। कुछ दिनों बाद, यह गैंगस्टर फारस की खाड़ी में स्थित अपने सुरक्षित ठिकाने से निकलकर पाकिस्तान के कराची में बस गया। भारत में उसके संपर्क गुप्त हो गए। फिल्मी सितारे अब उसकी पार्टियों में नाचना नहीं चाहते थे, शारजाह क्रिकेट स्टेडियम में उसके बूथ पर बैठने से भी लोग कतराते थे, और जिस शहर पर उसका परिवार लगभग राज करता था, उसी शहर में वह अछूत बन गया। मुंबई हमेशा के लिए धराशायी हो गया, और जिस डॉन की छवि को बहुत महिमामंडित किया गया था, वह भारत का सबसे वांछित अपराधी बन गया।
अयोध्या आंदोलन के बाद भारत में फैली सांप्रदायिक विभाजन की तीखी धार ने अंडरवर्ल्ड में भी गहरी पैठ बना ली। छोटा राजन एक हिंदू डॉन बन गया और उसे भारतीय सुरक्षा प्रतिष्ठान में गुप्त प्रशंसक और समर्थक मिल गए। भारत-पाकिस्तान के जटिल और नफरत से भरे इतिहास में एक नया मोड़ आ गया।
छोटा राजन गिरोह से जुड़े हत्यारे से पूछताछ के दौरान, मारिया और उनकी टीम को उन लोगों की एक लंबी सूची मिली, जिन्हें गिरोह आने वाले दिनों में निशाना बनाने वाला था, क्योंकि वे दाऊद के व्यापारिक प्रतिनिधि या करीबी सहयोगी थे। उनकी पुरानी फाइलों में से एक में, पुलिस टीम द्वारा 1995 में कई हफ्तों के दौरान गिरफ्तार किए गए हत्यारे और अन्य अंडरवर्ल्ड कार्यकर्ताओं से पूछताछ के आधार पर तैयार की गई व्यवसायों और हाई-प्रोफाइल लोगों की विस्तृत सूची अभी भी मौजूद है, जो दोनों डॉन से जुड़े हुए थे।
मुंबई में एक बैठक के दौरान, पूछताछ दल के एक अधिकारी ने अपनी डायरी मेरे साथ साझा की, जो अब घिसी-पिटी और चमड़े की जिल्द में बंधी हुई थी।

जिसमें जोसेफ जॉन डिसूजा उर्फ जो भी शामिल था। पुलिस के अनुसार, कार पर हमला करते समय रोहित आगे से आगे बढ़ा जबकि जो दाहिनी ओर था।
कई वर्षों बाद, जो की पुलिस के हाथों खूनी मौत हो गई। वह और उसका भाई, दोनों ही निशानेबाज थे, उन्हें बॉम्बे पुलिस के सबसे चर्चित 'मुठभेड़' अधिकारी, इंस्पेक्टर प्रदीप शर्मा ने एक गुप्त ठिकाने से उठाया और 2004 में एक फर्जी मुठभेड़ में मार डाला। मुठभेड़ भारतीय पुलिस का पसंदीदा पेशेवर हथियार है। वे किसी कथित अपराधी या आतंकवादी को गिरफ्तार करते हैं और दोनों पक्षों के बीच गोलीबारी का नाटक करके निर्मम हत्या को अंजाम देते हैं। पुलिस इस रणनीति का इस्तेमाल कई कारणों से करती रही है - अन्य अपराधियों को डराने और चेतावनी देने के लिए, राजनीतिक नेताओं की छवि को यह दिखाकर बेहतर बनाने के लिए कि वे आतंकवादियों के निशाने पर हैं, और कभी-कभी बम विस्फोटों के पीछे झूठी कहानियां गढ़ने और लंबी जांच से बचने के लिए। मुठभेड़ किसी मामले को सुलझाने और सनसनी पैदा करने का सबसे आसान तरीका है। कभी-कभी, भारत के औपनिवेशिक आपराधिक कानूनों और धीमी गति से चलने वाली न्यायपालिका की जटिल मांगों से निपटने के लिए, पुलिस अधिकारी घातक अपराधियों से वास्तविक खतरे को खत्म करने के लिए भी मुठभेड़ों का सहारा लेते हैं। ज्यादातर मामलों में जहां पुलिसकर्मी मुठभेड़ को फर्जी तरीके से अंजाम देने की बात स्वीकार करते हैं, वहां यही बहाना दिया जाता है। 1993 के सिलसिलेवार बम धमाकों के बाद मुंबई में मुठभेड़ें आम हो गई थीं, क्योंकि पुलिस अंडरवर्ल्ड का सफाया करने में जुटी थी। शर्मा खुद ऐसी सौ से ज़्यादा हत्याओं में शामिल थे। शर्मा और दिवंगत वरिष्ठ निरीक्षक विजय सालस्कर के मार्गदर्शन में पुलिस के आधिकारिक निशानेबाजों की एक पीढ़ी उभरी। शर्मा को 2010 में छोटा राजन के सहयोगी राम नारायण गुप्ता की हत्या के लिए फर्जी मुठभेड़ का आरोप लगाकर जेल भेजा गया था। जुलाई 2013 में उन्हें इन आरोपों से बरी कर दिया गया, लेकिन उस मुठभेड़ का नेतृत्व कर रहे एक अन्य पुलिस अधिकारी प्रदीप सूर्यवंशी को हत्या का दोषी ठहराया गया और तेरह पुलिसकर्मियों समेत बीस अन्य लोगों को भी विभिन्न आरोपों में दोषी पाया गया। सालस्कर की हत्या नवंबर 2008 में मुंबई में हुए हमलों के दौरान एक पाकिस्तानी आतंकवादी ने कर दी थी।
2013 की शुरुआत में, शर्मा मुझसे मिलने के लिए राज़ी हो गए। भारतीय जेलों के वीआईपी कैदियों के लिए आम बात है कि मैं उनसे मुंबई के बाहरी इलाके में

स्थित एक सरकारी अस्पताल में मिला, जहाँ उन्हें इलाज के लिए भर्ती कराया गया था। सबसे ऊपरी मंज़िल पर एक बड़ा कमरा हथियारबंद लोगों ने घेर रखा था, संभवतः मुंबई पुलिस के जवान, जो स्वचालित हथियारों से शर्मा की सुरक्षा कर रहे थे। शर्मा के पास उनके निजी सहायक, विशेष आहार और अन्य सुविधाएँ थीं, और एक बड़ी बालकनी थी जहाँ से बाहर की चहल-पहल भरी गाड़ियाँ दिखाई देती थीं। जब हम बातचीत करने के लिए बालकनी में बैठे, तो वह कुर्सी पर पीछे की ओर झुक गए और अपना पैर एक चायदानी पर रख लिया। गोलियों और हत्याओं से भरे जीवन के बारे में बात करते हुए उनकी लाल आँखें ज़्यादा कुछ नहीं कह पा रही थीं। चौड़े कंधों और लंबे कद के शर्मा लंबी बातचीत में सहज नहीं थे और अक्सर शब्दों की तलाश में रहते थे। लेकिन उन्हें हर घटना और हर मुठभेड़ बिल्कुल सटीक रूप से याद थी।
उस बालकनी के बाहर महानगर शाम के समय वाहनों से भरा हुआ था, जब हम 1990 के दशक के खूनी मुंबई, अंडरवर्ल्ड, आपराधिक गिरोहों से जुड़े व्यवसायों, उनके वरिष्ठों और अन्य मुद्दों पर चर्चा कर रहे थे। जब मैंने जो की कहानी का जिक्र किया, तो शर्मा ने उस मुठभेड़ में हुई घटना के बारे में विस्तार से बताने से इनकार कर दिया। उन्होंने सहजता से कहा, 'यह मुंबई है, बॉस।' बांद्रा पुलिस स्टेशन का क्राइम रजिस्टर नंबर 596/95 मुंबई की अदालतों में हर महीने दर्ज होने वाले दर्जनों मामलों से अलग नहीं था। यह भी अंडरवर्ल्ड से जुड़ा एक और कत्ल था। फर्क सिर्फ इतना था कि पीड़ित एक हाई-प्रोफाइल, कामयाब एयरलाइन मालिक था। शहर की जर्जर निचली न्यायपालिका पहले से ही सांप्रदायिक दंगों, बम धमाकों और अंडरवर्ल्ड की लड़ाइयों के मामलों को संभालते-संभालते अपनी क्षमता से कहीं ज्यादा बोझ से दबी हुई थी। मुंबई में सांप्रदायिक भावनाएं चरम पर थीं। यहां तक कि यह धारणा भी थी कि हिंदू बहुल पुलिस बल बड़े पैमाने पर सांप्रदायिक था।
हालांकि, भारत की अक्षम और भ्रष्ट व्यवस्था में उत्कृष्टता के भी कुछ उदाहरण मौजूद हैं। बस आपको उन तक पहुँचने का तरीका पता होना चाहिए, और इसके लिए अक्सर संदिग्ध तरीकों की आवश्यकता होती है। मेरे मित्र ज़ाकिर ने मुंबई की निचली अदालतों में अपने व्यापक नेटवर्क का उपयोग करके थकियुद्दीन हत्याकांड की पूरी चार्जशीट हासिल कर ली, जबकि इसे मुंबई की पुरातन अदालतों में पुराने जमाने की फाइलिंग प्रणाली के साथ दाखिल किए

जाने के एक दशक से भी अधिक समय बीत चुका था। चार्जशीट का वह विशाल बंडल चौंकाने वाला था।
थकियुद्दीन हत्याकांड की पुलिस जांच में कई अहम पहलू गायब थे। वैसे तो भारत में यह कोई हैरानी की बात नहीं है, लेकिन थकियुद्दीन जैसे शख्स की हत्या की जांच में यह चौंकाने वाला था। वह एक पारिवारिक व्यवसाय के मुखिया थे और एक बेहद घनिष्ठ परिवार से ताल्लुक रखते थे, लेकिन पुलिस ने उनके परिजनों से बात करने की जहमत ही नहीं उठाई। फैसल के डेढ़ पन्ने के बयान के अलावा, आरोपपत्र में परिवार का कोई बयान नहीं है। इसमें उनकी पत्नी से कभी नहीं पूछा गया कि क्या उनकी जान को कोई खतरा था। उनके भाइयों (नासिरुद्दीन, शिहाबुद्दीन, तहकुट्टी और फैसल, जिन्होंने विस्तृत बयान देने की बात याद नहीं की) या उनके साले (पीर मोहम्मद और नजुमुद्दीन, जो ईस्ट वेस्ट एयरलाइंस के बोर्ड में परिवार के इकलौते सदस्य थे) से भी नहीं पूछा गया कि क्या उन्हें उनकी जान को किसी खतरे का आभास था। उन्होंने यह जानने की भी जहमत नहीं उठाई कि क्या उभरते हुए एयरलाइन बाजार में कोई पेशेवर प्रतिद्वंद्विता थी। पुलिस ने पहले ही अपना मन बना लिया था: यह मौत अंडरवर्ल्ड की प्रतिद्वंद्विता के पैटर्न में अच्छी तरह से फिट बैठती है। पुलिस के आरोपपत्र में भारत के गलाकाट व्यापारिक संबंधों और उस व्यापक प्रतिद्वंद्विता की कहानी का जिक्र नहीं है, जो अब कई आधिकारिक दस्तावेजों में गहराई से दबी हुई है। यह कहानी भारतीय खुफिया एजेंसियों के कई विश्वसनीय सूत्रों द्वारा इस लेखक को सुनाई गई है।

ऐसा नहीं है कि जांच के दौरान प्रतिद्वंद्विता और व्यापारिक तनाव के संकेत बिल्कुल भी नहीं मिले। आरोपपत्र में फैसल के संक्षिप्त बयान में उनके भाई और नरेश गोयल के बीच पनप रहे तनाव का जिक्र है। कई अन्य लोग भी थे जो उभरते हुए निजी विमानन बाजार में प्रवेश करने की होड़ में थे। लेकिन मुंबई पुलिस ने इन संभावनाओं को सिरे से खारिज कर दिया।
कई साल बाद, जब मैंने फैसल से पुलिस को दिए गए उसके बयान के बारे में पूछा, तो उसे याद नहीं था कि उसने कोई औपचारिक बयान दिया था। बाद में उसने कहा कि शायद यह बयान थकियुद्दीन के अंतिम संस्कार से लौटने के बाद एक वरिष्ठ

पुलिस अधिकारी से हुई मुलाकात पर आधारित था। फैसल ने शिकायत की, 'पुलिस ने कभी हमारी बात सुनने की जहमत नहीं उठाई।' उसने विशेष रूप से दाऊद गिरोह से ईस्ट वेस्ट की निकटता के आरोपों को खारिज कर दिया।
‘अगर वाकई हमें उनसे आर्थिक सहायता मिल रही थी, तो वित्तीय समस्याओं के कारण एयरलाइन (1997 में) क्यों बंद हो गई? हम पर मुख्य आरोप यह था कि ईस्ट वेस्ट ने धमाकों के बाद मेमन परिवार को भारत से बाहर जाने के लिए फ्लाइट टिकट मुहैया कराए थे। लेकिन यह हमने नहीं किया था, और पुलिस ने भी इस बात की पुष्टि की कि टिकट ईस्ट वेस्ट ट्रैवल एंड टूर्स नामक एक मिलती-जुलती नाम वाली ट्रैवल कंपनी ने मुहैया कराए थे। लेकिन हमारे स्पष्टीकरण के बावजूद टाइम्स ऑफ इंडिया ने इस खबर को अपने पहले पन्ने पर प्रमुखता से छापा। यह बहुत नुकसानदायक था,’ उन्होंने कहा।
फैसल इस बात से इनकार नहीं करते कि धमाकों से पहले दाऊद परिवार से उनकी जान-पहचान थी, और यह स्वीकार करते हैं कि उन्होंने उनमें से कई लोगों को टिकट जारी किए थे। धमाकों से पहले, दाऊद मुंबई के अधिकांश प्रभावशाली लोगों के लिए एक महत्वपूर्ण और अपरिहार्य परिचित था। फैसल ने मुझे बताया कि कैसे दाऊद का गुस्सैल भाई नूरा एक बार कई फिल्म सितारों के पासपोर्ट लेकर ईस्ट वेस्ट एयरलाइंस के एक कार्यालय में गया था ताकि शारजाह में एक लाइव कार्यक्रम के लिए चार्टर्ड फ्लाइट के टिकट बुक करा सके। फैसल ने तर्क दिया कि भारत की सबसे बड़ी ट्रैवल कंपनी के लिए, जो औसतन प्रतिदिन 600 से अधिक टिकट जारी करती है और जिसके अकेले मुंबई में ही लगभग एक दर्जन कार्यालय हैं, यह व्यापार करने की एक अपरिहार्य वास्तविकता थी।
मुंबई के एक पत्रकार, जिन्होंने एक बार नूरा द्वारा आयोजित एक समारोह में थकियुद्दीन को देखा था, ने इसे असामान्य नहीं माना। उन्होंने मुझसे कहा, 'मैंने फिल्म सितारों को नाचते, पुलिस अधिकारियों को श्रद्धांजलि अर्पित करते और राजनेताओं को उपस्थित होते देखा है।' हालांकि, ईस्ट वेस्ट एयरलाइंस के दाऊद इब्राहिम गिरोह के लिए एक मुखौटा होने की अफवाहें चारों ओर छाई हुई थीं। रहस्य को और गहराने वाली बात यह थी कि कैसे ये वाहिद नाम के लोग मात्र 35 करोड़ रुपये से विमानन के जोखिम भरे कारोबार में इतनी बड़ी सफलता हासिल कर चुके थे।
थकियुद्दीन के अंतिम संस्कार के कुछ दिनों बाद, फैसल अपने भाई के साथ क्या हुआ था, यह जानने के लिए दृढ़ संकल्पित होकर मुंबई लौट आया। वह क्रोधित,

दुखी और असहाय था। वह महाराष्ट्र के गृह मंत्री, पुलिस प्रमुख और मामले से जुड़े अन्य अधिकारियों के पास गया। सभी विनम्र थे, उन्होंने ध्यान से उसकी बात सुनी और निष्पक्ष जांच का आश्वासन दिया। बाद में, जब उसने अपने भाई की मृत्यु वाली शाम की घटनाओं को जोड़ना शुरू किया, तो फैसल को कुछ चौंकाने वाले तथ्य मिले जो पुलिस फाइलों में कभी दर्ज नहीं थे। सबसे पहले वह बरकतलाई के पास गया, जो उसका भरोसेमंद ड्राइवर था और फैसल को देखते ही रो पड़ा, अपने मालिक को न बचा पाने का अफसोस जताते हुए। ड्राइवर ने उस शाम को याद करते हुए बताया कि दो युवक स्ट्रीट लाइट के नीचे खड़े होकर थकियुद्दीन को हाथ हिला रहे थे जब उसकी कार उस दिन सड़क से गुजर रही थी। बरकतलाई ने उनमें से एक को ईस्ट वेस्ट के एक कर्मचारी के रिश्तेदार के रूप में पहचाना।
फैसल ने उन दोनों युवकों का पता लगाया, जो इस बेजान मामले और गवाह के तौर पर पुलिस थानों और अदालतों के चक्कर लगाने से होने वाली संभावित यातनाओं से डरे हुए थे। बहुत मनाने के बाद आखिरकार उन्होंने अपनी बात बताई। पुलिस ने उनसे बात करने की जहमत तक नहीं उठाई थी। फैसल उन पुलिस अधिकारियों से मिलने गए जिनके पास इस मामले की रिकॉर्डिंग थी। दोनों लड़के भी उनके साथ गए। युवकों को बुलाया गया और फैसल का आरोप है कि पुलिसकर्मियों ने अगले कुछ मिनटों तक उनसे बहुत सख्ती से पूछताछ की। पूछताछ के बाद जब वे बाहर निकले तो दोनों बेहद सहमे हुए थे। मुलाकात देखते ही देखते खत्म हो गई और वे दोनों फिर कभी अदालत में गवाही देने नहीं लौटे।

अक्टूबर-नवंबर 1962 में सीमा पर हुई झड़पों में चीन के हाथों भारत को जो अपमान झेलना पड़ा, उसे भारत आज तक भुला नहीं पाया है। उस अपमान ने भारत के पहले प्रधानमंत्री जवाहरलाल नेहरू के बेदाग शासनकाल का अंत कर दिया, रक्षा मंत्री वी.के. कृष्ण मेनन को पद से हटा दिया और कई व्यवस्थागत बदलावों को जन्म दिया। आज भी, दोनों देशों के बीच अचिह्नित वास्तविक नियंत्रण रेखा (एलओएसी) पर चीनी सैनिकों द्वारा मामूली अतिक्रमण को भी लगभग आक्रमण की तरह माना जाता है - न केवल अति सक्रिय मीडिया द्वारा, बल्कि शिक्षाविदों और राजनेताओं के एक बड़े वर्ग द्वारा भी। 1962 की हार के

प्रमुख परिणामों में से एक यह अहसास था कि भारत का खुफिया ब्यूरो (आईबी) दुश्मन के क्षेत्रों के भीतर से खुफिया जानकारी जुटाने में सक्षम नहीं था। ब्यूरो की विफलता पर हुई चर्चाओं से ही 1968 में अनुसंधान और विश्लेषण विंग (आर एंड एडब्ल्यू) का गठन हुआ, जो संयुक्त राज्य अमेरिका की केंद्रीय खुफिया एजेंसी (सीआईए) की तर्ज पर एक समर्पित विदेशी खुफिया एजेंसी थी। लेकिन एक बाहरी खुफिया एजेंसी का विकास करना कहने में जितना आसान था, करने में उतना आसान नहीं था। कई कारणों से, भारतीय जासूसों के लिए भारत के दो प्रमुख शत्रु देशों, पाकिस्तान और चीन में प्रत्यक्ष रूप से सक्रिय होना बेहद चुनौतीपूर्ण था। इन चुनौतियों ने खुफिया एवं हवाई अड्डा (आर एंड एडब्ल्यूए) के नेतृत्व को अपनी तकनीकी क्षमताओं पर विशेष ध्यान देने के लिए मजबूर किया। उन्होंने सीमा के साथ-साथ और कभी-कभी पड़ोसी देशों के भीतर तक उड़ान भरने के लिए कई विमान और हेलीकॉप्टर हासिल किए हैं, साथ ही सभी प्रकार की बातचीत सुनने के लिए अत्याधुनिक अवरोधन क्षमताएं, काफी उन्नत उपग्रह निगरानी क्षमताएं और अब इंटरनेट और अन्य नई तकनीकों की निगरानी करने की बढ़ती क्षमता भी प्राप्त की है।
नई दिल्ली में स्थित दो अनाम बहुमंजिला इमारतों और भारत के उत्तर और पूर्व में फैली अन्य सुविधाओं से नियंत्रित इन क्षमताओं ने कई महत्वपूर्ण उपलब्धियां प्रदान की हैं। इनमें से एक महत्वपूर्ण उपलब्धि 1999 में तत्कालीन पाकिस्तानी सेना प्रमुख जनरल परवेज़ मुशर्रफ और उनके चीफ ऑफ जनरल स्टाफ लेफ्टिनेंट जनरल मोहम्मद अजीज के बीच हुई टेलीफोन वार्ता को इंटरसेप्ट करना था, जिसमें भारत और पाकिस्तान के बीच चल रहे सीमा विवाद के संचालन संबंधी विशिष्टताओं और अन्य पहलुओं पर चर्चा हो रही थी। जब यह वार्ता हुई तब मुशर्रफ चीन की यात्रा पर थे और इससे भारत को पाकिस्तानी सेना के इस सार्वजनिक दावे को गलत साबित करने में मदद मिली कि कश्मीरी स्वतंत्रता सेनानी, मुजाहिदीन, न कि पाकिस्तानी सैनिक, दोनों देशों के बीच नियंत्रण रेखा (एलओसी) पार करके कारगिल की रणनीतिक ऊंचाइयों पर कब्जा करने वाले थे।
1993 में मुंबई में हुए बम धमाकों के बाद से, खुफिया एजेंसी (आर एंड एडब्ल्यूए) ने अपनी क्षमताओं का एक महत्वपूर्ण हिस्सा भारत के सबसे वांछित अपराधी दाऊद इब्राहिम और उसके साथियों का पता लगाने में लगाया, जो दुबई और अन्य ठिकानों से भागकर पाकिस्तान चले गए थे। कराची से गिरोह

द्वारा इस्तेमाल किए जाने वाले महत्वपूर्ण टेलीफोन नंबर प्राप्त करने में उन्हें ज्यादा समय नहीं लगा। अगले कई वर्षों में, एजेंसी उनकी बातचीत सुनने में सफल रही और उसने पाकिस्तान द्वारा भारतीय अपराधियों को दिए जाने वाले सरकारी संरक्षण का विस्तृत विवरण तैयार किया। आर एंड एडब्ल्यूए के निष्कर्ष - मुंबई पुलिस, खुफिया ब्यूरो और अन्य एजेंसियों द्वारा प्रदान की गई जानकारी के साथ - भारत के लिए दाऊद को भारत का सबसे वांछित अपराधी घोषित करने और पाकिस्तान से उसे भारत प्रत्यर्पित करने का अनुरोध करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। राजनयिक मुलाकातों के दौरान पाकिस्तान को प्रस्तुत दस्तावेजों में, दाऊद, टाइगर मेमन और अन्य सहयोगी, जैसे छोटा शकील, सभी पाकिस्तान में छिपे भारत के सबसे वांछित अपराधियों की सूची में शामिल थे। 1999 के कारगिल संघर्ष के कुछ वर्षों बाद, खुफिया एवं हवाई संपर्क एजेंसी (आर एंड एडब्ल्यू) ने कई दर्जन पृष्ठों का एक विस्तृत दस्तावेज प्रकाशित किया, जिसमें भारत के सबसे वांछित अपराधियों को पाकिस्तानी संरक्षण दिए जाने का विवरण था। इसमें उनके फोन नंबर और पाकिस्तान में आवासीय पते शामिल थे और इसे विदेशी राजनयिकों को सौंप दिया गया था। आर एंड एडब्ल्यू उस दौरान थाईलैंड में छिपे हुए छोटा राजन जैसे अन्य गुप्तचरों की भी जासूसी कर रही थी।
जानकार लोग आर एंड एडब्ल्यूएस की तकनीकी खुफिया जानकारी को अन्य सभी क्षमताओं से ऊपर मानते हैं और इसे दुनिया भर के अधिकांश समकक्षों के बराबर समझते हैं। संसदीय जवाबदेही की कमी और बजट की गोपनीय प्रकृति के कारण, आर एंड एडब्ल्यूएस कुछ बेहतरीन उपकरण हासिल करने के साथ-साथ उत्कृष्ट तकनीकी खुफिया कर्मियों का एक प्रशिक्षित दल बनाने में सक्षम रहा है।
इतने वर्षों बाद भी, इस तकनीकी खुफिया विभाग के एक दस्तावेज़ (2003 में पकड़ी गई एक बातचीत) की प्रतिलिपियाँ, मेरे द्वारा बात किए गए एक आर एंड एडब्ल्यूएस अधिकारी के दिमाग में आज भी ताज़ा हैं। अधिकारी ने बताया, “यह मुंबई में छोटा शकील और उसके एक आदमी के बीच की बातचीत थी। वह [एक एयरलाइन के बड़े अधिकारी] को गालियाँ दे रहा था और अपने सहायक को उससे मिलने और उसे यह बताने के लिए कह रहा था कि उसने इतने वर्षों बाद भी थकियुद्दीन की हत्या के लिए वादा की गई रकम नहीं दी है।” उन्होंने कहा कि पिछले कुछ वर्षों में इसी तरह की कुछ और बातचीत भी हुईं। उन्होंने कहा, “यह एक पैटर्न बन गया था।

हमारे पास पुख्ता सबूत थे कि थकियुद्दीन की हत्या एक प्रतिद्वंद्वी ने की थी जिसने अंडरवर्ल्ड के साथ मिलीभगत की थी और उसे यह काम सौंपा था।”
ये बातचीत आर एंड एडब्लू की फाइलों में दर्ज हो गई, जिसे 2005 की शुरुआत में तब दोबारा खोला गया जब एजेंसी को नया नेतृत्व मिला। एजेंसी की विश्वसनीयता पर तब संकट मंडरा गया जब यह खबर फैली कि उसके एक वरिष्ठ अधिकारी, रोबिंदर सिंह, वर्षों तक एजेंसी के मुख्यालय में सीआईए के मुखबिर के रूप में काम करने के बाद अमेरिका भाग गया था। नया नेतृत्व एजेंसी का मनोबल बढ़ाने और परिणाम दिखाने के लिए बेताब था। समीक्षा बैठकों में से एक में, अंडरवर्ल्ड से जुड़े अधिकारियों ने उन्हें उन पुख्ता सबूतों के बारे में बताया जो इस ओर इशारा करते थे कि थकियुद्दीन की हत्या व्यापारिक प्रतिद्वंद्विता का नतीजा थी, और उसकी हत्या दाऊद इब्राहिम के गिरोह के सदस्यों ने की थी, वही आपराधिक गिरोह जिससे ईस्ट वेस्ट के वित्तीय संबंध होने का आरोप था।
इन इंटरसेप्ट्स ने मुंबई पुलिस के इस दावे को गलत साबित कर दिया कि छोटा राजन के गिरोह ने थकियुद्दीन की हत्या इसलिए की क्योंकि वह दाऊद के खेमे का हिस्सा था। आर एंड एडब्ल्यूए (आर एंड एडब्ल्यूए) के इंटरसेप्ट्स भी पिछले कई सालों से छोटा राजन के दावों के बिल्कुल विपरीत थे। 1996 में, इंडिया टुडे के पत्रकार हरिंदर बावेजा को दिए एक इंटरव्यू में राजन ने दावा किया था: 'मैंने वाहिद की हत्या के निर्देश दिए थे। वह भारत में दाऊद का फाइनेंसर था। मैंने उसकी हत्या इसलिए करवाई क्योंकि मैं बम धमाकों का दाऊद से बदला लेना चाहता था।'
हालांकि, गुप्त रिकॉर्डिंग से पता चला कि हत्या दाऊद के गिरोह ने की थी। क्या यह थकियुद्दीन द्वारा दाऊद से दूरी बनाने की कोशिश का नतीजा था? या फिर दाऊद के गिरोह को किसी और ने ज़्यादा पैसे दिए थे? इन सवालों के स्पष्ट जवाब कभी नहीं मिलेंगे।
2005 की शुरुआत में, R&AW के एक वरिष्ठ अधिकारी मुंबई के पुलिस कमिश्नर से फोन पर थे और उन्होंने ठकिउद्दीन की हत्या के दस साल बाद मामले को फिर से खोलने का अनुरोध किया। कमिश्नर ने ध्यान से और विनम्रतापूर्वक उनकी बात सुनी। हालांकि, मुंबई पुलिस ने R&AW की सूचनाओं पर ध्यान नहीं दिया और मामला कभी दोबारा नहीं खोला गया। क्या यह अक्षमता थी या मिलीभगत? इसका कोई जवाब नहीं है।

वाहिद बंधुओं की कांग्रेस के प्रति निष्ठा स्पष्ट और भोली थी। उन्होंने हिंदू दक्षिणपंथी गुट से कोई संबंध नहीं बनाए थे। ऐसा इसलिए नहीं था कि उनकी मुस्लिम पहचान उनके लिए बाधा बन सकती थी: उच्च स्तर पर कोई धर्म या जाति नहीं होती। वहां पैसा और एहसानों का लेन-देन ही मायने रखता है। वाहिद बंधुओं की अपनी गलती थी कि वे भारत भर में उठ रही दक्षिणपंथी राजनीति की लहर को नहीं देख पाए। और उन्हें अपनी इस राजनीतिक नासमझी का खामियाजा भुगतना पड़ा।
जब 1999 में भाजपा पांच साल के लिए सत्ता में वापस आई, तो नरेश गोयल और दाऊद इब्राहिम के गिरोह के बीच कई अकाट्य संबंध सामने आए। इस बार सरकार ने कोई प्रतिक्रिया नहीं दी।
हालांकि 1996 की जांच एक झटका थी और आर्थिक स्थिति खराब थी, फिर भी गर्मियों में ईस्ट वेस्ट कार्यालय में उम्मीद की किरण जगी। मई 1996 के अंत तक, भाजपा सरकार को इस्तीफा देना पड़ा। हर कोई चुनाव से बचना चाहता था, और क्षेत्रीय राजनीतिक दिग्गजों ने कांग्रेस और भाजपा को छोड़कर छोटी पार्टियों का गठबंधन बनाकर एक गठबंधन मोर्चा खड़ा किया। दिल्ली में क्षेत्रीय पार्टियों की एक बैठक में, कर्नाटक के मुख्यमंत्री एच.डी. देवेगौड़ा ज्यादा ध्यान नहीं दे रहे थे - वास्तव में, कई लोगों का मानना है कि वे बैठक के दौरान ज्यादातर समय सो रहे थे। उस समय की राजनीतिक उथल-पुथल इतनी भीषण थी कि बैठक में इस अनुभवहीन व्यक्ति को भारत का अगला प्रधानमंत्री चुन लिया गया। देवेगौड़ा, एक किसान और चतुर राजनीतिज्ञ, जिन्होंने तब तक कर्नाटक से बाहर अपनी राजनीतिक किस्मत नहीं आजमाई थी, नई दिल्ली और वहां के सत्ता के दांव-पेच और राजनीति के प्रभाव से अभिभूत और भयभीत थे। उन्हें इस मुश्किल भरे माहौल में आगे बढ़ने के लिए भरोसेमंद लोगों की जरूरत थी।
गौड़ा ने राष्ट्रीय राजधानी में अपना प्रवास कर्नाटक भवन में शुरू किया। दिल्ली का कामकाज संभालने में उनकी मदद चंद महल इब्राहिम कर रहे थे, जो अक्सर अपने खास रे-बैन सनग्लासेस और चौड़ी मुस्कान के बिना नज़र आते थे।
गौड़ा ने कर्नाटक के इस कम प्रसिद्ध राजनेता को चुना और उन्हें भारतीय राजनीतिक अनिश्चितताओं के भंवर में धकेल दिया। रातोंरात, इब्राहिम राजधानी के सत्ता केंद्रों का एक अभिन्न अंग बन गए।

गौड़ा ने 1 जून 1996 को भारत के ग्यारहवें प्रधानमंत्री के रूप में शपथ ली, जिसमें कांग्रेस ने बाहरी समर्थन दिया था। इब्राहिम ने वरिष्ठ मंत्री के रूप में शपथ ली और उन्हें दो महत्वपूर्ण मंत्रालय सौंपे गए: नागरिक उड्डयन और सूचना एवं प्रसारण। वह वाहिदों की तरह मलयाली मुस्लिम थे और दोनों सुन्नी उपदेशक कंथापुरम ए.पी. अबू बकर मुसलियार के करीबी सहयोगी थे, जिन्होंने थकियुद्दीन की अंतिम संस्कार की नमाज पढ़ाई थी। उनके कई साझा मित्र और परिचित थे।
निराशा के माहौल में डूबे होने के बावजूद, ईस्ट वेस्ट में आशा की किरणें फिर से लौटने लगीं। वाहिद परिवार नागरिक उड्डयन मंत्री का करीबी बन गया। ज़ाहिर है, आपके व्यवसाय से संबंधित विभाग के प्रभारी केंद्रीय मंत्री से बेहतर संरक्षक और कोई नहीं हो सकता।
इब्राहिम के आशीर्वाद से, ईस्ट वेस्ट ने अपनी किस्मत को फिर से संवारने के लिए एक महत्वाकांक्षी रणनीति को तेजी से आगे बढ़ाया। उसने सिंगापुर एयरलाइंस से संपर्क स्थापित किया, जो भारतीय बाजार में प्रवेश करने के लिए बेताब थी और पहले से ही टाटा समूह के साथ भारत में एक घरेलू एयरलाइन शुरू करने के लिए बातचीत कर रही थी। टाटा समूह के प्रमुख रतन टाटा, जो स्वयं एक पायलट थे, के लिए यह टाटा की एक महत्वपूर्ण विरासत का पुनरुद्धार होने के साथ-साथ उनका जीवन भर का जुनून भी था। ईस्ट वेस्ट के लिए, यह अस्तित्व का सवाल था।
ऐसा होना मुमकिन नहीं था। टाटा समूह को भारतीय नागरिक उड्डयन क्षेत्र में प्रवेश करने में लगभग दो दशक और लग गए – 2014 में एयर एशिया में अल्पसंख्यक भागीदार के रूप में और सिंगापुर एयरलाइंस के साथ संयुक्त उद्यम में। 2013 में जब रतन टाटा से पूछा गया कि उन्हें विमानन क्षेत्र में दोबारा प्रवेश करने में इतना लंबा समय क्यों लगा, तो उन्होंने संक्षिप्त जवाब दिया: 'हम पहले इसलिए नहीं आए क्योंकि हमने इससे बाहर रहना चुना था।' इस जवाब में उन्होंने विमानन बाजार में पैर जमाने के लिए कम से कम तीन बार किए गए अपने बड़े प्रयासों को नजरअंदाज कर दिया।
भारत के सबसे प्रमुख व्यापारिक घराने, डेढ़ सदी से अधिक की विरासत वाले और भारत के औद्योगीकरण में अग्रणी भूमिका निभाने वाले टाटा समूह का संघर्ष करना भारतीय निर्णय लेने की प्रक्रिया में व्याप्त व्यापक भ्रष्टाचार और हेराफेरी का प्रमाण है। रतन टाटा ने सार्वजनिक रूप से इस मामले का

विनम्रतापूर्वक उल्लेख किया है, लेकिन निजी तौर पर उन्होंने अपने समूह को इस क्षेत्र में प्रवेश करने से रोकने के लिए प्रतिद्वंद्वियों द्वारा खड़ी की गई बाधाओं के बारे में कड़ा विरोध जताया है।
फ़ैसल की सिंगापुर की आखिरी यात्रा के कुछ हफ़्तों बाद, एक सुबह उनके बड़े भाई नासिरुद्दीन ने फ़ोन करके पूछा कि क्या उन्होंने उस दिन के अख़बार देखे हैं। अख़बार की हेडलाइन थी, 'सिंगापुर एयरलाइंस मेरी लाश पर से गुज़रेगी', जिसमें इब्राहिम के हवाले से यह बात लिखी थी। यह इब्राहिम द्वारा फ़ैसल को बताई गई बातों से बिलकुल उलट था, और यहाँ तक कि जो बातें फ़ैसल ने फ़ोन पर सिंगापुर एयरलाइंस के नेतृत्व को बताई थीं, उनसे भी बिल्कुल विपरीत था।
फैसल तुरंत नई दिल्ली के 22 अकबर रोड स्थित कांग्रेस मुख्यालय के बगल में बने आलीशान बंगले में पहुंचे, जहां इब्राहिम रहते थे। इससे पहले उन्हें इब्राहिम से मिलने के लिए कभी कुछ मिनट से ज्यादा इंतजार नहीं करना पड़ा था। लेकिन उस मौके पर फैसल डेढ़ घंटे तक उनके कार्यालय में बैठे रहे। जब मंत्री आखिरकार आए, तो उन्होंने टालमटोल करते हुए कहा कि कांग्रेस ने उन्हें मजबूर किया है, जो सरकार को समर्थन दे रही थी।
फैसल के अनुसार, इब्राहिम के एक सहायक ने उन्हें बताया कि ईस्ट वेस्ट प्रतिनिधिमंडल के सिंगापुर दौरे के तुरंत बाद, नरेश गोयल ने इब्राहिम से कई बार मुलाकात की थी और मंत्री उन्हें कम से कम दो बार प्रधानमंत्री देवेगौड़ा के आधिकारिक आवास पर उनसे मिलवाने ले गए थे। पहली बार जब वे गए, तो प्रधानमंत्री के सुरक्षाकर्मियों ने गोयल को अंदर जाने से रोक दिया। सहायक ने फैसल को बताया कि गोयल को 7 रेस कोर्स रोड स्थित आवास में प्रवेश दिलाने के लिए इब्राहिम को सरकारी टेलीफोन लाइन से देवेगौड़ा को फोन करना पड़ा था।
ईस्ट वेस्ट एयरलाइंस का अंत निकट था। कई कारकों के मिश्रण – धोखाधड़ी, वित्तीय विपत्तियाँ और पेशेवर नेतृत्व की कमी – ने उन्हें समाप्त कर दिया।
उदाहरण के तौर पर, ईस्ट वेस्ट स्वीडिश कंपनी कोलिंग के माध्यम से दो विमानों के पट्टे में अनुबंध के उल्लंघन के लिए मुकदमा लड़ रही थी। उसने विमानों के मूल मालिक पीएलएम पर मुकदमा दायर कर लगभग 850 करोड़ रुपये का दावा किया था। मामला ईस्ट वेस्ट के पक्ष में लग रहा था, लेकिन जैसे ही

फैसला आने वाला था, पीएलएम ने अचानक अमेरिका में दिवालियापन के लिए अर्जी दे दी और उसकी सारी संपत्तियां रहस्यमय तरीके से बेच दी गईं। कंपनी के वकील सुनवाई में उपस्थित होना बंद कर दिए।
पीएलएम के स्वामित्व वाले तीनों विमान, जो उस समय ईस्ट वेस्ट के लिए उड़ान भर रहे थे, की जांच और मरम्मत होनी थी, जिसकी लागत उस समय प्रति विमान 10 करोड़ रुपये से अधिक थी। लंबी अदालती कार्यवाही और कई अपीलों के बाद, सर्वोच्च न्यायालय ने पीएलएम, या बल्कि उसके मूल मालिकों को, विमान वापस लेने का आदेश दिया।
नवंबर 1995 में जब थकियुद्दीन की हत्या हुई, तब ईस्ट वेस्ट के पास पंद्रह विमान थे, जो 1996 के अंत तक घटकर बारह रह गए। कंपनी को कोलिंग के साथ हुए सौदे में लगभग 14 करोड़ रुपये का नुकसान हुआ; उसके दो और विमानों की बड़े पैमाने पर जांच और मरम्मत होनी थी और हिंदुस्तान एयरोनॉटिक्स लिमिटेड के साथ उसका एमआरओ (मरम्मत और नवीनीकरण) प्रस्ताव भी कहीं नहीं पहुंच रहा था। 1997 की शुरुआत तक, बेड़े में केवल दस विमान रह गए थे। ऋणदाताओं ने भी कंपनी पर भारी लागत लगाना शुरू कर दिया। कंपनी ने बैंकों से 32 प्रतिशत तक ब्याज दर पर ऋण लिया, जबकि उस समय ब्याज दर 12 प्रतिशत थी।
1996 के अंत तक, ईस्ट वेस्ट अपने बैंक ऋणों का भुगतान करने में विफल होने लगी थी, और प्रमुख ऋणदाता, इंडियन बैंक ने इसे गैर-निष्पादित परिसंपत्ति (एनपीए) घोषित कर दिया। अन्य ऋणदाताओं ने भी ऐसा ही किया और कई बैंकों ने कंपनी की बैंक गारंटी रद्द करना शुरू कर दिया। केंद्रीय जांच ब्यूरो (सीबीआई) ने कंपनी के खिलाफ राज्य-नियंत्रित ईंधन कंपनियों को धोखा देने के आरोप में आपराधिक मामला दर्ज किया, जो विमानन टरबाइन ईंधन की आपूर्ति करती थीं। समय पर भुगतान करने में असमर्थ और संकट से उबरने के लिए, कंपनी ने कथित तौर पर जाली बैंक ड्राफ्ट का इस्तेमाल किया।
ईस्ट वेस्ट ने अपने विमानों को और अधिक संख्या में ग्राउंड करना शुरू कर दिया। इसका सबसे बड़ा नुकसान ट्रैवल डिवीजन को हुआ, जो तब तक भारत में नंबर एक पर था। चूंकि यह एक ही कंपनी का हिस्सा था, इसलिए बैंकों ने आईएटीए को ट्रैवल डिवीजन की ओर से गारंटी देने से इनकार कर दिया, जिससे डिवीजन को कारोबार में काफी वृद्धि करने में मदद मिल सकती थी। जैसे-जैसे विमानन व्यवसाय उनके सभी संसाधनों को सोखने लगा, 1996 के अंत तक ट्रैवल व्यवसाय भी सिकुड़ने लगा।

कई लोग अब भी चाहते थे कि ईस्ट वेस्ट एयरलाइंस उड़ान भरती रहे। एयर लिंकर्स ने विमान लीज़ शुल्क पर छह महीने की अतिरिक्त मोहलत दी। कंपनी की गिरती आर्थिक स्थिति के बावजूद, अधिकांश पायलट और इंजीनियर कंपनी में बने रहे। लेकिन मानवीय सद्भावना कठोर आर्थिक और राजनीतिक वास्तविकताओं के आगे नहीं टिक पाई। जून 1997 की एक सुबह, ईस्ट वेस्ट की आखिरी उड़ान मुंबई में उतरी।
ईस्ट वेस्ट एयरलाइंस का अंत आर्थिक उदारीकरण के बाद के युग की कहानी में पूरी तरह फिट बैठता है: निर्मम व्यावसायिक रणनीति, राजनीतिक रूप से प्रभावशाली व्यवसायी, रिश्वतखोर राजनेता, महत्वाकांक्षी नवोदित लोग और संदिग्ध खिलाड़ी।
ईस्ट वेस्ट के समापन के साथ ही जेट एयरवेज की किस्मत चमकने लगी थी। गोयल – पंजाब के एक युवा, मेहनती व्यक्ति, जिनका कोई पारिवारिक, वित्तीय, राजनीतिक या शैक्षणिक समर्थन नहीं था – की कहानी भी उतनी ही नाटकीय है। वे आज भी एक विवादास्पद व्यक्ति हैं, जो लोगों को चौंकाते और क्रोधित करते रहते हैं। लेकिन गोयल समकालीन भारत का प्रतीक हैं। गोयल के उदय का विश्लेषण किए बिना भारतीय लोकतंत्र के सभी स्तरों पर व्याप्त संकट को समझना असंभव होगा – भारत के राजनीतिक वर्ग का कुलीनतंत्र, निर्णयों को प्रभावित करने में धन की शक्ति, व्यापारिक हितों द्वारा नियमित रूप से तोड़े-मरोड़े जाने वाले कमजोर नियामक तंत्र, अभिजात वर्ग द्वारा कानूनों और मानदंडों का घोर अनादर, और अंततः, सार्वजनिक जीवन से नैतिकता का लगभग पूरी तरह से गायब हो जाना।
एक विविधतापूर्ण समाज शक्तिशाली राजनेता-व्यापारी गठजोड़ के सामने अपनी संस्थाओं को मजबूत करने के लिए संघर्ष कर रहा है, ऐसे में अगर लोकतंत्र बच जाता है और फलता-फूलता है तो यह एक और भारतीय चमत्कार होगा। अगर लोकतंत्र इसी तरह संघर्ष करता रहा और अंततः एक दिन मर गया, तो यह एक सामूहिक षड्यंत्र का अंतिम परिणाम होगा। यह एक ऐसी मृत्यु होगी जिसकी भविष्यवाणी पहले ही कर दी गई थी।

7

अस्थायी संचालक

2002 की गर्मियों के एक दिन, इंटेलिजेंस ब्यूरो के प्रमुख के.पी. सिंह और उनके वरिष्ठ सहयोगी, संयुक्त निदेशक अंजन घोष, नॉर्थ ब्लॉक से लिफ्ट से नीचे तहखाने में खड़ी एक आधिकारिक गाड़ी तक गए। कुछ सौ मीटर दूर, संसद के दोनों सदनों वाले गोलाकार भवन में, सदस्य घोष द्वारा कुछ महीने पहले लिखे गए एक पत्र को लेकर उत्तेजित थे।
गृह मंत्रालय की संयुक्त सचिव संगीता गैरोला को लिखे गए एक पन्ने के नोट में कहा गया था कि उनकी एजेंसी को नरेश गोयल और अंडरवर्ल्ड के सरगनाओं, छोटा शकील और दाऊद इब्राहिम के बीच वित्तीय मामलों को निपटाने के लिए समय-समय पर होने वाले संपर्कों की पुष्टि मिली है। इस बात का गहरा संदेह है कि गोयल के निवेश का कुछ हिस्सा दाऊद और छोटा शकील के नेतृत्व वाले अंडरवर्ल्ड गिरोहों की सहायता से प्राप्त हुआ होगा।
घोष ने आगे आरोप लगाया कि गोयल और जेट एयरवेज को खाड़ी के शेखों से लगातार बड़ी मात्रा में संदिग्ध निवेश प्राप्त होते रहे हैं। पत्र में कहा गया है, ‘नरेश गोयल की शेखों के साथ सौहार्दपूर्ण मित्रता और घनिष्ठ व्यापारिक संबंध दो दशकों से अधिक समय से ज्ञात हैं। माना जाता है कि इन संबंधों का बार-बार उपयोग न केवल प्रत्यक्ष निवेश प्राप्त करने के लिए किया गया है, बल्कि बड़ी मात्रा में दागी भारतीय धन को भारत में ही शुद्ध करने और उसे फिर से व्यापार में लगाने के लिए भी किया गया है। इस प्रकार का अधिकांश धन तस्करी, जबरन वसूली और इसी तरह की अवैध गतिविधियों के माध्यम से अर्जित किया जाता है।’
12 दिसंबर 2001 का पत्र अचानक मीडिया में आया और हंगामा मच गया। संसद के अगले सत्र में, सभी दलों के सदस्यों ने सच्चाई जानने की पुरजोर मांग उठाई। एक सदस्य, राजू परमार ने राज्यसभा में एक तारांकित प्रश्न पूछा था, जिसका गृह मंत्री को खड़े होकर मौखिक उत्तर देना था, न कि केवल लिखित उत्तर प्रस्तुत करना। तारांकित प्रश्न के उत्तर में तुरंत पूरक प्रश्न पूछे जा सकते थे, जिनका उत्तर मंत्री को देना अनिवार्य था। परमार का प्रश्न 7 मई

की सुबह के लिए सूचीबद्ध था, जिस सुबह के.पी. सिंह और घोष संसद भवन की ओर तेजी से बढ़ रहे थे।
दो वरिष्ठ सूचना सूचना ब्यूरो (आईबी) अधिकारियों का इंतज़ार भारत के तत्कालीन उप प्रधानमंत्री और गृह मंत्री एल.के. आडवाणी कर रहे थे, जिनके सार्वजनिक भाषण अक्सर इस विषय के इर्द-गिर्द घूमते थे कि भारतीय राजनीति किस प्रकार अंडरवर्ल्ड से गहराई से जुड़ी हुई है। भाजपा और आडवाणी दोनों ने ही इस मुद्दे पर हमेशा कड़ा रुख अपनाया था। आडवाणी ने धैर्यपूर्वक दोनों अधिकारियों की बातें सुनीं, जिन्होंने उन्हें गोयल के अंडरवर्ल्ड से संबंधों के सबूतों के बारे में बताया। अधिकारियों ने बताया कि हाल के महीनों में, उनके पास दाऊद और शकील के साथ गोयल की कम से कम तीन टेलीफोन बातचीत के अंश हैं, और बैठक में मौजूद एक अधिकारी के अनुसार, अन्य सबूत भी हैं।
अधिकारी ने बताया कि बैठक के बाद आडवाणी काफी विचलित और दृढ़ निश्चयी दिखे। उन्होंने कहा, ‘उन्हें स्पष्ट था कि यह सब ऐसे नहीं चल सकता। मुझे लगा था कि जेट एयरवेज कुछ ही दिनों में बंद हो जाएगी।’ एक दशक से भी अधिक समय बाद अधिकारी ने मुझसे यह बात कही। जब मैं उनसे 2014 के आसपास मिला, तब तक जेट एयरवेज एक सफल अंतरराष्ट्रीय एयरलाइन बन चुकी थी, गोयल राजनेताओं और सरकारी अधिकारियों के चहेते बन चुके थे, और आडवाणी अपने कभी के प्रभावशाली और विभाजनकारी व्यक्तित्व की धुंधली छाया मात्र रह गए थे। उनके राजनीतिक शिष्यों में से एक, नरेंद्र मोदी, जल्द ही भाजपा को एक अधिक आक्रामक और लोकप्रिय दौर में ले जाने वाले थे।
गृह सुरक्षा मंत्रालय के प्रमुख के रूप में, आडवाणी 1998 से 2004 के उथल-पुथल भरे वर्षों में प्रधानमंत्री अटल बिहारी वाजपेयी के बाद दूसरे सबसे महत्वपूर्ण व्यक्ति थे। इन वर्षों में भारत ने परमाणु परीक्षण किए, पाकिस्तान के साथ सीमित युद्ध लड़ा और दो बड़े आतंकवादी हमलों - एक यात्री विमान का अपहरण और संसद भवन पर हमला - के परिणामों से निपटना पड़ा। आतंकवाद के मुद्दे पर भारतीय राजनीतिक बयानबाजी हमेशा तीखी रही है, लेकिन दशकों के संघर्ष के बावजूद, देश के पास गैर-सरकारी तत्वों से निपटने के लिए कोई ठोस उपाय मौजूद नहीं हैं।
24 दिसंबर 1999 की घटना ने इस तथ्य को स्पष्ट रूप से उजागर कर दिया। नई दिल्ली में क्रिसमस की छुट्टियों के लिए हल्की धुंध भरी सर्दियों की शाम

थी। इंडियन एयरलाइंस का विमान, आईसी-814, काठमांडू से नई दिल्ली के लिए रवाना हुआ, जिसमें अधिकतर पर्यटक सवार थे। उड़ान भरने के कुछ ही मिनटों बाद, पांच अपहरणकर्ताओं ने विमान पर कब्जा कर लिया और पायलट को कई देशों के ऊपर से उड़ान भरने और कुछ हवाई अड्डों पर उतरने के लिए मजबूर किया, अंततः उन्होंने उसे अफगानिस्तान के कंधार में एक हैंगर में उतरने का निर्देश दिया, जो उस समय तालिबान के शासन में था। राष्ट्रीय सुरक्षा गार्ड के भारतीय अपहरण-विरोधी कमांडो ने अरब देशों के आसमान सहित अधिकांश समय विमान का पीछा किया। सरकार ने कमांडो अभियान चलाने में हिचकिचाहट दिखाई, और वे नई दिल्ली लौट आए।
अभी भी यह सवाल बना हुआ है कि अपहरणकर्ताओं को काठमांडू और उसके हवाई अड्डे पर रसद सहायता कैसे मिली, और यह संदेह करने का कारण है कि नेपाल और भारत दोनों में स्थानीय आपराधिक तत्वों ने पांचों अपहरणकर्ताओं को सक्रिय सहायता प्रदान की, जो सभी पाकिस्तान से थे। अंततः, विदेश मंत्री जसवंत सिंह तीन कुख्यात आतंकवादियों के साथ कंधार गए और उन्हें अपहरणकर्ताओं के हवाले कर दिया। यह एक भयावह कहानी का विचित्र मोड़ था, और भारतीय व्यवस्था में गहरी जड़ें जमा चुकी कल्पनाहीनता का एक विशिष्ट उदाहरण था। क्या होता अगर सिंह की उड़ान के बीच में ही कुछ अप्रिय घटना घट जाती? क्या होता अगर आतंकवादियों की सुरक्षा कर रहे सुरक्षाकर्मियों में से कोई गद्दार होता?
वाजपेयी की कैबिनेट आतंकवादियों के साथ सौदेबाजी को लेकर बंटी हुई थी; बंद दरवाजों के पीछे हुई बैठकों में आडवाणी ने आतंकवादियों के साथ किसी भी तरह के समझौते का पुरजोर विरोध किया। हालांकि, वाजपेयी अपनी इस दलील पर अड़े रहे कि यात्रियों की सुरक्षा सर्वोपरि है। वर्षों बाद, जसवंत सिंह ने तीन आतंकवादियों के साथ कंधार की अपनी उड़ान को एक 'दर्दनाक अध्याय' के रूप में याद किया, जिसे वे दोबारा याद नहीं करना चाहते थे। हालांकि, उन्होंने यह स्वीकार किया कि भारत के विदेश मंत्री का ऐसे जोखिम भरे सह-यात्रियों के साथ यात्रा करना मूर्खतापूर्ण था।
31 दिसंबर की शाम जब अपहरण की कोशिश नाकाम हुई, तब तक एक यात्री की मौत हो चुकी थी और सुरक्षा मामलों पर एनडीए सरकार के दबदबे वाले रवैये को करारा झटका लगा था। क्रिसमस का यह असामान्य सप्ताह समाप्त होने पर, मेरी होने वाली पत्नी प्रिया और मैं एक सदमे और शर्मिंदगी से भरे शहर में रात के खाने

के लिए निकले। हमने एक खचाखच भरे रेस्तरां में बेस्वाद नए साल की पूर्व संध्या का खाना खाया और फिर घर लौट गए।
आडवाणी यह सुनिश्चित करने के लिए दृढ़ संकल्पित थे कि भारत को दोबारा इस तरह अपमानित न होना पड़े। उनके मंत्रालय और खुफिया ब्यूरो सहित उसके सभी विभागों को सुरक्षा मामलों में दृढ़ और अडिग रहने का निर्देश दिया गया था। कुछ ही दिनों में, नागरिक उड्डयन मंत्रालय और गृह मंत्रालय ने विमान संचालकों के लिए सुरक्षा मंजूरी पर विचार-विमर्श शुरू कर दिया। आशंका थी कि IC-814 विमान के अपहरणकर्ताओं को अंदरूनी मदद मिली थी। जांचकर्ताओं ने बाद में अपहरणकर्ताओं के साथियों का पता मुंबई और भारत के अन्य हिस्सों तक लगाया।
31 जनवरी 2000 को, विमान अपहरण के ठीक एक महीने बाद, नागरिक उड्डयन सचिव रविंद्र गुप्ता ने विमान संचालकों के लिए सुरक्षा मंजूरी के मुद्दे पर एक बैठक की अध्यक्षता की। बैठक में संगीता गैरोला सहित चार वरिष्ठ अधिकारी उपस्थित थे, जिन्हें घोष ने जेट एयरवेज को अंडरवर्ल्ड से जोड़ने वाला पत्र लिखा था। उन्होंने बैठक में बताया कि ईस्ट वेस्ट एयरलाइंस के संदिग्ध अंडरवर्ल्ड संबंधों और पश्चिम बंगाल के पुरुलिया में हथियारों की अजीबोगरीब घटना (17 दिसंबर 1995 को एक लातवियाई एएन-26 विमान भारत के ऊपर से बिना किसी की नज़र में आए गुजरा और उसने सैकड़ों एके-47 राइफलें और दस लाख से अधिक गोला-बारूद गिराया) के मद्देनजर, सुरक्षा एजेंसियों ने सुरक्षा मंजूरी तंत्र को पहले ही सख्त कर दिया था। आईसी-814 का मामला बैठक में छाया रहा, लेकिन आधिकारिक कार्यवृत्त के अनुसार, किसी ने भी इसका जिक्र नहीं किया। प्रमुख प्रश्नों में से एक यह था कि विमान संचालकों को सुरक्षा मंजूरी प्रदान करने के लिए कौन सा मंत्रालय नोडल एजेंसी होना चाहिए।
25 मार्च 2000 को, गैरोला ने नागरिक उड्डयन मंत्रालय को पत्र लिखकर बैठक में उठाए गए प्रश्नों पर अपने मंत्रालय की टिप्पणियों से अवगत कराया। सर्वोपरि यह था कि 'सुरक्षा मंजूरी देने के लिए अधिकृत प्राधिकरण गृह मंत्रालय होगा' और 'हर चरण में सुरक्षा मंजूरी आवश्यक होगी', जैसे कि किसी ऑपरेटर के बोर्ड में नए निदेशकों की नियुक्ति।
इसी दौरान मेस्को एयरलाइंस ने अपने बोर्ड में दो नए निदेशकों को शामिल करने की अनुमति मांगी। गृह मंत्रालय में अवर सचिव वी.पी. भाटिया ने नागरिक

उड्डयन मंत्रालय को पत्र लिखकर अनुमति देने से इनकार कर दिया, क्योंकि दोनों निदेशकों पर सीबीआई द्वारा जालसाजी और खातों में हेराफेरी के आरोप में जांच चल रही थी। दिल्ली फ्लाइंग क्लब के बोर्ड के मामले में भी, भाटिया ने गांधी परिवार के करीबी सहयोगी कांग्रेस नेता सतीश शर्मा को उनके खिलाफ आपराधिक मामलों के कारण सुरक्षा मंजूरी देने से इनकार कर दिया। एनडीए सरकार स्पष्ट संदेश दे रही थी कि वह राष्ट्रीय सुरक्षा, विशेषकर नागरिक उड्डयन के क्षेत्र में, से समझौता करने को तैयार नहीं है।
8 मार्च 2000 को नागरिक उड्डयन मंत्रालय ने जेट एयरवेज के पुनर्गठित निदेशक मंडल का विवरण आडवाणी को भेजा। इसमें आठ अनिवासी भारतीय और पांच विदेशी शामिल थे। आडवाणी के नेतृत्व वाले गृह मंत्रालय ने - जिन्हें उनके अनुयायी लौह पुरुष कहते थे और जो मुद्दों पर अपने दृढ़ रुख के लिए जाने जाते थे - इस मामले पर महीनों तक कोई कार्रवाई नहीं की, जबकि नागरिक उड्डयन मंत्रालय लगातार अनुस्मारक भेजता रहा। सरकार ने जेट एयरवेज से संबंधित संसद सदस्यों के प्रश्नों पर कई आश्वासन दिए थे, और यह बात भी आडवाणी को परेशान कर रही थी। 4 जनवरी 2002 को नागरिक उड्डयन सचिव ए.एच. जंग ने गृह मंत्रालय के अपने समकक्ष कमल पांडे को इस मुद्दे पर भेजे गए कई अनुस्मारकों के बारे में पत्र लिखा। उन्होंने बताया कि जेट एयरवेज 'अपने पुनर्गठित बोर्ड के लिए उचित सुरक्षा मंजूरी के बिना ही एक निर्धारित एयरलाइन के रूप में परिचालन जारी रखे हुए है'।
9 दिसंबर 2003 तक, नागरिक उड्डयन मंत्री राजीव प्रताप रूडी ने भी इस मुद्दे पर आडवाणी को पत्र लिखा था। उन्होंने बताया कि जेट एयरवेज का मामला सबसे पहले मार्च 2000 में गृह मंत्रालय के समक्ष उठाया गया था। ‘हालांकि, पिछले तीन वर्षों में कई बार अनुरोध किए जाने के बावजूद, गृह मंत्रालय से अभी तक कोई स्पष्ट जवाब नहीं मिला है। गृह मंत्रालय की ओर से स्पष्ट सलाह न मिलने के कारण यह मंत्रालय एक असहज स्थिति में आ गया है।’ रूडी ने आगे कहा कि एयरलाइन से संबंधित चिंताओं का उचित समाधान निकालने के लिए संसद को दिए गए पांच आश्वासन अभी भी लंबित हैं और यह मुद्दा संसदीय समिति की बैठकों में भी उठाया गया था।
तीन साल बाद, खुफिया एजेंसी प्रमुख के.पी. सिंह ने पूरे मामले को एक अजीब मोड़ दे दिया। उन्होंने दावा किया कि उनकी एजेंसी ने पहले जेट एयरवेज को सुरक्षा मंजूरी इसलिए दी थी क्योंकि 'उस समय न तो एयरलाइंस और न ही उसके

निदेशकों के खिलाफ खुफिया एजेंसी और खुफिया एजेंसी के रिकॉर्ड में कोई विशेष प्रतिकूल जानकारी उपलब्ध थी'। उन्होंने गृह मंत्रालय को लिखा: 'जेट एयरवेज या उसके मालिक नरेश गोयल के बारे में खुफिया एजेंसी और अन्य स्रोतों से जो भी जानकारी सामने आई है, वह ऐसी नहीं लगती जिससे एयरलाइंस को पहले दी गई सुरक्षा मंजूरी को वापस लेना उचित ठहराया जा सके।' इससे जेट एयरवेज के संदिग्ध फंड और उसके प्रमोटर के दाऊद इब्राहिम से संबंधों की खुफिया जांच समाप्त हो गई।
विभिन्न विभागों के बीच हुए ये आदान-प्रदान वर्षों से सरकारी फाइलों में दबे रहे हैं, और हमेशा के लिए वहीं पड़े रहते, अगर मेरे एक परिचित ने व्यक्तिगत जोखिम उठाकर इन्हें मुझे न सौंपा होता।
सुरक्षा प्रतिष्ठान के कुछ अधिकारियों ने अपने पेशेवर जीवन का एक महत्वपूर्ण हिस्सा नरेश गोयल, उनके कारोबार के स्रोत, उनके संदिग्ध व्यापारिक सौदों (और उनके कई दोस्तों के भी) पर नज़र रखने में बिताया था, जो राजनीतिक हलकों और अंडरवर्ल्ड में फैले हुए थे। हर बार सरकार बदलने पर, इन अधिकारियों को लगता था कि सख्त कार्रवाई की जाएगी। लेकिन गोयल का दबदबा कायम रहा।
सिंह के नोट में कोई तथ्य नहीं छोड़े गए थे। गोयल को दोषमुक्त करने से पहले, उन्होंने कहा कि जेट एयरवेज के मालिक ने 'तस्करी और अन्य अवैध तरीकों से अपनी संपत्ति अर्जित की है और संभवतः एयरलाइन पर विदेशी मुद्रा विनियमन अधिनियम (FERA) के उल्लंघन के लिए जांच चल रही थी'। सिंह ने यह भी बताया कि गोयल पर अतीत में प्रतिद्वंद्वी एयरलाइनों को कमजोर करने के लिए अनुचित व्यावसायिक हथकंडे अपनाने का आरोप लगाया गया था, जैसे कि यूनियन नेताओं को खरीदना और राजनीतिक संपर्कों का फायदा उठाना। सिंह ने लिखा, 'हालांकि, इस तरह के हथकंडे अत्यधिक प्रतिस्पर्धी व्यावसायिक माहौल में असामान्य नहीं हैं और हालांकि ऐसे लक्षण उनकी पेशेवर नैतिकता पर प्रतिकूल प्रभाव डालते हैं, लेकिन वे राष्ट्रीय सुरक्षा पर कोई असर नहीं डालते।' उनके नोट में कुछ महीने पहले दी गई जानकारी का जिक्र था, जिसमें गोयल के दाऊद गिरोह से संबंधों का विवरण दिया गया था। इसमें आगे कहा गया कि यह जानकारी मुख्य रूप से आर एंड एडब्ल्यूए (आर एंड एडब्ल्यूए) से प्राप्त की गई थी और खुफिया एजेंसी ने पहले से दी गई जानकारी को और विकसित करने में असमर्थता जताई थी, सिवाय इसके कि गोयल ने तस्करी और अन्य अवैध तरीकों से धन

अर्जित किया था। सिंह ने दाऊद गिरोह और गोयल के बीच हुई बातचीत के आईबी द्वारा किए गए इंटरसेप्ट्स का उल्लेख नहीं किया - ये इंटरसेप्ट्स उनकी अपनी एजेंसी ने पहले ही सरकार को सौंप दिए थे।
आश्चर्य की बात यह है कि गृह मंत्रालय - यहां तक कि आडवाणी ने भी - कोई आपत्ति नहीं जताई, हालांकि कुछ ही महीने पहले गृह मंत्री ने संसद में खड़े होकर सदन को उचित कार्रवाई का आश्वासन दिया था।
दाऊद कोई साधारण अपराधी नहीं है। दाऊद को 'विशेष रूप से नामित वैश्विक आतंकवादी' घोषित करते हुए और उसकी सभी संपत्तियों को फ्रीज करते हुए, अमेरिकी वित्त विभाग ने कहा था: 'इब्राहिम का गिरोह ब्रिटेन और पश्चिमी यूरोप में बड़े पैमाने पर नशीले पदार्थों की तस्करी में शामिल है। दक्षिण एशिया, मध्य पूर्व और अफ्रीका से गिरोह के तस्करी मार्ग ओसामा बिन लादेन और उसके आतंकवादी नेटवर्क के साथ साझा किए जाते हैं। इब्राहिम के गिरोह द्वारा हाल के वर्षों में स्थापित सफल मार्गों का उपयोग बाद में बिन लादेन ने किया है।' अमेरिकी घोषणा में यह भी बताया गया कि महाराष्ट्र के एक पूर्व पुलिस कांस्टेबल के इस बेटे ने 'दंगों, आतंकवादी कृत्यों और सविनय अवज्ञा को भड़काकर भारतीय सरकार को अस्थिर करने का लगातार प्रयास किया है। भारत को वर्तमान में 12 मार्च, 1993 के बॉम्बे एक्सचेंज बम विस्फोटों के लिए उसकी तलाश है, जिसमें सैकड़ों भारतीय मारे गए और एक हजार से अधिक घायल हुए।' इसमें यह भी कहा गया कि इब्राहिम ने भारत के खिलाफ काम करने वाले इस्लामी आतंकवादी समूहों, जैसे लश्कर-ए-तैयबा (LeT) को भी वित्तीय सहायता प्रदान की थी।
सिंह के पत्र में अंजन घोष द्वारा कुछ महीने पहले कही गई बातों का खंडन किया गया था। इस मामले से जुड़े एक अधिकारी ने मुझे बताया, 'यह एक सीधा-सादा मामला था, और मंत्रालय का रुख क्या होना चाहिए था, इस बारे में कोई संदेह नहीं था।'
सूचना एवं संचार मंत्रालय के प्रमुख के निर्देश पर, गृह मंत्रालय ने सुरक्षा मंजूरी जारी करने का अपना अधिकार त्याग दिया और इसे नागरिक उड्डयन मंत्रालय को सौंप दिया। निजी एयरलाइन ऑपरेटरों के लिए सुरक्षा मंजूरी से संबंधित जितने भी रिकॉर्ड मैंने देखे हैं, उनमें जेट एयरवेज एकमात्र ऐसा मामला है जहां गृह मंत्रालय ने यह अधिकार त्याग दिया है।

गृह मंत्रालय के निदेशक मुकेश मित्तल ने नागरिक उड्डयन मंत्रालय को पत्र लिखकर बताया कि उन्हें जेट एयरवेज के अध्यक्ष श्री नरेश गोयल के खिलाफ कुछ प्रतिकूल जानकारी मिली है। उन्होंने गोयल से संबंधित जानकारी का सारांश भी संलग्न किया, जिसमें अंजन घोष और के.पी. सिंह द्वारा उठाए गए लगभग सभी बिंदुओं को दोहराया गया था और घोष के पत्र को लगभग हूबहू प्रस्तुत किया गया था। पत्र के अंत में लिखा गया, "हालांकि यह रिपोर्ट अपुष्ट है, लेकिन इसमें हवाला (अवैध धन हस्तांतरण) चैनलों के माध्यम से धन हस्तांतरण के कारण कंपनी की हिस्सेदारी में इस तीव्र वृद्धि का कारण बताया गया है।"
इस अभियोग के बाद, मित्तल के आधिकारिक नोट में यह निष्कर्ष निकाला गया: 'इस स्थिति को देखते हुए, नागरिक उड्डयन मंत्रालय से अनुरोध है कि वह सभी पहलुओं को ध्यान में रखते हुए प्रस्ताव पर विचार करे और उचित निर्णय ले।' उन्होंने आगे कहा कि यह आदेश 'गृह सचिव की स्वीकृति' से जारी किया गया है। एक बार फिर, आडवाणी ने इस मुद्दे पर कोई टिप्पणी नहीं की। फिर भी, उन्हें अकेले दोषी नहीं ठहराया जा सकता, क्योंकि इस व्यवस्था में सकारात्मक अभिव्यक्ति की बजाय अस्पष्टता और टालमटोल ही कामकाज की पहचान हैं।
सरकार द्वारा लगभग क्लीन चिट दिए जाने के बावजूद, खुफिया एजेंसियों ने जेट एयरवेज से संबंधित फाइलें कभी बंद नहीं कीं। 2015 तक, मुझे इस बात की पुष्टि मिली थी कि मामला अभी भी खुला हुआ है। एक खुफिया एजेंसी के पूर्व प्रमुख ने कहा कि यह मामला कभी बंद नहीं हो सकता। एक शाम, जब हम भारतीय राजनीति और व्यापार में अंडरवर्ल्ड और अपराधियों की गहरी जड़ों पर चर्चा कर रहे थे, तो उन्होंने कहा, 'यह हमारे लिए एक परीक्षा है, और यह शर्म की बात है कि इतने पुख्ता सबूतों के बावजूद हम कोई कार्रवाई नहीं कर सके।' उन्होंने तर्क दिया कि दाऊद के नेटवर्क का पूरा दायरा अभी तक जनता के सामने उजागर नहीं हुआ है।
पिछले कई वर्षों से खुफिया एजेंसियां पाकिस्तान में अपने छिपने के ठिकाने से दाऊद के कई राजनीतिक नेताओं और व्यापारियों से संबंधों के महत्वपूर्ण सबूत जुटा रही हैं। उसने भारतीय अभिजात वर्ग और व्यापारियों से संपर्क बनाए रखने के बेहद परिष्कृत तरीके विकसित कर लिए थे। डॉ. मनमोहन सिंह की यूपीए सरकार (जो 2004 से 2014 तक सत्ता में थी) में एक केंद्रीय मंत्री दक्षिण दिल्ली के एक निवासी के माध्यम से दाऊद से संपर्क में थे, जिस पर क्रिकेट मैचों में हेराफेरी करने का भी संदेह था। वर्षों से खुफिया

एजेंसियों द्वारा की गई कई गुप्त सूचनाओं के अनुसार, वह हेराफेरी मंत्री के माध्यम से दाऊद की भारत वापसी के लिए बातचीत कर रही थी। दाऊद भारत लौटने की अनुमति मिलने पर कुछ साल भारतीय जेल में बिताने को तैयार था। कराची स्थित इस हेराफेरी करने वाले को पाकिस्तान में कभी घर जैसा महसूस नहीं हुआ; भारत में ही उसने अपना दौलत और अनुयायी बनाए थे। इन गुप्त सूचनाओं में, दक्षिण दिल्ली निवासी दाऊद और उसके प्रमुख सहयोगियों से वादा करते हुए सुना जा सकता है कि मंत्री सरकार से पाकिस्तान को दाऊद के प्रत्यर्पण के लिए एक समझौता पेश करने का प्रयास करेंगे। आधिकारिक तौर पर, भारत पाकिस्तान से दाऊद को भारत को लौटाने की मांग कर रहा था, लेकिन पाकिस्तान लगातार इस बात से इनकार करता रहा कि वह उसके क्षेत्र में कहीं भी मौजूद है। विश्वसनीय खुफिया सूत्रों के अनुसार, जो इस गतिविधि पर करीब से नजर रख रहे हैं, उत्तर प्रदेश के एक प्रमुख क्षेत्रीय राजनेता को दाऊद के संदेश मुंबई से भेजे गए मानव-संदेशवाहकों के माध्यम से मिलते थे। दाऊद और उसके सहयोगी मुंबई स्थित एक मुस्लिम उपदेशक को संदेश भेजते थे, और वह बदले में उत्तर प्रदेश से भर्ती किए गए भरोसेमंद युवाओं के माध्यम से जानकारी आगे पहुंचाता था। एक अधिकारी ने दावा किया कि पिछले एक दशक में इन संदेशवाहकों का इस्तेमाल दर्जनों बार किया गया है।
दाऊद निस्संदेह एकमात्र अपराधी नहीं है जिसके साथ भारतीय राजनीतिक वर्ग दोस्ती रखता है। हालांकि इस पर पर्याप्त रूप से विचार-विमर्श नहीं हुआ है, लेकिन पुलिस की अप्रत्याशित जांच, खुफिया जानकारी या लोगों के करियर में अचानक आए उतार-चढ़ाव कई बातें बयां करते हैं। महाराष्ट्र राज्य सरकार में 2015 तक कनिष्ठ मंत्री रहे और शरद पवार के करीबी सहयोगी सचिन अहीर की कहानी इसका एक उदाहरण है। शरद पवार कभी केंद्रीय कृषि मंत्री थे और आज भी भारत के सबसे शक्तिशाली राजनेताओं में से एक हैं।
1970 और 80 के दशक के बंबई में, महाराष्ट्र कांग्रेस के दो वरिष्ठ सदस्य - शरद पवार और ए.आर. अंतुले - आमने-सामने थे। यह वह दौर था जब आपराधिक सरगना राजनेताओं के मित्र हुआ करते थे और बंबई कपड़ा मिलों का शहर था। सचिन अहीर और उनके बड़े भाई विजय ने एक मिल मालिक के लिए बाहुबली के रूप में अपना करियर शुरू किया। अपने चाचा, गैंगस्टर अरुण गावली की तरह, अहीर बंधुओं को भी बाहुबल का वाकिफ था।

फिर अहीरों की कहानी पवार-अंतुले की प्रतिद्वंद्विता से जुड़ गई। मुसलमानों के बीच अंतुले के प्रभाव का मुकाबला करने के लिए, पवार ने महाराष्ट्र के कोंकण क्षेत्र में मौलाना जियाउद्दीन बुरहानुद्दीन बुखारी को बढ़ावा दिया, कोंकण मर्केंटाइल बैंक की स्थापना की और उसकी बागडोर बुखारी को सौंप दी। उन्हें मुंबई के मध्य में मिल्लत नगर नामक एक मुस्लिम बस्ती बसाने के लिए एक बड़ा भूखंड भी दिया गया।
बाबरी मस्जिद विध्वंस के बाद तनावपूर्ण माहौल में बुखारी की गोली मारकर हत्या कर दी गई। मामले की पुलिस जांच में विजय अहीर मुख्य साजिशकर्ता साबित हुआ। उसे जेल भेज दिया गया और जल्द ही उसके छोटे भाई सचिन, जो उस समय लगभग बीस वर्ष के थे, को राष्ट्रीय मिल मजदूर संघ (आरएमएमएस) का महासचिव नियुक्त किया गया। आरएमएमएस बंबई के मिल श्रमिकों का एक शक्तिशाली ट्रेड यूनियन था जिसकी स्थापना कांग्रेस ने 1945 में की थी। सचिन की तरक्की उतनी ही तेज़ी से हुई जितनी तेज़ी से उन्होंने शुरुआत की थी। वे देखते ही देखते आरएमएमएस के अध्यक्ष बन गए। 1999 में, जब पवार और कुछ अन्य लोगों ने इतालवी मूल की सोनिया गांधी के नेतृत्व का विरोध करते हुए कांग्रेस छोड़ दी, तो सचिन भी उनमें शामिल थे।
सचिन का उदय अप्रत्याशित नहीं था। मुंबई में निर्माण, भूमि सौदों और अन्य व्यवसायों में अंडरवर्ल्ड का बहुत दबदबा है। इन्हीं व्यवसायों से आने वाला पैसा शहर की राजनीति को चलाता है। और इस क्षेत्र में दाऊद से बड़ा कोई नहीं है।
फिल्मों, राजनीति, सट्टेबाजी, ड्रग तस्करी, ज़मीन सौदों, निर्माण कार्यों और सुरक्षा एजेंसियों की कल्पनाओं में दाऊद का साया आज भी बरकरार है। 2013 की गर्मियों में, जब दिल्ली और मुंबई पुलिस ने इंडियन प्रीमियर लीग में बड़े पैमाने पर चल रही अवैध सट्टेबाजी और फिक्सिंग का पर्दाफाश किया, तो उन्होंने कहा कि दाऊद गिरोह ही इन सट्टेबाजी गिरोहों को नियंत्रित करता था। दिल्ली पुलिस ने पूर्व भारतीय क्रिकेटर एस. श्रीसंत समेत कई लोगों पर महाराष्ट्र संगठित अपराध नियंत्रण अधिनियम (एमसीओसीए) के तहत आरोप लगाए, जिसमें कहा गया कि उन्होंने दाऊद और उसके खास सहयोगी छोटा शकील के इशारे पर मैचों में स्पॉट फिक्सिंग की थी। हालांकि सबूत पुख्ता नहीं थे, लेकिन दाऊद से संबंधों के आरोप किसी भी मामले को मजबूत और सनसनीखेज बनाने का एक कारगर तरीका है, साथ ही एजेंसियों की कमजोर जांच क्षमताओं को

[illegible] de [illegible] 2015 [illegible], [illegible] de la [illegible] de [illegible] [illegible] de [illegible] de [illegible] de [illegible] de [illegible], [illegible] de [illegible], de [illegible] de [illegible] [illegible] de [illegible] [illegible] de la [illegible]

[illegible], [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] de [illegible] de la [illegible] 11 [illegible] 2005 de [illegible] de [illegible] [illegible] de la [illegible] [illegible] de [illegible] de [illegible] de [illegible] de [illegible] [illegible] [illegible] de [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] de [illegible], de [illegible] de [illegible] [illegible] de [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] de [illegible] de la [illegible], de [illegible] [illegible] de [illegible] [illegible] de [illegible] de [illegible] [illegible] [illegible] de [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible]

सबसे वांछित अपराधी और अमेरिका द्वारा विशेष रूप से नामित वैश्विक आतंकवादी घोषित इब्राहिम कथित तौर पर इस समारोह में शामिल नहीं हुआ। हालांकि, एक मीडिया आउटलेट ने बताया कि माना जाता है कि पाकिस्तान में रह रहा इब्राहिम जाली दस्तावेजों के सहारे 9 जुलाई को मक्का में जोड़े के निकाह समारोह में शामिल होने के लिए गया था। शादी और उसके बाद हुए रिसेप्शन ने भारतीय मीडिया में काफी दिलचस्पी पैदा की, जिसने बताया कि भारतीय पुलिस और सुरक्षा एजेंसियां भारत के उन व्यापार, मनोरंजन और अंडरवर्ल्ड हस्तियों पर नजर रख रही थीं जो रिसेप्शन में शामिल होने की कोशिश कर सकते थे। अंत में, कोई भी प्रमुख भारतीय वास्तव में दुबई नहीं पहुंचा।” इब्राहिम ने जिस तरह से इतनी बेशर्मी से इस तरह की घटना को अंजाम दिया है, उससे हमारे भारतीय संपर्क बेहद नाराज हैं।

भारत में सफल होने के लिए, राजनीतिक क्षेत्र में और व्यवस्था के भीतर गहरे संबंध होना महत्वपूर्ण है। 2004 की गर्मियों में दक्षिणपंथी शासन के अंत से नरेश गोयल के लिए कुछ खास बदलाव नहीं आया – यह लगभग एक दशक पहले कांग्रेस के सत्ता खोने पर ईस्ट वेस्ट एयरलाइंस के भाग्य से बिल्कुल अलग था।
गोयल के हर महत्वपूर्ण क्षेत्र में अच्छे संबंध थे। नई सत्तारूढ़ सरकार, यूपीए में प्रमुख क्षेत्रीय दलों में से एक शरद पवार की राष्ट्रवादी कांग्रेस पार्टी (एनसीपी) थी, जिसने नई दिल्ली की राजनीतिक गलियारों के अनुसार, नागरिक उड्डयन मंत्रालय पर जोर दिया था। प्रफुल पटेल, एक प्रतिभाशाली व्यवसायी, जिनके परिवार ने तंबाकू के कारोबार में खूब पैसा कमाया था और जो पवार के खास सहयोगी माने जाते हैं, नागरिक उड्डयन मंत्री बन गए।
नई सरकार के सत्ता में आने के समय के आसपास – जब भारत ने अभी तक अपनी निजी एयरलाइनों को विदेश में उड़ान भरने की अनुमति नहीं दी थी – जेट एयरवेज ने लंदन, कुआलालंपुर, सिंगापुर और बैंकॉक हवाई अड्डों पर स्लॉट के लिए आवेदन करना शुरू कर दिया। जब यह मामला संसद में उठा, तो पटेल ने कहा कि एयरलाइन यह सब अपने जोखिम पर कर रही है। उन्होंने यह नहीं बताया कि पिछली सरकार

द्वारा नियुक्त एक समिति ने विमानन क्षेत्र के विस्तार और आधुनिकीकरण के लिए एक विस्तृत रोडमैप प्रस्तुत किया था। और समिति की केवल एक सिफारिश को लागू करने के लिए पहले ही प्रक्रिया शुरू कर दी गई थी: निजी एयरलाइनों को विदेश में उड़ान भरने की अनुमति देना। यह बात न तो सार्वजनिक रूप से ज्ञात थी और न ही संसद को इसकी जानकारी दी गई थी। कुछ ही महीनों में, जेट एयरवेज एक अंतरराष्ट्रीय एयरलाइन बन गई।
जब जेट एयरवेज अमेरिका में अपनी सेवाएं शुरू करने की तैयारी कर रही थी, तभी मैरीलैंड स्थित जेट एयरवेज इंक. ने विभिन्न अधिकारियों के समक्ष शिकायतें दर्ज कराईं और मांग की कि भारतीय कंपनी को अमेरिका में उड़ान भरने की अनुमति न दी जाए, क्योंकि उस पर ट्रेडमार्क उल्लंघन का आरोप था। कंपनी की सीईओ और अध्यक्ष नैन्सी एम. हेकरमैन ने यह भी कहा कि जेट एयरवेज ऑफ इंडिया अल कायदा की कंपनी है। उनकी आपत्तियों को अमेरिका ने भारतीय सरकार को भेजकर स्पष्टीकरण मांगा। 23 मई 2005 की शिकायत के कुछ ही महीनों के भीतर, भारत सरकार ने आधिकारिक तौर पर अमेरिका को सूचित किया कि जेट एयरवेज के संबंध में कोई सुरक्षा संबंधी चिंता नहीं है।
जब एयरलाइन अमेरिका से मंज़ूरी का इंतज़ार कर रही थी, उसी दौरान 2006 में सिंगापुर और ब्रिटेन की सरकारों ने भी संदिग्ध संगठनों से इसके संबंधों को लेकर सवाल उठाए। यह सवाल तब उठे जब लंदन में जेट एयरवेज के एक कर्मचारी, अमीन अस्मीन तारिक को तरल बमों से अटलांटिक पार की उड़ानों को उड़ाने की नाकाम कोशिश में कथित तौर पर शामिल होने के आरोप में गिरफ्तार किया गया। नई दिल्ली का रुख़ एक जैसा रहा: जेट एयरवेज से सुरक्षा को कोई खतरा नहीं था। गोयल और जेट एयरवेज पर सालों से नज़र रख रहे अधिकारियों ने मुझे बताया कि सरकार का उत्साह हैरान करने वाला था। सुरक्षा प्रतिष्ठान के एक वरिष्ठ अधिकारी ने कहा, 'सरकार ने न सिर्फ उन्हें अच्छे आचरण का प्रमाण पत्र दिया, बल्कि कंपनी के पीछे अपनी कूटनीतिक ताकत भी लगा दी।' एक अन्य अधिकारी ने कहा कि राजनीतिक प्रतिष्ठान ने भले ही क्लीन चिट दे दी हो, 'लेकिन भारतीय खुफिया एजेंसियां इस मामले को कभी बंद नहीं कर सकतीं।'
जनवरी 2006 में, जेट एयरवेज ने सुब्रता रॉय के सहारा समूह की एयर सहारा कंपनी का अधिग्रहण करने का प्रस्ताव रखा। नरेश गोयल की तरह ही, रॉय ने भी बड़े मुकाम हासिल करने के लिए रहस्यमय तरीके से तरक्की की थी। 1978 में एक छोटी सी गैर-बैंकिंग कंपनी से शुरुआत करते हुए, जो बहुत कम जमा राशि एकत्र

करती थी, ज्यादातर उन गरीबों से जिनकी औपचारिक बैंकिंग तक पहुंच नहीं थी, रॉय ने एक विशाल व्यापारिक साम्राज्य का संचालन किया, जिसके अंतर्गत लंदन का ग्रोसवेनर हाउस, न्यूयॉर्क का प्लाजा होटल, समाचार पत्र, टीवी स्टेशन, रेसिंग टीमें और आलीशान अपार्टमेंट कॉम्प्लेक्स आते हैं। वे भारत में खेलों के प्रमुख प्रायोजकों में से एक हैं और उनके यहाँ दस लाख से अधिक लोग कार्यरत हैं जो एक-दूसरे को 'सहारा प्रणाम' कहकर अभिवादन करते हैं। मई 2013 की एक भीषण गर्मी में, रॉय ने लखनऊ शहर के एक स्टेडियम में अपने 1,21,653 वर्दीधारी कर्मचारियों को इकट्ठा किया और राष्ट्रगान गाकर गिनीज बुक में एक रिकॉर्ड बनाया। वे अपने देशभक्ति के जज़्बे को खुलकर दिखाते हैं।
मार्च 2014 में, भारत के सर्वोच्च न्यायालय ने सहारा समूह और देश के पूंजी बाजार नियामक, भारतीय प्रतिभूति और विनिमय बोर्ड (एसईबीआई) के बीच चल रहे विवाद में रॉय को जेल भेज दिया। यह विवाद 3.1 करोड़ निवेशकों से कथित तौर पर एकत्र किए गए 24,773 करोड़ रुपये के लेखांकन में विसंगतियों को लेकर था। इनमें से अधिकांश ग्राहकों के पते सत्यापित नहीं किए जा सके थे, और रॉय की कानूनी टीम पर बाजार नियामक और अदालतों को गुमराह करने का आरोप लगाया गया था। 2016 के मध्य तक, वह अभी भी जेल में हैं।
चलिए, उनके एयरलाइन कारोबार पर वापस आते हैं। जनवरी 2006 में, जेट एयरवेज ने एयर सहारा को 2,300 करोड़ रुपये में खरीदने का प्रस्ताव रखा, जो भारतीय विमानन इतिहास का अब तक का सबसे बड़ा सौदा था। कुछ विश्लेषकों को चिंता थी कि जेट एयरवेज ज़रूरत से ज़्यादा कीमत दे रहा है। नागरिक उड्डयन मंत्रालय ने सैद्धांतिक मंजूरी दे दी, लेकिन नरेश गोयल के एयर सहारा बोर्ड में शामिल होने के संदर्भ में सुरक्षा मंजूरी को लेकर फिर से चिंताएं उठने लगीं। यूपीए सरकार के एक मंत्री ने इस मामले से जुड़ी एक खुफिया एजेंसी के प्रमुख को अलग ले जाकर इस मामले को सावधानीपूर्वक निपटाने का निर्देश दिया। अधिकारी ने मुझे बताया, 'मैं हैरान था क्योंकि वह गोयल के करीबी माने जाते थे, और यहां वह मुझे जेट एयरवेज के साथ सख्ती बरतने के लिए कह रहे थे।' निर्देशानुसार, एजेंसियों ने सावधानीपूर्वक काम किया, जिससे प्रक्रिया में देरी हुई और परिणामस्वरूप, सौदा टूट गया। दोनों पक्षों ने एक-दूसरे के खिलाफ मुकदमे दायर किए। हैरानी की बात यह है कि सौदा आधिकारिक तौर पर रद्द होने के एक दिन बाद, गोयल को गृह मंत्रालय से सुरक्षा मंजूरी मिल गई।

सहारा के उद्यम घाटे में चल रहे थे और समूह नकदी की कमी से जूझ रहा था। उसने जेट के साथ फिर से बातचीत शुरू की। इस बार, हताश सहारा ने 1,450 करोड़ रुपये में समझौता कर लिया, जो मूल प्रस्ताव से लगभग 40 प्रतिशत कम था। मुंबई में एक बैठक के दौरान सौदे के प्रमुख वार्ताकारों में से एक ने मुझसे कहा, 'मैंने सुब्रता रॉय को शायद ही कभी इतना असहाय देखा हो। नरेशजी पूरी तरह से नियंत्रण में थे।'
जेट एयरवेज के बढ़ते प्रभाव के साथ, भारतीय विमानन बाजार - उस समय की भारतीय अर्थव्यवस्था की तरह ही - तेजी से विकसित हो रहा था। 2000-01 में, भारतीय विमानन कंपनियों में कुल 1.4 करोड़ यात्रियों ने यात्रा की; यह संख्या 2009-10 तक बढ़कर 4.5 करोड़ हो गई। भारत के कई पुराने हवाई अड्डों का जीर्णोद्धार किया गया और निजी व्यवसायी विमानन व्यवसाय में उतरे, जिससे उन्हें भरपूर लाभ मिला।
जिस समय जेट एयरवेज और एयर सहारा के बीच सौदे पर बातचीत चल रही थी, उसी दौरान सरकार ने दिल्ली के पुराने हवाई अड्डे के जीर्णोद्धार का फैसला किया। दिल्ली इंटरनेशनल एयरपोर्ट प्राइवेट लिमिटेड का गठन किया गया, जिसमें सरकार की 26 प्रतिशत हिस्सेदारी थी, जबकि शेष हिस्सेदारी फ्रैपोर्ट और मलेशिया एयरपोर्ट्स होल्डिंग बरहाद सहित निजी कंपनियों के एक समूह के पास थी। इस निजी समूह का नेतृत्व भारत के जीएमआर समूह ने किया, जिसकी 50.1 प्रतिशत हिस्सेदारी थी। इस तरह की सार्वजनिक-निजी भागीदारी (पीपीपी) भारत द्वारा अपनी अर्थव्यवस्था, विशेष रूप से जर्जर बुनियादी ढांचे में सुधार के प्रयासों की प्रमुख विशेषताओं में से एक है। दिल्ली हवाई अड्डा भारत के आर्थिक पुनरुत्थान, बुनियादी ढांचे के आधुनिकीकरण के प्रयासों, 'नए भारत' को आकार देने वाली साझेदारियों और इन सभी को कमजोर करने वाले संदिग्ध सौदों का प्रतीक है।
जुलाई 2004 में, जब हवाई अड्डे के पुनर्विकास के लिए बोलियां आमंत्रित की गईं, तो जीएमआर प्रमुख दावेदारों में शामिल नहीं थी। लेकिन जनवरी 2006 में, जीएमआर के नेतृत्व वाले कंसोर्टियम को 5,106 एकड़ के इंदिरा गांधी अंतर्राष्ट्रीय हवाई अड्डे के पुनर्विकास का कार्य सौंपा गया। फिर, अगस्त 2012 में, सरकारी लेखा परीक्षक सीएजी ने हवाई अड्डे परियोजना की कड़ी आलोचना करते हुए सरकार पर संयुक्त उद्यम (जेवी) के प्रति घोर पक्षपात का आरोप लगाया, जिसके परिणामस्वरूप जनता को अरबों डॉलर का नुकसान हुआ। सीएजी

ने यह भी पाया कि जेवी की अवधि को तीस वर्ष तक सीमित करने वाला एक खंड, जिसे 'आपसी सहमति और शर्तों पर बातचीत' के माध्यम से तीस वर्ष और बढ़ाया जाना था, अंतिम अनुबंध से रहस्यमय तरीके से हटा दिया गया था, जिससे जेवी अनुबंध को बढ़ाना आसान हो गया। यह विशेष रूप से चिंताजनक था क्योंकि यह यूपीए मंत्रिपरिषद द्वारा लिया गया निर्णय था। हवाई अड्डे के संचालक को सरकारी एजेंसियों द्वारा भुगतान की जा रही राशि से भी बहुत कम दर पर व्यावसायिक उपयोग के लिए भूमि पट्टे पर देने की अनुमति दी गई थी। मात्र 100 रुपये वार्षिक किराए और 6.19 करोड़ रुपये के एकमुश्त भुगतान के बदले ऑपरेटर को 58 वर्षों की रियायत अवधि में 1,63,557 करोड़ रुपये की कमाई क्षमता वाली भूमि का उपयोग करने की अनुमति दी गई थी। हवाई अड्डे से उड़ान भरने वाले प्रत्येक यात्री को उपयोगकर्ता शुल्क देना पड़ता था, और आज भी देना पड़ता है, जो अनुबंध के प्रावधानों का हिस्सा नहीं था। 44 पृष्ठों की ऑडिट रिपोर्ट निजी कंसोर्टियम को दिए गए लाभों की विस्तृत सूची से भरी हुई है। रिपोर्ट के कारण हमेशा की तरह विरोध प्रदर्शन और आक्रोश का दौर शुरू हुआ, जो कुछ ही दिनों में शांत हो गया।

अपने शानदार हवाई अड्डों और फलते-फूलते विमानन क्षेत्र के साथ, भारत ने उस समय से बहुत लंबा सफर तय किया है जब जे.आर.डी. टाटा ने देश की पहली एयरलाइन की स्थापना की थी। 29 जुलाई 1904 को पेरिस में जन्मे - राइट बंधुओं द्वारा किटी हॉक में पहला विमान उड़ाने के ठीक सात महीने बाद - जे.आर.डी. (जैसा कि वे बेहतर जाने जाते थे) ब्रिटिश भारत के एक प्रमुख औद्योगिक घराने के वंशज थे।
टाटा परिवार अक्सर फ्रांस के हार्डेलॉट नामक समुद्रतटीय शहर में छुट्टियां बिताने जाता था, जहां लुई ब्लेरियट का घर था। ब्लेरियट पहले पायलट थे जिन्होंने 1909 में इंग्लिश चैनल को पार किया था। 1927 में चार्ल्स लिंडबर्ग द्वारा अटलांटिक महासागर पार करने तक, ब्लेरियट का कारनामा विमानन के नवोदित इतिहास में सबसे साहसिक उपलब्धि माना जाता था। ब्लेरियट का विमान टाटा के छुट्टी वाले घर के पास समुद्रतट पर उतरता था - यह एक रोमांचक दृश्य था जिसने उस युवा लड़के पर गहरा प्रभाव डाला होगा।

पंद्रह वर्ष की आयु में, प्रथम विश्व युद्ध की समाप्ति के ठीक बाद, जेआरडी ने एक शुरुआती फ्रांसीसी विमान, कॉड्रॉन बैगनेट पर अपनी पहली उड़ान भरी। जेआरडी को विमानन का चस्का लग गया था – और इसी लत ने उन्हें भारतीय उपमहाद्वीप में नागरिक विमानन का इतिहास लिखने और पुनर्लेखन करने के लिए प्रेरित किया। अपनी पहली उड़ान के लगभग एक दशक बाद, जेआरडी ने 1929 में बॉम्बे स्थित भारत के पहले फ्लाइंग क्लब से स्नातक की उपाधि प्राप्त की और पहले प्रमाणित पायलट बने। तीन घंटे और पैंतालीस मिनट के दोहरे उड़ान अनुभव के बाद, उन्हें एकल उड़ान की अनुमति दी गई और एक सप्ताह के भीतर ही उन्होंने अपना 'ए' लाइसेंस प्राप्त कर लिया।
‘10 फरवरी 1929 को फेडरेशन एरोनॉटिक इंटरनेशनल (FAI) की ओर से एयरो क्लब ऑफ इंडिया एंड बर्मा द्वारा मुझे सौंपे गए उस छोटे नीले और सुनहरे प्रमाण पत्र से अधिक रोमांच मुझे किसी और दस्तावेज़ ने कभी नहीं दिया। इस पर अंकित संख्या 1 ने इसे अपने पास रखने के मेरे गर्व को और बढ़ा दिया, भले ही इसका मतलब केवल इतना ही था कि मैं भारत में योग्यता प्राप्त करने वाला पहला व्यक्ति था,’ जेआरडी ने कई दशकों बाद अपने जीवनीकार आर.एम. लाला को बताया।
जेआरडी को लाइसेंस मिलने के महज छह सप्ताह बाद, उन्होंने मध्य पूर्व में रॉयल एयर फोर्स के हैवीवेट बॉक्सिंग चैंपियन नेविल विंसेंट के साथ मिलकर भारत की पहली एयरलाइन शुरू करने का विचार रखा। टाटा समूह ने 20 मार्च 1929 को सरकार को पत्र लिखकर पूछा कि क्या वह कराची और बॉम्बे के बीच डाक सेवा शुरू करने में रुचि रखती है। सरकार ने रुचि दिखाई, लेकिन कराची और ब्रिटिश भारत की राजधानी दिल्ली के बीच। इस पत्र के एक महीने के भीतर ही, ब्रिटिश स्वामित्व वाली इंपीरियल एयरवेज, जिसका बाद में ब्रिटिश एयरवेज में विलय हो गया, भारत की पहली डाक सेवा लेकर कराची पहुंची। बॉम्बे के लिए एक स्थानीय संपर्क उड़ान तब सुविधाजनक साबित हुई। टाटा समूह ने 1,25,000 रुपये की सब्सिडी मांगी, लेकिन सरकार ने ऐसी कोई प्रोत्साहन राशि देने से इनकार कर दिया। 1929 और 1931 के बीच, समूह ने इस प्रस्ताव पर सरकार को कई पत्र लिखे, और लाला के अनुसार, इस अवधि ने 'जेआरडी के धैर्य और सहनशीलता' की परीक्षा ली।
जेआरडी ने 9 दिसंबर 1931 को विंसेंट को लिखा, 'मुझे लगता है कि सरकार हमारे साथ बुरा बर्ताव कर रही है... मुझे उम्मीद है कि आप मेरी इस यात्रा को बचा

पाएंगे और यह पता लगा पाएंगे कि क्या सरकार अगले 100 वर्षों में हां या ना कहने का इरादा रखती है।' जेआरडी की दृढ़ता ने टाटा विमानन सेवा के साथ भारत में नागरिक उड्डयन के युग की शुरुआत की।
दशकों बाद, जेआरडी ने उस घटना को याद करते हुए कहा: 'अक्टूबर 1932 की एक रोमांचक सुबह, मैं और एक पस्स मॉथ विमान कराची से अपने पहले बहुमूल्य डाक भार के साथ बॉम्बे के लिए पहली उड़ान पर खुशी-खुशी रवाना हुए। जब हम सौ मील प्रति घंटे की रफ्तार से अपने गंतव्य की ओर बढ़ रहे थे, तो मैंने अपने इस उद्यम की सफलता और इसमें काम करने वाले सभी लोगों की सुरक्षा के लिए मन ही मन प्रार्थना की। उन दिनों हमारी टीम छोटी थी। हमने सफलताएँ और असफलताएँ, सुख और दुख, सब साझा किए, क्योंकि हमने मिलकर उस उद्यम का निर्माण किया जो बाद में एयर इंडिया और एयर इंडिया इंटरनेशनल के रूप में विकसित हुआ।' जेआरडी ईंधन भरवाने और आठ पाउंड डाक पहुंचाने के लिए अहमदाबाद में उतरे। लाला ने लिखा, 'एक बैलगाड़ी रनवे तक आई और छोटे से विमान के टैंक में चार गैलन पेट्रोल डाला गया।' तेज़ हवाओं और एक पक्षी के केबिन में घुसने (जिसे मारना पड़ा) के बावजूद, जेआरडी की पहली उड़ान मुंबई में बॉम्बे के लिए 55 पाउंड डाक लेकर बिना किसी परेशानी के उतरी। उन्होंने दक्षिण भारत के लिए भी डाक पहुंचाई।
इम्पीरियल एयरवेज का विमान हर शुक्रवार शाम कराची पहुँचता और टाटा एविएशन सर्विस को डाक सौंप देता, और टाटा एविएशन सर्विस का पस मॉथ विमान अगली सुबह उड़ान भरता। इम्पीरियल एयरवेज का विमान अगले बुधवार तक टाटा विमान को अपना चक्कर पूरा करने और विदेशी देशों के लिए डाक लेकर वापस आने का इंतज़ार करता। इस नए ऑपरेशन की सबसे बड़ी समस्या यह थी कि इम्पीरियल एयरवेज का विमान लगभग हमेशा ही देर से आता था।
जब 1939 में द्वितीय विश्व युद्ध शुरू हुआ, तो सरकार ने सभी विमानन गतिविधियों को अपने नियंत्रण में ले लिया और टाटा समूह के विमानों को अपने अधीन कर लिया। कंपनी का पहला चार इंजन वाला विमान, डी हैविलैंड 86, तटीय अभियानों के लिए इस्तेमाल किया गया। हालांकि, यह युद्ध जेआरडी के लिए एक अवसर भी साबित हुआ: 'जब युद्ध शुरू हुआ, तो नेविल विंसेंट की मदद से हमने एक ऐसा विमान उद्योग स्थापित करने का प्रस्ताव रखा जो युद्ध के बाद उपयोगी साबित हो। तो हमें क्या बनाना चाहिए? धातु के विमानों के लिए बहुत सारी धातुकर्म सामग्री और अनुभव की आवश्यकता होती थी जिसे हम आसानी से आयात

नहीं कर सकते थे, इसलिए हमने मॉस्किटो बनाने का प्रस्ताव रखा - एक हल्का, दो इंजन वाला लड़ाकू बमवर्षक विमान। यह लकड़ी का बना था और बेहद तेज गति से उड़ सकता था। इसे डी हैविलैंड कंपनी ने बनाया था और इसे एक बड़ा बम ले जाने के लिए डिज़ाइन किया गया था। इसका इस्तेमाल बर्लिन पर बमबारी करने के लिए किया गया था। बेशक, हमें इंजन आयात करना पड़ता। इसका ढांचा काफी सरल था, और बहुत सफल रहा।' ब्रिटिश सरकार ने "हाँ" कह दिया और हमने आगा खान महल के पास पुणे में एक कारखाना बनाना शुरू कर दिया। कारखाने की तैयारियाँ ज़ोरों पर थीं, तभी अंग्रेजों ने आदेश रद्द कर दिया। जेआरडी का मानना था कि अंग्रेज नहीं चाहते थे कि भारत ब्रिटिश उद्योग से प्रतिस्पर्धा करने के लिए एक अच्छा विमान बनाए।
1943 में, विंसेंट मॉस्किटो विमानों के निर्माण के संबंध में सरकार के साथ हुई बातचीत के बाद ब्रिटेन से भारत लौट रहे थे। रॉयल एयर फोर्स (आरएएफ) के पूर्व पायलट ने हडसन बमवर्षक विमान में लिफ्ट ली, जिसे फ्रांस के तट पर मार गिराया गया। विंसेंट अटलांटिक महासागर में हमेशा के लिए लापता हो गए। भारत की स्वतंत्रता के कुछ महीनों बाद, जे.आर.डी. ने टाटा समूह, सरकार और जनता के संयुक्त स्वामित्व वाली एक अंतरराष्ट्रीय एयरलाइन, एयर इंडिया इंटरनेशनल लिमिटेड की स्थापना का प्रस्ताव रखा। स्वतंत्र भारत की नई सरकार ने कुछ ही हफ्तों में उनके प्रस्ताव को मंजूरी दे दी और 8 जून 1948 को पहली बॉम्बे-लंदन सेवा का शुभारंभ हुआ।
द्वितीय विश्व युद्ध के दौरान भारत में अमेरिकी वायु सेना के ठिकानों पर छोड़े गए दर्जनों डकोटा विमानों को खरीदकर, सेवा के उच्च मानकों को लागू करते हुए और दूरदर्शी उत्साह के साथ काम करते हुए, जेआरडी ने एयरलाइन को तेजी से विकसित किया और इसे दुनिया की सर्वश्रेष्ठ एयरलाइनों में से एक के रूप में स्थापित किया। लेकिन फिर, 1952 में, सरकार ने नागरिक उड्डयन क्षेत्र का राष्ट्रीयकरण करने का निर्णय लिया, हालांकि उसने इस बात पर जोर दिया कि जेआरडी एयर-इंडिया इंटरनेशनल के अध्यक्ष बने रहें। उन्होंने 1978 तक कंपनी का नेतृत्व करना जारी रखा। 1968 में, डेली मेल की जूलियन हॉलैंड ने अपने सर्वेक्षण में एयर-इंडिया को शीर्ष एयरलाइनों में स्थान दिया। उन्होंने बताया, 'रोम में विमान के एक घंटे देरी से पहुंचने के दौरान मैंने अपनी सीट पर कुछ चॉकलेट छोड़ दीं। जब मैं वापस लौटी, तो वे अपनी जगह

से हिली नहीं थीं, बल्कि खिड़की पर पर्दे खींच दिए गए थे ताकि उन पर धूप न पड़े और वे पिघल न जाएं।'
चार दशक बाद, जेट एयरलाइनर क्रैश डेटा इवैल्यूएशन सेंटर ने एयर इंडिया को दुनिया की तीसरी सबसे खतरनाक एयरलाइन घोषित किया। यह मूल्यांकन एयर इंडिया की वार्षिक सुरक्षा गणनाओं पर आधारित था, जिसमें पिछले तीस वर्षों के संचालन में हुई सभी विमान दुर्घटनाओं और गंभीर घटनाओं का आकलन उसी अवधि में तय किए गए राजस्व यात्री किलोमीटर (आरपीके) के संदर्भ में किया गया था। इस आकलन में आईएटीए ऑपरेशनल सेफ्टी ऑडिट (आईओएसए) और यूनिवर्सल सेफ्टी ओवरसाइट ऑडिट प्रोग्राम (यूएसओएपी) जैसे अंतरराष्ट्रीय सुरक्षा मानकों को ध्यान में रखा गया था। यह एयर इंडिया को पंगु बनाने वाली व्यापक समस्या का प्रतिबिंब था। कर्मचारियों का मनोबल निम्नतम स्तर पर था, लगातार हड़तालें हो रही थीं, एयरलाइन भारी कर्ज के बोझ तले दबी हुई थी: ऐसा लग रहा था मानो राष्ट्रीय वाहक और उसकी विरासत को नष्ट करने की कोई बड़ी साजिश रची जा रही हो।
यूपीए के 2004-14 के कार्यकाल के दौरान कुछ बेहद संदिग्ध फैसले लिए गए, जिन्होंने एयर इंडिया के पतन में अहम भूमिका निभाई। इन फैसलों की देखरेख नागरिक उड्डयन मंत्री प्रफुल पटेल कर रहे थे, जिनकी नरेश गोयल से घनिष्ठता जगजाहिर थी। सरकार ने एयर इंडिया को नए विमानों के ऑर्डर अट्ठाईस से बढ़ाकर अड़सठ करने के लिए प्रेरित किया, जिससे उसका कर्ज भारी रूप से बढ़ गया। 7,000 करोड़ रुपये के राजस्व वाली इस सरकारी एयरलाइन को नए विमानों की खरीद के लिए 50,000 करोड़ रुपये का कर्ज लेने को कहा गया। फिर सरकार ने दो सार्वजनिक एयरलाइनों - अंतरराष्ट्रीय मार्गों पर उड़ान भरने वाली एयर इंडिया और घरेलू एयरलाइन इंडियन एयरलाइंस - का विलय करा दिया, जिससे दो अलग-अलग संस्कृतियों के टकराव के कारण अराजकता फैल गई।
जब पटेल ने नागरिक उड्डयन मंत्री का पद संभाला, तब इंडियन एयरलाइंस 42 प्रतिशत बाजार हिस्सेदारी के साथ अग्रणी थी। अब यह अस्तित्व के लिए संघर्ष कर रही है। 2004 से 2014 के बीच, एयर इंडिया ने कई लाभदायक अंतरराष्ट्रीय क्षेत्रों से भी अपना कारोबार समेट लिया और उन्हें निजी कंपनियों को सौंप दिया। जेआरडी पटेल ने जिस एयरलाइन को जुनून और दृढ़ विश्वास के साथ खड़ा किया था, वह अब पहचान से परे हो गई है।

1990 के दशक में, जब टाटा समूह ने विमानन व्यवसाय में फिर से प्रवेश करने का निर्णय लिया, तो जेआरडी के उत्तराधिकारी रतन टाटा को ठीक उसी तरह की चुनौतियों का सामना करना पड़ा, जैसा कि जेआरडी ने ब्रिटिश भारत में किया था। फर्क सिर्फ इतना था कि रतन टाटा को न केवल सरकार से, बल्कि ऐसी प्रतिस्पर्धा से भी जूझना पड़ा, जिसने उन्हें बाहर रखने के लिए राजनीतिक और नौकरशाही नियामक प्रणालियों में हेरफेर किया। टाटा की विमानन महत्वाकांक्षाओं के पतन पर पिछले अध्याय में चर्चा की जा चुकी है। यहाँ, हमें केवल नवंबर 2010 में देहरादून में एक सभा में रतन टाटा के अपने शब्दों की आवश्यकता है: 'हमने तीन प्रधानमंत्रियों से संपर्क किया। लेकिन एक व्यक्ति ने हमारे प्रयासों को विफल कर दिया... एक बार मैं एक उड़ान में था और मेरे बगल में बैठे एक अन्य उद्योगपति ने कहा: "मुझे समझ नहीं आता। आप लोग मूर्ख हैं। आप जानते हैं कि मंत्री को 15 करोड़ रुपये चाहिए। तो आप क्यों नहीं दे देते?" मैंने बस इतना कहा: "आप इसे समझ नहीं सकते। मैं बस रात को यह जानकर चैन से सोना चाहता हूँ कि मैंने इसके लिए भुगतान करके एयरलाइन हासिल नहीं की है।"
दिसंबर 2012 में, जब टाटा ने समूह के अध्यक्ष पद से इस्तीफा दिया, तो उन्होंने संकेत दिया कि 'विनाशकारी प्रतिस्पर्धा' के कारण नागरिक उड्डयन क्षेत्र में फिर से प्रवेश करने की संभावना नहीं है। उन्होंने कूटनीतिक ढंग से कहा: 'आज मैं इस क्षेत्र में जाने से हिचकिचाऊंगा, क्योंकि संभावना है कि आपको अत्यधिक प्रतिस्पर्धा का सामना करना पड़ेगा, जो अस्वस्थ प्रतिस्पर्धा होगी... गलाकाट प्रतिस्पर्धा, जो आपको बाहर रखने के लिए की जाती है, विनाशकारी प्रतिस्पर्धा है। विदेशों में, लोग दिवालिया हो जाते हैं या कंपनियां दिवालिया हो जाती हैं। यहां ऐसा कभी नहीं होता, वे बीमार रहते हुए भी काम करते रहते हैं। तब वे आपको खत्म करने के लिए काम कर रहे होते हैं।'
फिर भी, हाल के वर्षों में टाटा समूह ने आखिरकार एयरलाइन व्यवसाय में प्रवेश करने में सफलता प्राप्त कर ली है। 2013 में, सिंगापुर एयरलाइंस और टाटा समूह ने अपनी एयरलाइन विस्तारा के शुभारंभ की घोषणा की। टाटा समूह मलेशियाई कम लागत वाली एयरलाइन एयर एशिया का भारतीय भागीदार भी है, जिसने 2014 में भारत में परिचालन शुरू किया था।

जानकारों के लिए गोयल की सफलता और लगातार सरकारों पर उनकी प्रभावशाली पकड़ कोई आश्चर्य की बात नहीं है।
सितंबर 2012 में, सरकार ने नागरिक उड्डयन क्षेत्र के लिए एक नई उदारीकृत प्रत्यक्ष विदेशी निवेश (एफडीआई) व्यवस्था की घोषणा की, जिसके तहत विदेशी एयरलाइनों को किसी भारतीय एयरलाइन में 49 प्रतिशत तक हिस्सेदारी खरीदने की अनुमति दी गई। अगले वर्ष अप्रैल तक, जेट एयरवेज अपनी हिस्सेदारी कम करने वाली पहली भारतीय कंपनी बन गई, जिसका मूल्य लगभग 8,000 करोड़ रुपये था। संयुक्त अरब अमीरात की राष्ट्रीय एयरलाइन एतिहाद ने जेट में 24 प्रतिशत हिस्सेदारी खरीदने पर सहमति जताई। इसके तुरंत बाद, मनमोहन सिंह सरकार ने संयुक्त अरब अमीरात के साथ एक समझौता किया, जिसके तहत भारत और खाड़ी देश के बीच उड़ानों में उपलब्ध साप्ताहिक सीटों की संख्या 13,330 से बढ़ाकर 50,000 कर दी गई। इस निर्णय से जेट-एतिहाद गठबंधन को सबसे अधिक लाभ हुआ। जब विपक्ष और मीडिया ने सरकार द्वारा इस महत्वपूर्ण क्षेत्र के लिए अतिरिक्त सीटों को मंजूरी देने की जल्दबाजी पर सवाल उठाए, तो प्रधानमंत्री मनमोहन सिंह को एक असामान्य खंडन जारी करना पड़ा। उनके कार्यालय ने दावा किया कि "इस मामले पर सरकार के भीतर या मंत्रियों और प्रधानमंत्री के बीच कोई असहमति नहीं थी।" प्रधानमंत्री न तो द्विपक्षीय हवाई सेवा समझौते से अपना पल्ला झाड़ रहे हैं और न ही प्रधानमंत्री कार्यालय अब इस मुद्दे पर यू-टर्न लेने की कोशिश कर रहा है। आंतरिक दस्तावेजों से संकेत मिला था कि सिंह इस अचानक उठाए गए कदम से असहज थे। 2016 के मध्य तक, गोयल, जो अब लंदन में रहते हैं, डॉलर के अरबपति बने हुए हैं और भारत के सबसे धनी लोगों में से एक हैं।
वो अचानक से आए और भारत की सबसे सफल निजी एयरलाइन की शुरुआत की। इस बात का कोई सार्वजनिक स्पष्टीकरण नहीं है कि उन्हें टेलविंड्स के लिए 30 करोड़ रुपये से अधिक का शुरुआती निवेश कहाँ से मिला। टेलविंड्स आइल ऑफ मैन के टैक्स हेवन में स्थित एक कंपनी है, जहाँ से पैसा भारत में जेट एयरवेज की स्थापना के लिए भेजा गया था। वित्तीय अपराधों की जांच के लिए जिम्मेदार प्रवर्तन निदेशालय गोयल की संपत्ति के स्रोत की जांच करने की कोशिश कर रहा है। खुफिया एजेंसियों ने टेलविंड्स के ऑस्ट्रेलिया और हांगकांग से संबंधों का पता लगाया है, लेकिन उन्हें कोई और जानकारी नहीं मिली है। और अब, अनिवासी भारतीय होने के कारण गोयल स्पष्टीकरण देने से बच रहे हैं।

[illegible]

ISTOCKPHOTO

भाग तीन

बड़ी लीग

यह अनुभाग उन पुरुषों और महिलाओं के बारे में है जो यहाँ कार्यरत हैं।
भारतीय लोकतंत्र के शीर्ष पर। वे बहुत ऊंचे पद पर हैं।
वे हमसे काफी ऊपर हैं, लगभग हमारी नजरों से ओझल हो जाते हैं।
ये कहानियां उन लोगों के बारे में हैं जिन्हें अंततः इससे लाभ हुआ।
भारतीय लोकतंत्र। लेकिन वे नहीं हैं।
पर्याप्त रूप से प्रतिनिधि – वास्तविक विविधता
देश के सबसे सफल लोगों का चित्रण करना कठिन है।
सफलता, किसी भी कीमत पर सफलता, हर कीमत से परे सफलता
कल्पना। यही वो मंत्र है जो उन्हें आपस में बांधता है।

8

खेल के उस्ताद

लगभग उसी समय जब 4 अक्टूबर 2012 को दिल्ली के इंदिरा गांधी अंतरराष्ट्रीय हवाई अड्डे के पास स्थित अपने अपार्टमेंट में 45 वर्षीय गृहिणी सुस्मिता चक्रवर्ती ने छत के पंखे से फांसी लगाकर आत्महत्या कर ली, सिद्धार्थ माल्या के पेट में घबराहट हो रही थी।
उस दोपहर सुस्मिता भूखी और उदास दोनों थी, उसे अपने परिवार के भविष्य की चिंता सता रही थी। उसके पति मानस चक्रवर्ती, जो वायुसेना के सेवानिवृत्त अधिकारी थे, सिद्धार्थ के पिता विजय माल्या की कंपनी किंगफिशर एयरलाइंस में स्टोर मैनेजर थे। उसने सुबह से कुछ खास नहीं खाया था। पति के बार-बार फोन करने पर भी सुस्मिता ने दोपहर करीब 1:30 बजे फांसी लगा ली। पति के कहने पर पड़ोसियों ने दरवाजा तोड़कर उनके अपार्टमेंट में प्रवेश किया और उसका शव बरामद किया।
उन दिनों सिद्धार्थ भी तनाव में थे। उन्हें कुछ ही हफ्तों बाद अपने टीवी डेब्यू की चिंता सता रही थी, जहां उन्हें 'हंट फॉर द किंगफिशर कैलेंडर गर्ल: सीजन 4' के लिए मॉडलों का जज बनना था। किंगफिशर कैलेंडर माल्या परिवार और यूबी समूह की शान-शौकत का प्रतीक बन चुका था, जो किंगफिशर बीयर, किंगफिशर एयरलाइंस और कई अन्य व्यवसायों को नियंत्रित करता था।
ऐसा मानने का कोई कारण नहीं है कि सिद्धार्थ को सुस्मिता चक्रवर्ती के अस्तित्व या मृत्यु की जानकारी थी। यह भी संभव नहीं है कि उनके पिता चक्रवर्ती परिवार के बारे में जानते हों। मानस उन हजारों लोगों में से एक थे जिन्हें उनकी कंपनी ने छह महीने से वेतन नहीं दिया था। ट्विटर पर, जहां माल्या सीनियर ज्यादातर अपनी विभिन्न खेल टीमों और उनके हितों का प्रचार करते हैं, सुस्मिता का कहीं जिक्र नहीं था। सार्वजनिक रूप से उपलब्ध संकेतों से पता चलता है कि माल्या सीनियर वास्तव में अपनी फॉर्मूला वन टीम की दक्षिण कोरियाई ग्रांड प्रिक्स में भागीदारी को लेकर व्यस्त थे। यह 14 अक्टूबर को आयोजित होने वाली थी। सुस्मिता की मृत्यु के एक दिन बाद, वे अपने निजी जेट से दक्षिण कोरिया के लिए रवाना हो गए।

बेशक, रिचर्ड ब्रैनसन की तरह खुद को पेश करने वाले इस शराब कारोबारी की और भी चिंताएँ थीं, जिन्होंने अपने पिता द्वारा स्थापित व्यापारिक साम्राज्य को बड़ी शान-शौकत से संवारा और विस्तारित किया था। अपने चरम उत्कर्ष पर, माल्या का समूह 1998-99 तक साठ से अधिक कंपनियों का एक बहुराष्ट्रीय समूह बन गया था, जिसका वार्षिक कारोबार 45,000 करोड़ रुपये से अधिक था। किंगफिशर बीयर बेचने से लेकर एफ 1 रेसिंग, क्रिकेट और फुटबॉल सहित विभिन्न खेल टीमों के मालिक होने तक, और द एशियन एज अखबार और टैब्लॉइड द ब्लिट्ज में आंशिक हिस्सेदारी रखने तक - जिनके साथ मैंने 1990 के दशक में कुछ वर्षों तक काम किया था - माल्या ने नव-उदारीकृत भारत में व्याप्त ऊर्जा को अपने वश में कर लिया था।
सुस्मिता की आत्महत्या से एक दशक पहले, विजय माल्या ने राजनीतिक करियर की शुरुआत भी कर दी थी। यह कहना मुश्किल है कि क्या वे अपने बढ़ते व्यापारिक साम्राज्य में पर्याप्त रूप से व्यस्त नहीं थे, या फिर समाज की बेहतर सेवा करने की संभावना से प्रेरित थे। 2002 में, विभिन्न राजनीतिक दलों के स्थानीय विधायकों के समर्थन से, वे अपने गृह राज्य कर्नाटक से एक स्वतंत्र उम्मीदवार के रूप में राज्यसभा के लिए चुने गए। उस समय तक न तो राजनीतिक और न ही सामाजिक सक्रियता के लिए जाने जाने वाले एक दिग्गज व्यवसायी को उन्होंने वोट क्यों दिया, यह एक रहस्य बना हुआ है।
कुछ दशकों पहले तक, भारतीय उद्योगपति अपने इशारों पर काम करवाने के लिए विधानसभाओं में अपने प्रतिनिधियों को भेजना या पेशेवर राजनेताओं को समर्थन देना पसंद करते थे। भारत के कुछ सबसे अनुभवी राजनेता, जिन्होंने अतीत और वर्तमान की सरकारों में उच्च पदों पर आसीन रहे हैं, अपने सफल करियर के लिए उन उद्योगपतियों के ऋणी हैं जिन्होंने 1990 के दशक की शुरुआत में भारतीय अर्थव्यवस्था के उदारीकरण से पहले उनके करियर को वित्तपोषित और बढ़ावा दिया था। हालांकि, अब बड़े कारोबारी खुद संसद और राज्य विधानसभाओं में सीटें हासिल कर रहे हैं। इसका एक बड़ा कारण यह है कि सभी राजनीतिक दलों ने उन पर विशेष स्नेह दिखाया है। यह भी संभव है कि धनवानों का यह नया वर्ग दिखावे में कोई लाभ नहीं देखता और सत्ता के शीर्ष स्तर तक सीधी पहुँच चाहता है।
संसद में अपने पहले कार्यकाल के दौरान, माल्या को नागरिक उड्डयन, रक्षा और उद्योग संबंधी संसदीय समितियों में मनोनीत किया गया था। रिकॉर्ड में ऐसा

कुछ भी नहीं है जिससे यह पता चले कि उच्च सदन के अध्यक्ष, जो भारत के उपराष्ट्रपति भी हैं, या उसके सदस्यों को माल्या द्वारा ऐसे पदों पर आसीन होने पर कोई आपत्ति थी जो स्पष्ट रूप से उनके व्यावसायिक हितों से टकराते थे।
2003 तक, माल्या ने किंगफिशर एयरलाइंस की शुरुआत कर दी थी और वे नागरिक उड्डयन संबंधी संसदीय समिति के सदस्य थे, जिसके पास इस क्षेत्र से जुड़े मंत्रालयों और विभागों के वरिष्ठ अधिकारियों को तलब करने का अधिकार था। भारत जैसे देश में, जहाँ सरकारी अनुमतियाँ किसी भी व्यवसाय के लिए अत्यंत महत्वपूर्ण होती हैं, किसी भी व्यवसायी के लिए संसदीय समिति में होना सबसे उपयुक्त होता है, जो उन क्षेत्रों की देखरेख करती है जिनमें उसके व्यावसायिक हित जुड़े होते हैं। विश्व बैंक द्वारा 2015 में जारी दस मापदंडों पर आधारित व्यापार सुगमता रैंकिंग के अनुसार, भारत 189 देशों की सूची में 142 वें स्थान पर था, जो बेहद निराशाजनक है। एक भ्रष्ट सरकार और एक जटिल (और भ्रष्ट) नौकरशाही ने भारत के उदारीकरण के सपनों को इस स्थिति में पहुँचा दिया है।
माल्या बेशक अकेले नहीं हैं। उद्योगपति बेशर्मी से उन समितियों में पद धारण करते हैं जिनके पास उनके कार्यक्षेत्र को प्रभावित करने की शक्ति होती है। 15 दिसंबर 2008 को, भारत के अग्रणी ऑटोमोबाइल निर्माता, बजाज समूह के वंशज राहुल बजाज संसद में खड़े होकर वित्त मंत्रालय से यह सवाल करने लगे कि ऑटोमोबाइल उद्योग द्वारा सामना की जा रही समस्याओं को कम करने के लिए उसने क्या कदम उठाए हैं।
भारत की सबसे बड़ी निजी क्षेत्र की कंपनी रिलायंस इंडस्ट्रीज लिमिटेड (आरआईएल) के समूह अध्यक्ष परिमल नथवानी मार्च 2008 से संसद के सदस्य हैं। इस गुजराती नेता ने अपना चुनाव कहाँ से जीता? झारखंड राज्य से। जनवरी 2014 में, नथवानी, जो अपने बॉस - भारत के सबसे अमीर व्यक्ति मुकेश अंबानी - के प्रमुख संकटमोचक हैं, दूसरी बार निर्वाचित हुए।
6 अगस्त 2009 को, जब उच्च सदन बिजली उत्पादन और अन्य राष्ट्रीय प्राथमिकताओं के लिए प्रतिस्पर्धी कीमतों पर प्राकृतिक गैस की उपलब्धता पर चर्चा कर रहा था, तब नथवानी भारत के शीर्ष प्राकृतिक गैस उत्पादक रिलायंस समूह का बचाव करने के लिए खड़े हुए। भारत के पूर्वी तट पर स्थित कृष्णा-गोदावरी बेसिन से गैस निष्कर्षण में आरआईएल के आचरण से जुड़ी

अनियमितताएं पहले से ही काफी विवाद का विषय थीं, और कई लोगों ने उस पर प्राकृतिक गैस की कीमत बढ़ाने और अनुचित लाभ कमाने का आरोप लगाया था। पिछले कुछ वर्षों में, विभिन्न संसदीय समितियाँ व्यापारियों का अड्डा बन गई हैं। ओडिशा के सांसद कल्पतरु दास, जिनके परिवार का खानों में व्यापक व्यावसायिक हित है, 2015 में नए खनन विधेयक की जाँच करने वाली चयन समिति के सदस्य थे; विजय दरदा, जिनके परिवार के पास मराठी समाचार पत्र लोकमत, हिंदी समाचार पत्र लोकमत समाचार और अंग्रेजी समाचार पत्र लोकमत टाइम्स का स्वामित्व था, नई सहस्राब्दी के पहले दशक में मीडिया नियमों से संबंधित समिति के सदस्य थे; उत्तर प्रदेश के चंद्रपाल सिंह यादव 2015 में एक उर्वरक कंपनी के अध्यक्ष रहते हुए रसायन और उर्वरक संबंधी स्थायी समिति के सदस्य थे; डी.आर. मेघे, पी.बी. कोरे और एम.ए.एम. रामास्वामी जैसे कई सांसद, जो निजी मेडिकल कॉलेज चलाते हैं, वर्षों से स्वास्थ्य क्षेत्र की संसदीय समितियों के सदस्य रहे हैं; राजीव चंद्रशेखर, जिनका वित्तीय क्षेत्र में बड़ा हित है, 2009 से वित्त मंत्रालय की सलाहकार समिति के सदस्य थे।
यदि व्यवसायी स्वयं राजनीति के कामकाज के लिए समय नहीं निकालते हैं, तो उनके प्रतिनिधि और मित्र सक्रिय रहते हैं और संसद में खुले तौर पर उनके संकीर्ण व्यावसायिक हितों के लिए पैरवी करते हैं।
2009 में, स्वास्थ्य कार्यकर्ताओं के एक समूह ने सर्वोच्च न्यायालय को सूचित किया कि केंद्रीय स्वास्थ्य मंत्री अंबुमणि रामदास ने गरीब बच्चों के टीकाकरण के लिए इस्तेमाल होने वाले सस्ते टीकों का उत्पादन रोक दिया था क्योंकि वे अपने करीबी कुछ निजी कंपनियों की मदद करना चाहते थे। उन्होंने उन पर एक राजनीतिक सहयोगी के स्वामित्व वाली कंपनियों को महत्वपूर्ण संसाधन हस्तांतरित करने का भी आरोप लगाया।
इस तरह के आरोप अक्सर सामने आते रहते हैं। कुछ साल पहले तीस से अधिक सांसदों ने सरकार को पत्र लिखकर सुझाव दिया था कि छात्रों को परोसे जाने वाले ताजे पके हुए दोपहर के भोजन को पैकेटबंद बिस्कुट से बदल दिया जाए। भारत की बेहद सफल, हालांकि भ्रष्टाचार से घिरी, दोपहर के भोजन की योजना के तहत प्रतिदिन 1 करोड़ से अधिक गरीब छात्रों को ताजा पका हुआ दोपहर का भोजन परोसा जाता है। यह कई छात्रों के स्कूल जाने का एक प्रमुख कारण है। यह स्पष्ट था कि सांसद बिस्कुट निर्माता कल्याण संघ के पक्ष में थे, लेकिन उनकी पार्टियों ने उनके खिलाफ कोई दंडात्मक कार्रवाई नहीं की।

नेशनल सोशल वॉच कोएलिशन द्वारा 2010 में किए गए एक अध्ययन के अनुसार, तत्कालीन लोकसभा के 543 सदस्यों में से 128 सदस्य ऐसे व्यवसायी थे जिनके संसदीय कार्यवाही में भाग लेने के संबंध में हितों के टकराव की आशंका थी या आशंका थी। 2014 के राष्ट्रीय चुनावों से पहले, राज्यसभा के कम से कम 92 सदस्यों ने सदन के हित रजिस्टर में वित्तीय हितों की घोषणा की थी, जो हितों के संभावित टकराव से बचने की दिशा में एक कदम था। लोकसभा ने 2011 में इसी तरह का रजिस्टर रखना शुरू किया। हालांकि, ये कदम पर्याप्त नहीं हैं। आर्थिक हितों के अलावा, राजनेता कई अन्य नैतिक रूप से संदिग्ध परिस्थितियों में भी शामिल होते हैं। उदाहरण के लिए, सक्रिय राजनीतिज्ञ वकीलों का मामला लें। कांग्रेस प्रवक्ता अभिषेक मनु सिंहवी दूरसंचार कंपनियों की ओर से अपनी ही सरकार के खिलाफ कई मामलों में पेश हुए। जिन मामलों में उन्होंने दूरसंचार कंपनियों की ओर से पैरवी की, उनमें से एक मामला ऐसा था जिसमें उन पर अपने राजस्व का पूरा खुलासा न करने का संदेह था, जिसका एक हिस्सा सरकार को मिलना था। सरकार ने सीएजी द्वारा उनके खातों की ऑडिट का आदेश दिया था। दिन के दौरान, सिंहवी उन कंपनियों और निजी हितों के लिए अदालत में पेश होते थे जिन पर सरकारी खजाने को धोखा देने का संदेह था, और शाम तक वे राष्ट्रीय टेलीविजन चैनलों पर अपनी सरकार के फैसलों का बचाव करते नजर आते थे।
भारत के कुछ सबसे महंगे वकीलों द्वारा, जिनमें खुद सिंहवी भी शामिल थे, जोरदार कानूनी लड़ाई लड़ने के बावजूद, सुप्रीम कोर्ट ने फैसला सुनाया कि सीएजी निजी दूरसंचार कंपनियों का ऑडिट कर सकता है, क्योंकि उन्हें सरकार के साथ राजस्व साझा करना होता है। मार्च 2016 में, सीएजी की पहली रिपोर्ट संसद में पेश की गई और इसमें कहा गया कि दूरसंचार ऑपरेटरों द्वारा सरकार से महत्वपूर्ण राजस्व छिपाने के कारण सरकार को 12,489 करोड़ रुपये का नुकसान हुआ है। नरेंद्र मोदी सरकार ने इस पर क्या प्रतिक्रिया दी? उन्होंने एक निजी ऑडिटर द्वारा कंपनियों का विशेष ऑडिट कराने का आदेश दिया – ऑडिट का जिम्मा सीएजी से ले लिया, जो अद्वितीय संसाधनों और विश्वसनीयता वाली दुनिया की सबसे बड़ी ऑडिट फर्मों में से एक है।
2009 में राज्यसभा में विपक्ष के नेता बनने से कुछ महीने पहले, भाजपा के वरिष्ठ नेता अरुण जेटली (जो अब वित्त मंत्री हैं) ने निजी तौर पर टाटा समूह को कानूनी सलाह दी थी। उस सलाह में उन्होंने यूपीए सरकार द्वारा टाटा समूह

से कोयला खनन पर अधिक रॉयल्टी वसूलने के कदम की कड़ी आलोचना की थी। कुछ वर्षों बाद, जब यह स्पष्ट हो गया कि कोयला खदानों का मनमाना आवंटन एक बड़ा घोटाला था, तो जेटली सरकार के सबसे मुखर आलोचकों में से एक थे, जिन्होंने सरकार को फटकार लगाई और उस पर भ्रष्टाचार का आरोप लगाया। टाटा समूह के लिए जेटली की निजी कानूनी सलाह मुख्यधारा के मीडिया में नहीं छपी।
अगर हम विधायी राजनीति से हटकर अन्य क्षेत्रों की ओर देखें, तो कहानी बिल्कुल वही है। भारत में क्रिकेट का प्रशासन इसका जीता-जागता उदाहरण है। प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी, वित्त मंत्री अरुण जेटली, भाजपा अध्यक्ष अमित शाह, कांग्रेस नेता राजीव शुक्ला, महाराष्ट्र के दिग्गज राजनेता शरद पवार और कई अन्य लोग, राजनीतिक मतभेदों से परे, इस लाभप्रद खेल के प्रशासन में सक्रिय रहे हैं। इन पुरुषों में एक भी महिला नहीं है, और ये विभिन्न राज्य स्तरीय क्रिकेट निकायों को निजी जागीर की तरह चलाते हैं। वे खेल के प्रशासन को साफ-सुथरा करने या फिक्सिंग, सट्टेबाजी और ऐसे अन्य मुद्दों से निपटने का दिखावा भी नहीं करते।
अनुराग ठाकुर का मामला बिल्कुल अनोखा है। सांसद और भाजपा के एक वरिष्ठ नेता के बेटे अनुराग ठाकुर मार्च 2015 में भारतीय क्रिकेट कंट्रोल बोर्ड (बीसीसीआई) के सचिव चुने गए थे। जब उनसे पूछा गया कि क्या उनकी जीत और अन्य घटनाक्रम भाजपा द्वारा क्रिकेट प्रशासन पर कब्ज़ा करने का संकेत देते हैं, तो उन्होंने द मिंट अखबार से कहा: “ऐसा नहीं है, आप ऐसा नहीं कह सकते। यह बहुत दिलचस्प है… मैं किसी गुट से संबंधित नहीं हूं। दोनों गुट चाहते थे कि मैं अध्यक्ष बनूं। इससे साफ पता चलता है कि यह गुटबाजी का मामला नहीं है। और इसी तरह, अगर भाजपा एक गुट के पक्ष में झुकी हुई है, तो वे अलग-अलग गुटों से चुनाव कैसे लड़ रहे हैं? बीसीसीआई के भीतर भाजपा और कांग्रेस जैसी कोई बात नहीं है।” अब, मई 2016 में, वही अनुराग ठाकुर बीसीसीआई के अध्यक्ष बन गए, जब तत्कालीन अध्यक्ष शशांक मनोहर ने पद छोड़ दिया।
ठाकुर का कथन आधुनिक भारत में सत्ता और प्रभाव को आकार देने वाली राजनीतिक वास्तविकताओं को सरल शब्दों में प्रस्तुत करता है। जब संसाधनों के बंटवारे या उसमें अपना हिस्सा पाने की बात आती है, तो कोई राजनीतिक विभाजन नहीं होता।
2000 में, महज पच्चीस वर्षीय ठाकुर, जो उस समय एक उभरते हुए राजनेता थे, अपने गृह राज्य हिमाचल प्रदेश के क्रिकेट संघ के अध्यक्ष चुने गए। उनके

ऐसे पुरुष और महिलाएं हैं जिनके पास फलते-फूलते व्यवसाय के साथ-साथ सक्रिय राजनीतिक जीवन भी है। व्यापार और राजनीति का यह गठजोड़ पूरे देश में दिखाई देता है। जैसे-जैसे राज्य 2017 में चुनाव के लिए तैयार हो रहा है, ऐसे संकेत मिल रहे हैं कि शायद यहां की जनता आखिरकार बादलों से तंग आ चुकी है। पड़ोसी राज्य हिमाचल प्रदेश में राजनीति पर अनुराग ठाकुर जैसे कुछ परिवारों का दबदबा है। हालांकि यह स्पष्ट प्रतीत होता है कि वे निजी लाभ के लिए राजनीति का हेरफेर करते हैं, लेकिन यह कहना मुश्किल है कि ये लोग पेशेवर राजनेता हैं या व्यवसायी जो राजनीति में आ गए हैं। ये सीमाएँ धुंधली हो गई हैं। यह भी एक सच्चाई है कि भारत में कई सार्वजनिक हस्तियों के लिए राजनीति एक पेशा बनती जा रही है, न कि शौक। जब भारत की पहली लोकसभा का गठन हुआ था, तब केवल एक सदस्य ने राजनीति को अपना पेशा बताया था। आज, इसके एक चौथाई सदस्य खुद को पेशेवर राजनेता बताते हैं। यह निश्चित रूप से आकर्षक है।
जनता और मीडिया में इन युवा नेताओं की खूब प्रशंसा हो रही है, जिससे देश की राजनीतिक सत्ता और हितों पर एक कुलीनतंत्र के शिकंजे की चर्चा टल जाती है। कांग्रेस में ही इस कुलीनतंत्र का दबदबा सबसे ज़्यादा दिखाई देता है। एक दशक पहले, जब पार्टी अध्यक्ष सोनिया गांधी ने इसमें नए लोगों को शामिल करने का फैसला किया, तो उन्होंने सिर्फ पुराने कांग्रेसी परिवारों पर ही ध्यान दिया। इस तरह, गांधी परिवार के प्रति अपने माता-पिता की अटूट निष्ठा के चलते, सुशिक्षित युवाओं की एक नई पीढ़ी रातोंरात नेता बन गई। इनमें से अधिकतर पश्चिमी देशों में शिक्षित थे, उनकी बोलने की शैली अच्छी थी, वे सलीके से कपड़े पहनते थे और उनमें सत्ता पर अपना अधिकार जताने की गहरी भावना थी। कई वरिष्ठ सरकारी अधिकारी, जिन्होंने दशकों तक सरकारी सेवा की है और पिछली पीढ़ी के राजनीतिक नेताओं के अधीन काम किया है, इस बात से चिंतित हैं कि युवा पीढ़ी सत्ता पर अपना अधिकार समझती है।
हाल ही में सेवानिवृत्त हुए एक सरकारी अधिकारी ने मुझे बताया कि यूपीए सरकार में एक युवा कनिष्ठ मंत्री उनके निजी फोन पर 'जी हां, महाराज बोल रहा हूं' कहकर अभिवादन करते थे। यह नेता एक पूर्व शाही परिवार से हैं, और उनके पिता और परिवार के अन्य सदस्य पेशेवर राजनीतिज्ञ बने और कई राज्यों में सक्रिय रहे। यूपीए सरकार के एक वरिष्ठ कैबिनेट सदस्य ने मुझे बताया कि उन्हें ऐसे ही एक युवा धनाढ्य व्यक्ति को वरिष्ठ सरकारी अधिकारियों के

साथ सम्मानपूर्वक व्यवहार करने के लिए कहना पड़ा था। एक अन्य मंत्री ने बताया कि ऐसा ही एक धनाढ्य व्यक्ति, जो एक विशाल व्यापारिक साम्राज्य भी चलाता है, विभिन्न विभागों में बेशर्मी से अपने कारोबार को आगे बढ़ाता था, और एक दिन उनसे मुलाकात हुई। 'मुझे उसे ऐसा करने से रोकना पड़ा। वह एक अप्रिय मुलाकात थी।'
पैट्रिक प्रेंच ने अपनी 2011 की पुस्तक 'इंडिया: ए पोर्ट्रेट' में बताया कि विभिन्न दलों के कई सांसद वंशानुक्रम के कारण ही उच्च पदों पर पहुँचते हैं। उन्होंने पाया कि पारिवारिक संबंधों ने पंद्रहवीं लोकसभा के लगभग 28.6 प्रतिशत सांसदों को वहाँ तक पहुँचने में मदद की। 2014 में भंग हुई लोकसभा में, जहाँ औसत आयु मात्र पच्चीस वर्ष थी, तीस वर्ष से कम आयु के प्रत्येक सदस्य का संबंध शक्तिशाली राजनीतिक संबंधों वाले परिवार से था। प्रेंच ने बताया कि 31 से 40 वर्ष की आयु के लोगों के लिए यह आंकड़ा 65 प्रतिशत था। सरल शब्दों में कहें तो, युवा राष्ट्रीय नेता इसलिए उच्च पदों पर पहुँचे क्योंकि उनके माता-पिता या दादा-दादी कांग्रेस या भाजपा के निष्ठावान राजनीतिक कार्यकर्ता थे।
इस बीच, संसदीय कामकाज में गिरावट आई है। शोर-शराबा और कभी-कभी हिंसक व्यवधान अब आम बात हो गई है। जब सांसद आखिरकार मुद्दों पर चर्चा करने बैठते हैं, तो बहस का स्तर शर्मनाक रूप से खराब होता है। इसका परिणाम यह है कि कार्यपालिका अधिक निरंकुश हो गई है। सरकार विस्तृत बहस के बाद विधेयकों को पारित करने के बजाय संसद सत्र समाप्त होने का इंतजार करती है ताकि वह कार्यकारी आदेश - जिन्हें अध्यादेश कहा जाता है - जारी कर सके। अध्यादेशों के लिए केवल राष्ट्रपति की सहमति की आवश्यकता होती है, जो लगभग हमेशा केवल एक औपचारिक मुहर होती है।
नरेंद्र मोदी भी इससे अलग नहीं हैं। उदाहरण के लिए, मोदी के प्रमुख मंत्री सहयोगियों में से एक, रवि शंकर प्रसाद को ही ले लीजिए, जो कानून और दूरसंचार जैसे महत्वपूर्ण विभागों का कार्यभार संभालते हैं। दिसंबर 2014 में, लंदन के फाइनेंशियल टाइम्स ने रिपोर्ट किया कि प्रसाद कई वर्षों से मुकेश अंबानी के रिलायंस समूह के लिए एक स्थायी वकील के रूप में काम कर रहे थे। वे दूरसंचार क्षेत्र के प्रभारी हैं, जहां रिलायंस समूह देश भर में 4G ब्रॉडबैंड नेटवर्क स्थापित करने के लिए करोड़ों रुपये का

निवेश कर रहा है। इस पुस्तक के शोध के दौरान मुझे मिले दस्तावेजों के अनुसार, प्रसाद के वकील बेटे भी रिलायंस के सलाहकार हैं।
केंद्रीय लेखा परीक्षकों ने रिलायंस द्वारा 4 जी स्पेक्ट्रम प्राप्त करने के तरीके में कई खामियां पाई हैं, जिनमें संदिग्ध जालसाजी भी शामिल है। उनकी लेखापरीक्षा रिपोर्ट पर अभी भी सरकार की प्रतिक्रिया का इंतजार है। प्रसाद इस मुद्दे पर निष्पक्ष निर्णय कैसे लेंगे? भ्रष्टाचार विरोधी वादों पर सत्ता में आए मोदी इस मामले में बेपरवाह नजर आ रहे हैं।

जिस समय सुस्मिता चक्रवर्ती अवसाद से जूझ रही थीं, उसी समय विजय माल्या अधिक जिम्मेदारियां संभालने लगे थे। 2012 में, उन्हें रसायन और उर्वरक संबंधी संसदीय स्थायी समिति के लिए मनोनीत किया गया, हालांकि वे भारत की सबसे बड़ी उर्वरक निर्माता कंपनियों में से एक, मैंगलोर केमिकल्स एंड फर्टिलाइजर्स लिमिटेड के अध्यक्ष थे। माल्या समूह की इसमें 30 प्रतिशत हिस्सेदारी थी।
जब 2016 में इस पुस्तक को अंतिम रूप दिया जा रहा था, तब किंगफिशर एयरलाइंस, जिसे माल्या ने 2005 में अपने बेटे सिद्धार्थ को जन्मदिन के उपहार के रूप में शुरू किया था, बंद हो चुकी थी और भारतीय इतिहास में सबसे बड़े बैंक ऋण डिफ़ॉल्ट का रिकॉर्ड बना चुकी थी। एयरलाइन पर भारतीय सार्वजनिक क्षेत्र के बैंकों का 9,000 करोड़ रुपये से अधिक का ऋण था।
2 मार्च 2016 को जब बैंकों ने ऋण वसूली न्यायाधिकरण में याचिका दायर की, तो माल्या एक राजनयिक पासपोर्ट का इस्तेमाल करके भारत से निकल गए, जो उन्हें संसद सदस्य के रूप में जारी किया गया था। भारतीय राजनीति में होने के विशेषाधिकार कुछ ऐसे ही होते हैं।
माल्या ने किंगफिशर एयरलाइंस को परिवहन का व्यवसाय नहीं बल्कि आतिथ्य सत्कार का व्यवसाय घोषित किया था। वे स्वयं एयर होस्टेसों का चयन करते थे; हवाई अड्डों पर उनके प्रथम श्रेणी के लाउंज में शराब की कोई कमी नहीं थी और विमानों में मनोरंजन प्रणाली और चमकीली लाल सीटों के साथ शानदार भोजन परोसा जाता था। इस आलीशान एयरलाइन ने बड़ी संख्या में अमीर यात्रियों को आकर्षित किया, लेकिन साथ ही साथ इसे भारी नुकसान भी हुआ और इसने सार्वजनिक

क्षेत्र के बैंकों से ऋण लिया। अब सामने आए दस्तावेजों के अनुसार, माल्या ने ऋण प्राप्त करने के लिए वरिष्ठ बैंकिंग अधिकारियों से व्यक्तिगत रूप से मुलाकात की थी। प्रवर्तन निदेशालय ने उन पर विदेशों के बैंकों से लिए गए ऋण के कुछ पैसे को मनी लॉन्ड्रिंग करने का आरोप लगाया है।
भारत में बढ़ते बैंक ऋण डिफ़ॉल्ट अपने आप में अभिजात वर्ग के बारे में एक घिनौना और शिक्षाप्रद सबक है। किंगफिशर के बाद आज दूसरा सबसे बड़ा बैंक ऋण डिफ़ॉल्टर विंसम डायमंड्स समूह है, जो 6,500 करोड़ रुपये से अधिक का ऋण चुकाने में विफल रहा है। और इसके प्रमोटर जतिन मेहता अब कहाँ हैं? वे सिंगापुर में हैं। डेक्कन क्रॉनिकल अखबार के प्रमोटरों ने सैकड़ों करोड़ रुपये जुटाने के लिए विभिन्न बैंकों को जाली बैलेंस शीट जमा कीं, जिनका इस्तेमाल एक क्रिकेट टीम और महंगी कारें खरीदने में किया गया।
माल्या और उनकी कंपनी पर बैंकों का जो भारी-भरकम कर्ज है, उसका अंततः क्या होगा? अगर अतीत को देखें तो शायद कुछ भी नहीं। मीडिया का हंगामा शांत होने के बाद, वे संभवतः रेसिंग कारों, हाई-प्रोफाइल पार्टियों और खूबसूरत लोगों के साथ मौज-मस्ती भरी जिंदगी में लौट जाएंगे, क्योंकि आज भारत के कई सबसे सफल कारोबारी घराने अतीत में कर्ज चुकाने में विफल रहे हैं।
अपनी तमाम बेपरवाही के बावजूद, माल्या के पास एक
उनका नरम पक्ष। अपनी वेबसाइट www.mallyainparliament.in पर, माल्या ने 'एक अरब की शक्ति' शीर्षक से एक कविता पोस्ट की। यह उनकी काव्य प्रतिभा की प्रशंसा नहीं करती, लेकिन इसकी दो पंक्तियाँ लंबे समय तक मेरे मन में बसी रहीं:
एक ऐसा राष्ट्र जो आधुनिक आत्मनिर्भरता पर गर्व करता है
क्या यह कुछ लोगों के लिए सच है और सभी के लिए एक सपना है?

9

असाधारण लोगों की लीग
सज्जनों

फरवरी 2015। एक टेलीविजन समाचार चैनल पर दिल्ली विधानसभा चुनाव को लेकर शोरगुल भरी चर्चा चल रही थी, जो कुछ ही दिनों में होने वाले थे। एंकर और चर्चा करने वाले एक-दूसरे की बात काट रहे थे। लेकिन छत्तीसगढ़ के गारे गांव में टीवी से चिपके बैठे हरिहर पटेल को इस बात की चिंता नहीं थी।
कुछ मिनटों बाद, उन्होंने मेरी ओर मुड़कर पूछा, ‘क्या आपको लगता है कि आम आदमी पार्टी (आप) जीतेगी?’ उनके सवाल में उम्मीद झलक रही थी, मानो आम आदमी पार्टी की जीत से कोई क्रांति आ जाएगी और उनकी किस्मत बदल जाएगी। आम आदमी पार्टी भ्रष्टाचार विरोधी कार्यकर्ताओं के नेतृत्व वाली नई गरीब समर्थक पार्टी थी। नौसिखियों की पार्टी से उनकी अवास्तविक उम्मीदें बहुत कुछ कह रही थीं। उनकी निराशाजनक स्थिति में, केवल उम्मीद ही पटेल को आगे बढ़ने की प्रेरणा दे रही थी।
बाहर अंधेरा हो चुका था। उनके घर के विशाल खुले आंगन में, एक कोने में छोटी चक्की गेहूं पीसकर आटा बना रही थी। उनके दो पोते-पोतियां इधर-उधर दौड़ रहे थे। उन्हें नहीं पता था कि उनका जीवन कब तक इतना सुखमय रहेगा।
'मेरा घर गैरे 4/5 में है, और हमारे पीछे गैरे 4/6 है।'
खनन के तौर-तरीकों से अपरिचित लोगों के लिए ये शब्द बेमानी हैं। लेकिन इस व्यवसाय से जुड़े लोग जानते हैं कि ये भारत के कुछ सबसे समृद्ध कोयला भंडारों को दर्शाते हैं। जिंदल समूह सहित निजी खनन कंपनियों को ये ब्लॉक कुछ समय के लिए आवंटित किए गए थे, लेकिन 2014 में सुप्रीम कोर्ट ने अनियमितताओं के कारण आवंटन रद्द कर दिया था। अनुमान है कि इन अनियमितताओं के कारण भारतीय खजाने को कई हजार करोड़ रुपये का नुकसान हुआ था।
पिछले दो दशकों से, आयुर्वेद चिकित्सक पटेल और इस क्षेत्र के सैकड़ों अन्य लोग अपनी पुश्तैनी ज़मीनों को बचाने के लिए संघर्ष कर रहे हैं – भले ही उनके घर अब कोयले की धूल और राख से पूरी तरह ढक चुके हों। उनका संघर्ष दोतरफा है। अपनी ज़मीनों को बचाने के साथ-साथ वे अनैतिक खनन प्रथाओं से भी लड़ रहे हैं। भारत द्वारा खनन क्षेत्र को उदार बनाने और निजी कंपनियों को

कोयला खदानों का स्वामित्व देने के एक दशक से अधिक समय से, गैरे क्षेत्र विशाल खनन निगमों के बीच भयंकर प्रतिस्पर्धा का केंद्र रहा है।
इसके जवाब में, पटेल को तड़के सुबह छापेमारी करके गिरफ्तार किया गया, रिश्वत की पेशकश की गई और अपमानित किया गया। उन्होंने और कुछ अन्य लोगों ने लगभग बीस स्थानीय गांवों के निवासियों को संगठित करके एक कंपनी बनाई, जिसमें उन्होंने अपनी 300 एकड़ पुश्तैनी जमीन पर मालिकाना हक का दावा किया। उन्होंने अपने गांव में स्थित कोयला ब्लॉक के लिए बोली लगाने के लिए 25 लाख रुपये एकत्र किए, लेकिन जब उन्हें एहसास हुआ कि यह रकम पर्याप्त नहीं है, तो उन्होंने यह विचार छोड़ दिया और पैसा लौटा दिया। अब वे एक सौर ऊर्जा संयंत्र और बाद में एक कोयला आधारित विद्युत संयंत्र स्थापित करने का प्रस्ताव रखते हैं। उन्होंने कहा, 'हम अपनी पुश्तैनी जमीन नहीं छोड़ेंगे। इसे हमारे पास रहने दीजिए। इस जमीन के नीचे जो कुछ भी है, वह भी हमारा ही है।'
जब गारे का एक हिस्सा जिंदल समूह को आवंटित किया गया, तो पटेल और अन्य कार्यकर्ताओं के नेतृत्व में स्थानीय लोगों ने 5 जनवरी 2008 को सरकार द्वारा एक अन्य गांव में आयोजित सार्वजनिक सुनवाई में इसका विरोध किया। वहां पुलिस ने लोहे से मजबूत की गई लंबी बांस की लाठियों से उनकी पिटाई की। लगभग 250 ग्रामीण घायल हो गए।
उन्होंने गांव की शिकायतों की एक लंबी सूची गिनाते हुए कहा, “हर जगह कोयले की खदानें खुल रही हैं और वे पर्यावरण संबंधी दिशानिर्देशों की अनदेखी करते हुए खनन कर रहे हैं। हमारी नदी की मछलियां लगभग मर चुकी हैं, जानवर मर रहे हैं, हमारे लोग पेट की विभिन्न बीमारियों, लीवर और किडनी की समस्याओं से पीड़ित हैं, और अस्थमा बहुत आम है।” इलाके के अधिकांश लोग आंखों में लगातार खुजली और जलन से भी परेशान हैं।
हमारे पीछे, जिंदल स्टील एंड पावर लिमिटेड (जेएसपीएल) के सबसे विशाल परिसरों में से एक रात के आकाश में ऊंचा खड़ा था। ऊंची दीवारें और तार की जाली से घिरी यह इमारत पूरी तरह से चिमनियों से घिरी हुई थी - कुछ पुरानी और पतली, तो कुछ नई और चौड़ी, जिनमें से बाद वाली देखने में परमाणु ऊर्जा संयंत्रों जैसी लग रही थीं।

पटेल ने कहा, ‘वे हर साल विस्तार कर रहे हैं। महज 20 फीट की दूरी पर एक और बिजली संयंत्र बनकर तैयार हो गया है और जल्द ही परिचालन शुरू कर देगा। ऐसा लगता है कि विकास सिर्फ उनके लिए ही है।’
उदारीकरण के बाद, उद्यमियों की एक नई पीढ़ी ने खनन, बिजली, इस्पात, एल्युमीनियम और इसी तरह के क्षेत्रों में साहसिक परियोजनाओं की कल्पना की, और भारत के घने जंगलों और सुदूर इलाकों में बसे गांवों में करोड़ों रुपये का निवेश किया। इनमें से कई अब भारत की उदारीकृत, पुनर्जीवित अर्थव्यवस्था के प्रतीक के रूप में जाने जाते हैं और विश्व आर्थिक मंच तथा अन्य वैश्विक सम्मेलनों में सम्मानित वक्ता हैं। वे भारतीय राजनीति में भी महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं, सक्रिय रूप से और प्रमुख वित्तपोषक के रूप में। नई दिल्ली और न्यूयॉर्क में सम्मानित, वे भारत के ग्रामीण इलाकों के खलनायक हैं, जिन पर प्राकृतिक संसाधनों की लूट और गरीबों के जीवन को तहस-नहस करने का आरोप है।

अग्रवाल समुदाय को अक्सर भारत के अग्रणी व्यापारिक समुदाय के रूप में जाना जाता है – जो चतुर, जोखिम लेने वाला, नवोन्मेषी और गहन वित्तीय सूझबूझ से परिपूर्ण है। आज वे भारतीय व्यापार जगत में एक प्रमुख शक्ति हैं।
जब भारतीय उपमहाद्वीप में ब्रिटिश साम्राज्य फल-फूल रहा था, तब बड़ी संख्या में अग्रवाल उत्तर भारत में अपने घरों से निकलकर कलकत्ता चले गए, जो उस समय भारत की राजधानी और एक प्रमुख बंदरगाह शहर था। एक छोटा समूह मध्य भारत के भीतरी इलाकों में पहुंचा और उस समय के मध्य प्रांत के विभिन्न हिस्सों में बस गया, जो अपने सुरम्य पहाड़ों, आदिवासियों से आबाद घने जंगलों और उपजाऊ भूमि के लिए जाना जाता था। इनमें से कुछ अग्रवाल केलो नदी से सिंचित क्षेत्र तक पहुंचे। इस अविश्वसनीय यात्रा के बाद, वे उन क्षेत्रों में सफल किसान और व्यापारी बनकर बस गए। आज भी, यदि आप छत्तीसगढ़ के रायगढ़ जिले में देखें - जो अपनी खानों, बिजली और इस्पात उद्योगों के लिए प्रसिद्ध है - तो आप अग्रवालों के साहस की प्रशंसा किए बिना नहीं रह सकते। उन्होंने एक छोटे से शहर में अपना डेरा डाला, जो केवल अपनी नदी और उपजाऊ भूमि के लिए जाना जाता था। खनिज भंडार अभी तक निकाले नहीं गए थे, और

घने जंगलों वाले क्षेत्र तक केवल रेल मार्ग या कठिन सड़क यात्रा के माध्यम से ही पहुंचा जा सकता था।
प्राकृतिक जलधाराओं से सिंचित उपजाऊ भूमि और कभी प्रसिद्ध रहे कृषि बाजार अब लुप्त हो चुके हैं। रायगढ़ और कोरबा जैसे पड़ोसी क्षेत्रों में अब केवल खनन नगर ही बचे हैं, जो कालिख से पूरी तरह काले पड़ चुके हैं।
सरकार और खनन कंपनियां गांवों, घने जंगलों, निर्मल नदियों और समानता एवं संवैधानिक मूल्यों को कुचल रही हैं। उनका लालच इतना बढ़ गया है कि स्थानीय लोग, जो आम तौर पर सरकार और कंपनियों के तौर-तरीकों से अनभिज्ञ होते हैं, भी विरोध प्रदर्शनों में जुट गए हैं। ये प्रदर्शन भारतीय पूंजीवाद के शोषणकारी स्वरूप की ओर ध्यान आकर्षित करते हैं। रायगढ़ में यह संघर्ष अग्रवाल समुदाय के सदस्यों के बीच टकराव में बदल गया है, जिन्होंने दोनों पक्षों में नेतृत्व की भूमिका निभाई है। यह एक संयोग है, लेकिन बेहद दिलचस्प है।
रायगढ़ पहुंचने वाले शुरुआती अग्रवाल परिवार के सदस्यों में सेठ किरोरीमल भी थे, जिनका जन्म उन्नीसवीं सदी के उत्तरार्ध में हुआ था, जो अब हरियाणा राज्य है, लेकिन उन्होंने कलकत्ता में व्यापार करके खूब धन कमाया। चालीस वर्ष की आयु के आसपास, किरोरीमल अपनी पत्नी और बेटी के साथ रायगढ़ आ बसे। उन्होंने अपनी सारी संपत्ति एक धर्मार्थ ट्रस्ट में लगा दी, जिसका उद्देश्य क्षेत्र में शिक्षा और स्वास्थ्य सुविधाओं का विस्तार करना था। रायगढ़ में उनकी परोपकारिता के प्रमाण हर जगह दिखाई देते थे - अस्पताल और शैक्षणिक संस्थान उनमें से कुछ ही थे। और सिर्फ यहीं तक सीमित नहीं - दिल्ली विश्वविद्यालय के सबसे प्रतिष्ठित कॉलेजों में से एक और हरियाणा तथा अन्य जगहों के कई शैक्षणिक संस्थान किरोरीमल की परोपकारिता की उपज हैं, जो उन्होंने कई दशक पहले की थी, उस समय से बहुत पहले जब यह भारतीय अभिजात वर्ग के बीच लोकप्रिय नहीं थी। 1960 के दशक के आरंभ में जब उनका निधन हुआ, तब तक किरोरीमल ने परोपकारिता की उन कहानियों में से एक को रच दिया था, जो भले ही कम चर्चित हों, लेकिन एक ऐसे देश में सबसे गौरवशाली हैं जहां इस तरह की निस्वार्थता दुर्लभ है। उनके पोते राजेश मोडा कहते हैं कि पारिवारिक ट्रस्ट आज भी परिवार के बाहर से कोई दान स्वीकार नहीं करता है।

जिस समय किरोड़ीमल परोपकार के बारे में सोचने लगे थे, उसी समय रायगढ़ में एक अन्य प्रवासी परिवार में रामकुमार अग्रवाल का जन्म हुआ। यह 1 जनवरी 1924 का दिन था। यह युवा लड़का जल्द ही भारतीय स्वतंत्रता आंदोलन में सक्रिय हो गया और स्वतंत्रता के बाद कई वर्षों तक राज्य विधानसभा में एक सक्रिय राजनीतिज्ञ रहा। अपने जीवन के अंतिम समय में - जब यह क्षेत्र एक खनन नगरी में परिवर्तित होने लगा था - वे इस क्षेत्र की पारिस्थितिकी, पर्यावरण और जन अधिकारों के सबसे मुखर समर्थकों में से एक बन गए।
भारत की स्वतंत्रता के कुछ वर्षों बाद, जैननारायणदास अग्रवाल और उनकी पत्नी भी बेहतर अवसरों की तलाश में हरियाणा राज्य में स्थित अपने घर को छोड़कर पंजाब राज्य के एक अन्य भाग में पहुँचे, लेकिन यह यात्रा निष्फल रही। रायगढ़ की अपार संभावनाओं के बारे में सुनकर, परिवार वहाँ बस गया। 1954 में, उनके पाँचवें बच्चे का जन्म इसी शहर में हुआ। उनका नाम रमेश अग्रवाल रखा गया।
कुछ वर्षों बाद, एक और अग्रवाल रायगढ़ पहुंचे। लेकिन ये कोई प्रवासी नहीं थे जो इस वन क्षेत्र में आए थे। वे एक चतुर व्यवसायी थे जो नए अवसरों की तलाश में थे। ओम प्रकाश जिंदल हिसार (अब हरियाणा में) के एक छोटे व्यवसायी थे, जिन्होंने बिजली और इस्पात के क्षेत्र में एक फलता-फूलता व्यवसाय स्थापित किया, राजनीति में आए, हरियाणा विधानसभा के सदस्य बने, राज्य में मंत्री बने और फिर भारतीय संसद के सदस्य बने। जिंदल ने 1980 के दशक के उत्तरार्ध में रायगढ़ में एक छोटा स्पंज आयरन संयंत्र स्थापित किया। उसके बाद से उन्होंने कभी पीछे मुड़कर नहीं देखा। आज, ओ.पी. जिंदल समूह, जिसे उनके चार पुत्र स्वतंत्र इकाइयों के रूप में चला रहे हैं, का कुल मूल्य 1,20,000 करोड़ रुपये से अधिक है।
रायगढ़ में जिंदल सीनियर और बाद में उनके बेटे नवीन जिंदल ने खनन, बिजली उत्पादन और इस्पात निर्माण के क्षेत्र में अपने कारोबार को नई ऊंचाइयों पर पहुंचाया, तो रामकुमार अग्रवाल और रमेश अग्रवाल जैसे लोग उनके खिलाफ खड़े हो गए। क्षेत्र की आदिवासी आबादी भी इस विवाद में दोनों तरफ थी। उनमें से कई जिंदल समूह के कर्मचारी थे, और कई अन्य प्रदर्शनकारियों में शामिल थे। स्थानीय अग्रवाल समुदाय के इन दोनों सदस्यों ने जिंदल समूह की आक्रामक खनन प्रथाओं के खिलाफ अदालतों में याचिका दायर करके क्षेत्र के आदिवासियों की आवाज उठाई। उन्होंने समूह पर औद्योगिक उद्देश्यों के लिए

स्थानीय नदी के पानी को मोड़ने और रायगढ़ को प्रदूषित करने का आरोप लगाया। इन दोनों ने अन्य कार्यकर्ताओं के साथ कई सप्ताह जेल में बिताए और जिंदल समूह द्वारा उन पर लगाए गए मामलों का सामना करने के लिए अदालतों के चक्कर लगाए। 2012 में, जब रमेश अग्रवाल को गोली मारकर घायल कर दिया गया, तो कार्यकर्ताओं ने दावा किया कि यह जिंदल की साजिश थी। 1998 के बाद यह गतिरोध और तेज हो गया, जब जिंदल समूह को हरिहर पटेल के गारे गांव में अपना पहला कोयला ब्लॉक मिला।
गारे और आसपास के गांवों में, जेएसपीएल के बेतहाशा विकास ने स्थानीय लोगों का जीवन राख और कोयले की धूल से ढक दिया है। उनका प्रभाव आज किरोड़ीमल से कहीं अधिक स्थायी है। कई लोग तो रायगढ़ को 'जिंदलगढ़' भी कहते हैं।
रायगढ़ की ओर जाने वाले राजमार्गों में से एक पर ओ.पी. जिंदल हवाई अड्डा है, उसके बाद फोर्टिस-ओ.पी. जिंदल अस्पताल और फिर ओ.पी. जिंदल स्कूल स्थित है। भारत की पहली निजी क्षेत्र की मेगा विद्युत परियोजना अब गारे गांव के ठीक बाहर चल रही है और यह 3,400 मेगावाट बिजली उत्पादन क्षमता की ओर अग्रसर है। रायगढ़ के एक अन्य हिस्से में, विश्व के सबसे बड़े स्पंज आयरन संयंत्रों में से एक, जो प्रतिवर्ष तीन मिलियन टन स्टील का उत्पादन करने में सक्षम है, कार्यरत है।
रायगढ़ जिंदल पैंथर सीमेंट के विज्ञापनों वाले होर्डिंग्स से भरा पड़ा है। जिंदल के प्रतिष्ठानों के बाहर, जिंदल जूनियर नवीन की तस्वीरें स्थायी रूप से लगी हुई हैं, जो अब जेएसपीएल का संचालन करते हैं। कुछ तस्वीरों में हल्की सी मुस्कान झलकती है, तो कुछ में युवा कारोबारी मुस्कुराने की कोशिश करते नजर आते हैं, और कभी-कभी ऐसा लगता है मानो वे देखने वाले की आंखों में गहराई से देख रहे हों। तस्वीरों के बगल में जेएसपीएल के कॉर्पोरेट आदर्शों और मूल्यों के बारे में घोषणाएं लिखी हुई हैं। पर्यावरण के प्रति संवेदनशीलता और जिम्मेदार विकास उन नारों में से हैं।
नवीन जिंदल पहली बार 1990 के दशक की शुरुआत में अपने पिता के एक युवा शिष्य के रूप में रायगढ़ आए थे। वे डलास स्थित टेक्सास विश्वविद्यालय में एमबीए की पढ़ाई करने के लिए जाने की तैयारी कर रहे थे। वहां वे छात्र सरकार के अध्यक्ष बने और उन्हें 'वर्ष का सर्वश्रेष्ठ छात्र नेता' पुरस्कार मिला।

टेक्सास विश्वविद्यालय ने अपने प्रबंधन विभाग का नाम इस प्रसिद्ध पूर्व छात्र के नाम पर रखा, जिनके समूह का मूल्य अब लगभग 24,000 करोड़ रुपये था। हालांकि, 2014 में केंद्रीय लेखा परीक्षक सीएजी की विस्तृत रिपोर्ट और सीबीआई द्वारा की गई कई आपराधिक जांचों से पता चला कि भारत में कोयला क्षेत्र के उदारीकरण के बाद से उनके समूह और अन्य निजी और सार्वजनिक भारतीय उद्यमों को कोयला ब्लॉकों के आवंटन में लगभग 186,000 करोड़ रुपये का अप्रत्याशित लाभ हुआ था। भारतीय जांचकर्ताओं ने आरोप लगाया कि सरकार ने मनमाने तरीकों से बहुमूल्य संसाधनों का आवंटन किया। सुप्रीम कोर्ट ने सितंबर 2014 में इन आवंटनों को रद्द कर दिया।
सीबीआई ने जिंदल की कंपनियों के खिलाफ दो आपराधिक मामले दर्ज किए, जिनमें गारे गांव और झारखंड में कोयला ब्लॉक हासिल करने में अनियमितताओं का आरोप लगाया गया था। कार्यकर्ताओं ने आरोप लगाया कि जिंदल समूह सस्ते कोयले की खरीद-फरोख्त कर रहा था, कम लागत पर बिजली उत्पादन कर रहा था और उसे बहुत ऊंचे दामों पर बेच रहा था। उनका धंधा सरल था और मुनाफा भारी था।
1990 में, जब हर्ष मंदर, जो उस समय भारतीय प्रशासनिक सेवा (आईएएस) का हिस्सा थे, को रायगढ़ में जिला मजिस्ट्रेट के रूप में तैनात किया गया था, तब भी मुख्य रूप से कृषि प्रधान यह कस्बा शास्त्रीय नृत्य कथक के रायगढ़ घराना के लिए प्रसिद्ध था।
ओ.पी. जिंदल और युवा नवीन भी वहां मौजूद थे, अपनी फैक्ट्री चला रहे थे और शायद खनन की संभावनाओं का पता लगा रहे थे। मंदर को नवीन से अपनी कुछ मुलाकातों की याद है। दिल्ली में जिस एनजीओ का वे अब संचालन करते हैं, उसके छोटे से कार्यालय में एक दोपहर मंदर ने मुझे बताया, 'मैं उन्हें बिना किसी आग्रह के सलाह देता था कि वे ऐसा उद्योग स्थापित करें जो पर्यावरण और स्थानीय भावनाओं के अनुकूल हो, और यह कि आपको शोषणकारी होने की आवश्यकता नहीं है।'
मैंने पूछा, 'नवीन जिंदल ने क्या कहा?'
उन्होंने मुस्कुराते हुए कहा, 'मैं इस बारे में कुछ नहीं कहना चाहूंगा।' युवा आईएएस अधिकारी ने जल्द ही जिले की प्रभावशाली शक्तियों को चुनौती देना शुरू कर दिया। इनमें से एक उनके सहपाठी दिलीप सिंह जुदेव थे, जो जशपुर के पूर्व राजपरिवार के सदस्य थे। दोनों ने अजमेर के मेयो कॉलेज में पढ़ाई की थी, जो भारत के सबसे पुराने सार्वजनिक विद्यालयों में से एक है। मंदर ने

भूमि सीमा प्रावधानों के तहत जुदेव के परिवार से जब्त की गई 2,000 एकड़ से अधिक भूमि को भूमिहीन आदिवासियों में वितरित करने का आदेश दिया। लगभग उसी समय, उन्होंने जिंदल परिवार के खिलाफ छोटे-मोटे अपराधों के लिए भी कार्रवाई शुरू की। कुछ ही महीनों में, मंदर को सरकार द्वारा अचानक पद से हटा दिया गया। लेकिन साक्षरता प्रसार के लिए उन्होंने जो युवा आंदोलन शुरू किया, उससे कई ऐसे युवा तैयार हुए जो वर्षों बाद इस क्षेत्र के प्रमुख कार्यकर्ता बने।
मंदर के लिए, रायगढ़ भारत में 1990 के दशक के आर्थिक उदारीकरण के बाद से शासन द्वारा अपनाए गए नए मार्ग का प्रतीक था।
उन्होंने कहा, ‘मैंने ठीक बीस साल बाद रायगढ़ का दोबारा दौरा किया। मैंने जो तबाही देखी, उसे देखकर मैं दंग रह गया, जिस हद तक इसका शोषण हुआ था, वह अद्भुत था। यह इस पूरे सवाल का प्रतीक है कि विकास किसे माना जाता है और इससे किसे लाभ होता है। जब मैंने 1980 में सिविल सेवा में कार्यभार संभाला था, तब सरकार की एक ही छवि थी; इस बात में कोई संदेह नहीं था कि सरकार का मूल सिद्धांत गरीबों और वंचितों के प्रति उसकी प्राथमिक जिम्मेदारी थी। उस आदर्श से कई विचलन थे, लेकिन तब उन्हें उस आदर्श से विचलन के रूप में ही देखा और पहचाना गया था।’
नई विचारधारा यह है कि जो सरकार बाजार को सुगम बनाती है, उससे सभी को लाभ होगा, लोगों को रोजगार मिलेगा, धन का सृजन होगा और शिक्षा मिलेगी। 'रायगढ़ एक प्रयोगशाला है जो दिखाती है कि यदि सरकार पहले मॉडल का अनुसरण करती है तो वह किस दिशा में जाएगी और यदि वह दूसरे मॉडल का अनुसरण करती है तो बिल्कुल विपरीत दिशा में जाएगी। यह मानते हुए भी कि कोई भाई-भतीजावाद नहीं हो रहा है, यह मानते हुए कि सरकार की ओर से हर कोई ईमानदारी से अपना कर्तव्य निभा रहा है, मुझे लगता है कि एक पीढ़ी बाद मेरी जगह पर तैनात एक युवा अधिकारी अपने कर्तव्य को लेकर वास्तव में भ्रमित होगा। क्योंकि बीस साल पहले, मुझे लगता है कि आम तौर पर इस बात पर सहमति होती थी कि आपका कर्तव्य गरीब लोगों, आदिवासियों और उनके अधिकारों की रक्षा करना है; और उद्योग कोई बुरी चीज नहीं है, लेकिन उसे देश के कानूनों का सम्मान करना चाहिए, उसे विशेष रूप से कमजोर समुदायों के प्रति संवेदनशील होना चाहिए, उसे आने वाली पीढ़ियों के प्रति संवेदनशील होना चाहिए।'

उन्होंने तर्क दिया कि भारतीय प्रशासन को इस नए उदारीकृत भारत की अपेक्षाओं को पूरा करने के लिए पुनर्प्रशिक्षित किया जा रहा था। नए अधिकारियों का कर्तव्य था कि वे हर तरह की बाधाओं को दूर करें और उद्योगों को बढ़ावा दें। यदि आदिवासियों और वन संरक्षण तथा भूमि अधिग्रहण के लिए कानून थे, तो उनका कर्तव्य था कि वे उद्यमियों को इन बाधाओं को दूर करने में मदद करें, क्योंकि भारत को हजारों मेगावाट बिजली और अयस्कों की आवश्यकता थी। मंदर ने तर्क दिया, 'इन परियोजनाओं का विरोध करने वाले लोगों के हितों की रक्षा करना राष्ट्र निर्माण के विरुद्ध माना जा सकता है। यह मानवीय संघर्ष के मूल्यों, हमारे संविधान आदि से पूर्णतः भिन्न है।'
शासन के इस नए स्वरूप से संभवतः सबसे अधिक लाभ बड़े-बड़े व्यापारियों को ही हुआ है। इनके विरोध में खड़े लोग शुरू से ही हारते आ रहे हैं।
1998 में एक दिन, रायगढ़ के लगभग दो सौ निवासी एक ट्रेन के डिब्बे में जमा हो गए और बीच-बीच में नारे लगाने लगे। उनके साथ पुलिसकर्मी भी थे। रामकुमार अग्रवाल, जो अब चुनावी राजनीति से दूर होने के बावजूद एक वरिष्ठ नेता थे, उस समूह का नेतृत्व कर रहे थे जो हरियाणा की एक अदालत में जा रहा था, जहाँ ओ.पी. जिंदल ने अग्रवाल और उनके साथियों के खिलाफ मानहानि का मुकदमा दायर किया था। हरियाणा की निचली अदालतों ने रायगढ़ निवासियों को नोटिस जारी करना शुरू कर दिया था। न तो प्रदर्शनकारी और न ही प्रभावित व्यवसाय हरियाणा में थे। उनका राज्य से कोई संबंध नहीं था। बात सिर्फ इतनी थी कि ओ.पी. जिंदल उस राज्य में बहुत प्रभावशाली राजनेता थे। लोगों के खिलाफ दूर-दराज की अदालतों में मुकदमे दायर करना भारत में उत्पीड़न का एक आम तरीका है।
अग्रवाल को अपने लंबे जीवन में इन रणनीतियों का व्यापक अनुभव था। एक सफल राजनीतिज्ञ के रूप में, उन्होंने क्षेत्र में शिक्षा सुविधाओं के आक्रामक विस्तार का नेतृत्व किया और स्थानीय लोगों को पढ़ाने के लिए स्कूल से पास हुए विद्यार्थियों को गांवों में भेजा। उनके पोते और अब कांग्रेस नेता अनिल अग्रवाल के अनुसार, रामकुमार के शिक्षा प्रयासों और क्षेत्र में सहकारी समितियों के गठन में सहायता के कारण लगभग 12,000 लोगों को रोजगार मिला। जैसे ही जिंदल परिवार ने अपने व्यवसायों का तेजी से विस्तार करना शुरू किया, रामकुमार अग्रवाल स्थानीय लोगों के लिए एक महत्वपूर्ण प्रेरणास्रोत बन गए।

उन्हें और उनके साथियों को लगातार परेशान किया जाता था। उनके कारोबार को नुकसान होने लगा, बिजली के बिल अचानक बढ़ जाते, उनके खिलाफ छोटे-मोटे मुकदमे दर्ज किए जाने लगे और यहां तक कि रामकुमार की स्वतंत्रता सेनानी होने की प्रतिष्ठा पर भी सवाल उठने लगे। देश के अन्य हिस्सों में, यहां तक कि मुंबई जैसे दूर-दराज के इलाकों में भी उनके रिश्तेदारों को बिना किसी कारण के उत्पीड़न का सामना करना पड़ा। कुछ गुप्त ताकतें सक्रिय थीं और ऐसा लग रहा था मानो सरकार भी उनके खिलाफ काम कर रही हो। लेकिन उस बुजुर्ग ने हार नहीं मानी।
सन् 1990 के दशक के मध्य में, जिंदल समूह ने अपने औद्योगिक उपयोग के लिए शहर की सीमा के भीतर एक बांध का निर्माण शुरू किया। रामकुमार बेहद क्रोधित हुए; उन्होंने वर्षों तक क्षेत्र की कृषि भूमि की सिंचाई के लिए बांध की मंजूरी पाने के लिए संघर्ष किया था। रामकुमार ने 1997 में इसके विरोध में कई दिनों तक भूख हड़ताल की। सत्यभामा, एक आदिवासी महिला, भी इसमें शामिल थीं। विरोध स्थल पर, वह बीमार पड़ गईं और गणतंत्र दिवस के दिन 26 जनवरी की दोपहर को अस्पताल में उनका निधन हो गया। अनिल अग्रवाल ने कहा, 'इसमें साजिश और भ्रम था,' लेकिन दस्तावेज़ निर्णायक नहीं थे। रामकुमार और कई अन्य लोगों पर हत्या के लिए उकसाने का मामला दर्ज किया गया और उन्हें जेल भेज दिया गया। रामकुमार ने अपनी अधिकांश पैतृक संपत्तियां बेच दीं, उनका स्वास्थ्य बिगड़ने लगा और कुछ समय बाद उनका निधन हो गया।
29 जनवरी 2005 को, सत्यभामा की मृत्यु के लगभग आठ वर्ष बाद, जिंदल समूह की इस्पात संयंत्र योजना पर एक जन सुनवाई होनी थी। हजारों लोग - व्यापारी, आदिवासी और कार्यकर्ता - विरोध प्रदर्शन करने के लिए एक छोटे से स्टेडियम में जमा हो गए। कानून के अनुसार, प्रदूषण फैलाने वाले उद्योगों के मामले में, जो स्थानीय लोगों को प्रभावित करते हैं, ऐसी जन सुनवाई अनिवार्य है। पर्याप्त सुरक्षा व्यवस्था के अभाव में, जन सुनवाई में अफरा-तफरी मच गई और उसे रद्द करना पड़ा। यह जिंदल समूह के खिलाफ विरोध प्रदर्शनों के एक नए दौर की शुरुआत थी। इस बार रमेश अग्रवाल सबसे आगे थे।
एक दोपहर अग्रवाल ने मुझसे कहा, ‘जैसे-जैसे अधिक से अधिक उद्योग स्थापित होने लगे, हमें एहसास हुआ कि हमें अपने लोगों को शिक्षित करने की आवश्यकता है।’ हम उनके पहली मंजिल के आवास में बैठे थे, जिसका प्रवेश भूतल पर स्थित

इलेक्ट्रॉनिक रूप से नियंत्रित दरवाजे से होता है। इन सभी सुरक्षा व्यवस्थाओं और अजनबियों के आने-जाने से इस घर में बेचैनी बनी रहती है। जैसे ही आंदोलनों की दूसरी लहर शुरू हुई, कार्यकर्ताओं को वैसी ही परेशानियों का सामना करना पड़ा जैसा उनके पूर्ववर्तियों ने झेला था। ओ.पी. जिंदल की 2005 की गर्मियों में एक हेलीकॉप्टर दुर्घटना में मृत्यु हो गई थी और नवीन जिंदल जेएसपीएल के प्रभारी थे। कार्यकर्ताओं पर विभिन्न धाराओं के तहत मामला दर्ज कर उन्हें जेल में डाल दिया गया। 2011 में एक सुबह, पुलिस ने रमेश अग्रवाल और उनके दो साथियों, जिनमें हरिहर पटेल भी शामिल थे, के घरों को घेर लिया और नाटकीय ढंग से छापा मारा। अग्रवाल ने 73 दिन जेल में बिताए। जेल में रहते हुए, उन्हें अचानक खराब स्वास्थ्य का बहाना बनाकर रायपुर ले जाया गया और देर शाम तक एक सरकारी अस्पताल में रखा गया। फिर डॉक्टरों ने उन्हें वापस जेल जाने के लिए स्वस्थ घोषित कर दिया। उन्होंने कहा, 'शायद मैं भाग्यशाली था कि जेल से जिंदा बाहर निकल पाया।' रमेश अग्रवाल और उनके सहयोगियों ने जिंदल और अन्य प्रदूषण फैलाने वाले उद्योगों के खिलाफ मामला दर्ज करने के लिए सर्वोच्च न्यायालय, राज्य उच्च न्यायालय, राष्ट्रीय हरित न्यायाधिकरण और अन्य उपलब्ध न्यायालयों का सहारा लिया। इस क्षेत्र में जिंदल समूह के व्यापक हितों को देखते हुए, अधिकांश मामले उनके खिलाफ ही थे। अग्रवाल ने कहा, 'भारत के शहरों में रहने वाले लोग इन उद्योगों को पसंद करते हैं। वे प्रदूषण की बात तो करते हैं, लेकिन पैसा और बिजली जैसी सुविधाएं उनकी चिंताओं को दबाने में सक्षम हैं। शायद दस या पंद्रह साल बाद, उन्हें पता चलेगा कि हमारे ग्रामीण इलाकों का क्या हाल हुआ है।'
अग्रवाल के बचपन में रायगढ़ घने जंगलों और जंगली जानवरों से भरा इलाका था। आज उनके घर की सफाई दिन में तीन बार करनी पड़ती है। अन्यथा परिवार को पास के कारखानों से उड़ने वाली धूल और अन्य प्रदूषकों से भरे रास्ते से होकर गुजरना पड़ता है।
2012 की शुरुआत में, रमेश अग्रवाल ने गरे के पास दूसरी कोयला खदान खोलने से जेएसपीएल को रोकने के लिए अदालत में मुकदमा जीता। उस समय सत्ताधारी कांग्रेस पार्टी के सांसद नवीन जिंदल के लिए यह एक बड़ा झटका था।
7 जुलाई 2012 को अग्रवाल हमेशा की तरह अपनी दुकान, सत्यम साइबर एंड कंप्यूटर्स पर थे। उन्होंने सुबह करीब 10 बजे दुकान खोली थी और लगभग 11:30

बजे दो युवक मोटरसाइकिल पर आए और उनसे कंप्यूटरों की कीमत पूछने लगे। उन्होंने कहा कि वे कंप्यूटर का कारोबार नहीं करते और अपने बेटों को बुला लेंगे। उन्होंने उनसे कहा, 'कृपया बैठ जाइए।' तभी उनमें से एक ने बंदूक निकाल ली। अग्रवाल ने हथियार देखा और अपना मोबाइल फोन उस आदमी पर फेंक दिया। तीन गोलियां चलीं, जिनमें से दो उनकी बाईं टांग में लगीं। खून बहते हुए अग्रवाल कुर्सी पर गिर पड़े, लेकिन हमलावरों के भाग जाने के बावजूद उन्होंने किसी तरह अपने घर का नंबर डायल कर लिया।
पुलिस ने स्थानीय अदालत में सात लोगों के खिलाफ आरोप पत्र दाखिल किया है, जिनमें जिंदल का एक कर्मचारी और समूह के लिए काम करने वाली एक निजी सुरक्षा एजेंसी का मालिक शामिल हैं। इन सभी पर अग्रवाल की हत्या की साजिश रचने का आरोप है। हालांकि जेएसपीएल ने गोलीबारी में संलिप्तता के सभी आरोपों को बार-बार नकारा है, लेकिन कार्यकर्ता लगातार यह दावा कर रहे हैं कि इस घटना के पीछे समूह का हाथ था।
जिस दुकान पर अग्रवाल को गोली मारी गई थी, वह सुभाष चंद्र बोस जंक्शन से कुछ ही मीटर की दूरी पर है। उनकी प्रतिमा के नीचे, सस्ती टाइलों पर, बोस का प्रसिद्ध युद्धघोष हिंदी में खुदा हुआ है: 'मुझे खून दो, मैं तुम्हें आजादी दूंगा।' अग्रवाल ने खून दिया, लेकिन आजादी का नामोनिशान नहीं था।
अग्रवाल एक कुर्सी पर बैठे थे, उनका बायां पैर प्लास्टर में लिपटा हुआ एक स्टूल पर रखा था। स्थानीय डॉक्टरों ने उनके इलाज में गड़बड़ी कर दी थी, जिसके चलते उन्हें मुंबई में एक दर्जन से अधिक सर्जरी करवानी पड़ीं। हर दो महीने में, वे डॉक्टरों से मिलने के लिए ट्रेन से मुंबई जाते थे। 2015 की शुरुआत तक, डॉक्टरों ने घोषणा कर दी थी कि उनकी हड्डी ठीक है और वे पूरी तरह से चलने-फिरने में सक्षम हो जाएंगे।
मैंने 2014 में गोल्डमैन पर्यावरण पुरस्कार से सम्मानित व्यक्ति से पूछा कि इन सभी संघर्षों से क्या हासिल हुआ है? उन्होंने जवाब दिया, 'उद्योग अब अधिक जागरूक हो गए हैं। हम कम से कम उनकी मनमानी के खिलाफ एक स्पीड ब्रेकर के रूप में काम करते हैं।'
क्या आप भी रामकुमार अग्रवाल और उनके साथियों की तरह हारने वाली लड़ाई नहीं लड़ रहे हैं?
‘मुझे नहीं पता। लेकिन कम से कम अब लोग जागरूक हो गए हैं। वे लड़ने के लिए तैयार हैं।’ उन्होंने रुककर कहा, ‘अब वे इतनी आसानी से हार नहीं मानेंगे।’

वाली अपनी बेटी की याद आ गई। उसकी पीढ़ी, चाहे खनन कस्बों में हो या जगमगाते महानगरों में, एक बुनियादी अधिकार से वंचित है: एक स्वच्छ भविष्य। बाल्को से कुछ ही किलोमीटर दूर एक और जगह पर, हम एक तालाब के ऊपर खड़ी चढ़ाई चढ़े और उसके शिखर पर पहुँच गए। यह एक अद्भुत नज़ारा था; एक विशाल खुली झील की तरह, राख का तालाब दूर तक फैला हुआ था। वहाँ से कोरबा ऐसा लग रहा था मानो तारों के जाल से लटका हुआ हो। बिजली संयंत्रों से उच्च-तनाव वाली तारें पूरे क्षेत्र में फैली हुई थीं। ये तारें बिजली को पावर ग्रिड तक और फिर देश के बाकी हिस्सों तक पहुँचाती थीं। वह जगह रहस्यमय और असामान्य लग रही थी।
अपने कार्यकर्ता करियर में चौहान ने राजनेता एल. राजगोपाल द्वारा समर्थित लैंको, सरकारी स्वामित्व वाली नेशनल थर्मल पावर कॉर्पोरेशन (एनटीपीसी) और अन्य बड़ी कंपनियों का विरोध किया था। हालांकि, उनकी सबसे बड़ी चिंता बाल्को को लेकर है – एक एकीकृत एल्युमीनियम संयंत्र जिसे सरकार ने 2001 में बेचकर प्रबंधन नियंत्रण और 51 प्रतिशत हिस्सेदारी अनिल अग्रवाल के वेदांता समूह को सौंप दी थी। चौहान और श्रीवास्तव ने बताया कि बाल्को ने अपने एल्युमीनियम उत्पादन के कुछ हिस्सों को बंद कर दिया था और नए बिजली संयंत्र बना रही थी। शायद एल्युमीनियम उत्पादन की तुलना में सस्ती बिजली का उत्पादन करना और औद्योगीकरण की ओर बढ़ रहे भारत की बढ़ती मांग को पूरा करना अधिक लाभदायक था। लेकिन सरकार, जिसकी बाल्को में अभी भी 49 प्रतिशत हिस्सेदारी थी, ने यह सवाल क्यों नहीं उठाया कि भारत के प्रमुख उद्योगों में से एक – जिसे एल्युमीनियम उत्पादन को अधिक कुशल और लाभदायक बनाने के स्पष्ट उद्देश्य से बेचा गया था – बिजली उत्पादन की ओर क्यों बढ़ रहा है। जिन कस्बों में ये औद्योगिक घराने सबसे बड़े नियोक्ता हैं, वहां चुप्पी की एक बड़ी साजिश चल रही है। चौहान ने पूछा, 'क्या आपको लगता है कि बाल्को के कर्मचारी अपनी नौकरी खोने का जोखिम उठाएंगे?'
23 सितंबर 2009 को, जब बाल्को में निर्माणाधीन एक चिमनी आंधी से बचने के लिए उसके नीचे शरण लिए हुए सौ से अधिक मजदूरों पर गिर गई, जिसमें कम से कम पच्चीस लोगों की मौत हो गई, तो मीडिया ने इस घटना पर काफी ध्यान दिया (हालांकि यह ध्यान थोड़े समय के लिए ही रहा)। रिपोर्टों में चिमनी निर्माण में खामियों की बात कही गई। लेकिन 2015 की शुरुआत में, जब मैंने कोरबा का दौरा किया, तो ऐसा प्रतीत हुआ कि किसी को भी इस त्रासदी में मारे गए लोगों

के परिवारों के बारे में कोई जानकारी नहीं थी। कुछ मीडिया रिपोर्टों में कहा गया था कि प्रत्येक परिवार को मुआवजे के रूप में मात्र 5 लाख रुपये दिए गए थे। यह तथ्य कि चिमनी संभवतः वर्गीकृत वन भूमि पर बनाई जा रही थी, या स्थानीय नगर पालिका अधिकारियों ने कुछ ही दिन पहले चिमनी का निर्माण रोकने का आदेश दिया था, स्थानीय स्तर पर इसका कोई खास प्रभाव नहीं पड़ा। लोग आगे बढ़ चुके हैं, और यह मामला अपनी धीमी गति के लिए मशहूर निचली अदालतों में दबा दिया गया है।

लंदन में मुख्यालय वाली वेदांता रिसोर्सेज पीएलसी का संचालन बिहार के कॉलेज ड्रॉपआउट अनिल अग्रवाल करते हैं। उन्होंने 1976 में बॉम्बे में अपना कारोबार शुरू किया था और तब से यह प्रभावशाली और अक्सर विवादों से भरा विकास कर रहा है। आज अग्रवाल दुनिया भर में कारोबार करते हैं, मुख्य रूप से खनन उद्योगों में। वेदांता की हिस्सेदारी एल्युमीनियम, तांबा, जस्ता, सीसा, लौह अयस्क, पेट्रोलियम और बिजली में है। अग्रवाल की लंदन में आलीशान जिंदगी तक की तीव्र तरक्की एक मिसाल है।
दिसंबर 2014 के एक दिन, मैं पटना गया, जहाँ अनिल अग्रवाल का जन्म हुआ था और वे अठारह वर्ष की आयु तक वहीं रहे, जिसके बाद वे बॉम्बे चले गए। शहर के मिलर स्कूल में, जो अग्रवाल का शिक्षण संस्थान था, लगभग हर उस व्यक्ति ने, जिससे मैं मिला, मुझे 2011 की गर्मियों में उस उद्योगपति की यात्रा के बारे में कोई न कोई कहानी सुनाई।
लगभग पचास वर्षीय रामप्रवेश राम, जो मिलर स्कूल में अटेंडेंट हैं, ने अपने दाढ़ी, मूंछ और दागदार दांतों के बीच से चमकती मुस्कान के साथ मिले महंगे उपहार के बारे में बात की। उस मुलाकात के परिणामस्वरूप उन्हें घड़ी उपहार में मिली - उनकी पहली घड़ी। यह सोने की थी, जिसके डायल पर बड़े अक्षरों में 'वेदांत' लिखा हुआ था। उनकी बेटी, जो उसी स्कूल में पढ़ रही थी, को भी एक घड़ी और एक स्कूल बैग मिला। उन्होंने मुझे बताया, 'वह बहुत खुशी का दिन था।' मिलर स्कूल पटना का एक ऐतिहासिक स्थल है, और सिर्फ अपने छात्रों के लिए ही नहीं। इसका खेल का मैदान शहर के सबसे बड़े खेल के मैदानों में से एक है और सौ साल पुराने इस स्कूल ने सैकड़ों सिविल सेवक, राजनीतिक नेता, वकील और अन्य प्रतिष्ठित व्यक्ति दिए हैं। अब इसे आधिकारिक तौर पर शहीद देबीपाड़ा

चौधरी मेमोरियल स्कूल कहा जाता है, जिसका नाम स्कूल के कक्षा नौ के छात्र के नाम पर रखा गया है, जो भारत के स्वतंत्रता संग्राम के दौरान 11 अगस्त 1942 को ब्रिटिश सेना द्वारा गोली मारकर मारे गए सात लोगों में से एक थे। प्रांगण में, शहीद की एक साधारण सी दिखने वाली प्रतिमा गमलों और फूलों से घिरी हुई है। इमारत की पीली दीवारें काई से हरी हो गई हैं।
रामप्रवेश को वह व्यक्ति याद आया जिसने उसे घड़ी उपहार में दी थी। उसने कहा, 'वह बहुत अमीर आदमी था, हमारे स्कूल का छात्र था। मैंने इतना अमीर किसी को न देखा है और न ही सुना है।'
2011 में विद्यालय के प्रधानाचार्य राजा राम को वह दौरा याद है। एक गर्मी की सुबह उनके मोबाइल की घंटी बजी। दूसरी तरफ मुंबई से वेदांता समूह के सीईओ का फोन था। राम ने वहां तीन दशकों तक शिक्षक के रूप में काम किया था, लेकिन उन्हें कभी ऐसा महत्वपूर्ण फोन नहीं आया था। सीईओ ने बताया कि उनके समूह के अध्यक्ष अनिल अग्रवाल विद्यालय के पूर्व छात्र हैं और अपने पुराने विद्यालय का दौरा करना चाहते हैं।
राजा राम ने कहा, 'उनका हार्दिक स्वागत है। हमारे सभी पूर्व छात्रों का किसी भी समय स्वागत है।'
अगली सुबह अग्रवाल, उनकी पत्नी और बेटा संभवतः चार्टर्ड विमान से पटना पहुँचे और वेदांता के कई अधिकारियों के साथ स्कूल गए। राजा राम ने याद करते हुए बताया, ‘मैं प्रधानाचार्य था और वह पूर्व छात्र थे। इसलिए मैं उनका स्वागत करने बाहर नहीं गया।’ सुबह करीब 10 बजे आगंतुकों को उनके छोटे से कार्यालय में ले जाया गया।
राजा राम ने आगंतुकों को चाय की पेशकश की, लेकिन अग्रवाल ने कहा कि वह चाय नहीं पीते हैं।
‘मैं आपकी और क्या सेवा कर सकता हूँ?’ राम ने उससे पूछा।
‘ठीक है, मैं आपकी चाय पी लूँगा,’ अग्रवाल ने सरकारी स्कूल के प्रधानाचार्य के साधारण आतिथ्य को स्वीकार करते हुए उत्तर दिया। उन्हें एक छोटे से गिलास में चाय परोसी गई।
अग्रवाल ने 1960 के दशक में इस स्कूल से स्नातक की उपाधि प्राप्त की थी और उन्हें याद है कि उस समय खेल के मैदान में चारदीवारी नहीं थी। उन्होंने अपने स्कूल के एक वरिष्ठ छात्र लालू प्रसाद यादव का जिक्र किया, जो भारतीय राजनीति में एक महत्वपूर्ण व्यक्ति हैं। लालू भारत के उन गिने-चुने

मुख्यमंत्रियों में से हैं जिन्हें भ्रष्टाचार के आरोप में जेल भेजा गया है। अग्रवाल ने याद करते हुए बताया कि लालू अपने स्कूली दिनों में भी एक नेता थे। उन्होंने कहा कि स्कूल की इमारत आज भी वैसी ही है।
अग्रवाल ने साधारण आधी बाजू की कमीज और पतलून पहनी हुई थी। प्रधानाचार्य ने याद किया कि उस उद्योगपति ने पारंपरिक मोजारी के जूते पहने हुए थे। उन्होंने कहा, 'उनकी पत्नी और बेटा भी साधारण कपड़े पहने हुए थे। मैंने कभी कल्पना भी नहीं की थी कि वे इतने अमीर होंगे।'
प्रधानाचार्य अग्रवाल परिवार के साथ परिसर का भ्रमण कर रहे थे और एक टीवी क्रू ने पूरे दौरे को रिकॉर्ड किया। कुछ देर बाद, अग्रवाल स्कूल की सीढ़ियों पर बैठ गए और बच्चे उनके चारों ओर इकट्ठा होकर अचानक प्रश्नोत्तर सत्र में शामिल हो गए। उन्होंने बताया कि स्कूल के बाद उन्होंने शहर के वाणिज्य कॉलेज में दाखिला लिया था, लेकिन पढ़ाई बीच में ही छोड़ दी और मुंबई चले गए।
एक छात्र ने पूछा, 'आप इतने तेज और बुद्धिमान व्यक्ति हैं, आपने आगे की पढ़ाई क्यों नहीं की?'
'मुझे पढ़ाई में कभी दिलचस्पी नहीं थी, मैं व्यापार करना चाहता था। मैं पैसा कमाना चाहता था; यह मेरा शौक है,' अग्रवाल ने जवाब दिया।
बैठक में मौजूद शिक्षकों में से एक ने मुझे बताया कि अग्रवाल से पटना में उनके पारिवारिक संबंधों के बारे में पूछा गया था। उन्होंने अस्पष्ट रूप से कहा कि वे पाटलिपुत्र से हैं, जो पटना का एक इलाका है जहाँ पुरातत्वविदों ने एक ऐतिहासिक शहर के अवशेषों की खोज की है।
अब सेवानिवृत्त हो चुके राजा राम को अग्रवाल द्वारा अपने परिवार या बचपन के बारे में बताई गई कोई भी बात याद नहीं थी। उन्होंने कहा, 'बाद में किसी ने मुझे बताया कि उनका परिवार कबाड़ का कारोबार करता था।'
लगभग दो घंटे की अपनी मुलाक़ात समाप्त करते हुए, अग्रवाल ने प्रधानाचार्य से विद्यालय परिसर में एक नई इमारत बनवाने का आग्रह किया। उन्होंने बड़े गर्व से कहा, "आवश्यक अनुमतियाँ प्राप्त कर लीजिए," और प्रधानाचार्य को आश्वासन दिया कि पूरा खर्च वहन किया जाएगा। दोपहर तक अग्रवाल परिवार जा चुका था।
प्रधानाचार्य ने लगभग पंद्रह बड़े कमरों वाले एक नए भवन के निर्माण की योजना तैयार करना शुरू किया, जिसमें एक सभागार, कई प्रयोगशालाएँ, एक

पुस्तकालय और अन्य सुविधाएँ शामिल थीं। अनुमानित लागत लगभग 10 करोड़ रुपये थी। उन्होंने परियोजना रिपोर्ट सरकार को भेज दी। तब से उन्हें किसी से कोई सूचना नहीं मिली है, अग्रवाल से तो बिल्कुल भी नहीं।
उस यात्रा के कुछ महीनों बाद, वेदांता के कुछ अधिकारी लगभग 1,300 घड़ियाँ और समूह के नाम से खुदे हुए बैग लेकर स्कूल पहुँचे। बैग बच्चों में बाँट दिए गए, जबकि घड़ियाँ बच्चों और कर्मचारियों को दी गईं। उसी सर्दी की सुबह स्कूल के परिचारक को उनकी ज़िंदगी की पहली घड़ी मिली।
“एक बार वेदांता के लोग यहाँ आए थे। वे शायद कोलकाता से दो ट्रकों में आए थे और उन्होंने काफी शूटिंग की थी,” स्कूल के वरिष्ठ शिक्षक सुशील कुमार सिन्हा ने याद करते हुए बताया। “लगभग पचास लोग थे और उन्होंने ऐसे शूटिंग की जैसे कोई बॉलीवुड फिल्म शूट कर रहे हों। उन्होंने नए प्रधानाचार्य और छात्रों के इंटरव्यू लिए,” उन्होंने कहा। “हमने फिल्म नहीं देखी है, लेकिन यकीनन वह एक खूबसूरत फिल्म होगी।”
वेदांता द्वारा विश्व भर में खनन संबंधी गैर-जिम्मेदार प्रथाओं के आरोपों के खिलाफ आक्रामक अंतरराष्ट्रीय अभियान चलाने के साथ ही, उसके आकर्षक वीडियो इंटरनेट पर और टीवी चैनलों पर प्रायोजित कार्यक्रमों के रूप में प्रचारित किए जा रहे हैं। इनमें से कुछ वीडियो में मिलर स्कूल के दृश्य हैं, जिनमें अग्रवाल की साधारण पृष्ठभूमि के बारे में विदेशी लहजे में आवाज दी गई है।
मिलर स्कूल अकेला ऐसा स्कूल नहीं है जो वेदांता समूह के प्रमोटर की उदारता का इंतजार कर रहा है। 600 किलोमीटर से अधिक दूर, छत्तीसगढ़ की नई राजधानी नया रायपुर में, एक विशाल अस्पताल परिसर अधूरा पड़ा है।
सेक्टर 36 में स्टील के ढांचे और कंक्रीट की नंगी दीवारों की सुरक्षा के लिए कुछ सुरक्षाकर्मी तैनात थे, जिन्होंने 2015 की शुरुआत में मेरे दौरे के दौरान मुझे गेट पर ही रोक दिया। उनमें से एक ने मेरा पहचान पत्र अपने वरिष्ठ अधिकारी को दे दिया। कुछ मिनट बाद, वह वापस आया और मुझे अधिकारियों से मिलने या परिसर का दौरा करने की अनुमति देने से इनकार कर दिया। वेदांता कैंसर अस्पताल अग्रवाल के कॉर्पोरेट सामाजिक उत्तरदायित्व कार्यक्रम का हिस्सा है। पिछले दो वर्षों से इस स्थल पर कोई काम नहीं हुआ है।
जब मैं वहां से जा रहा था, तो एक गार्ड ने कहा, 'हमने सुना है कि अनिल अग्रवाल अपनी अधिकांश संपत्ति गरीबों को दान कर रहे हैं।' सितंबर 2014

में, लंदन स्टॉक एक्सचेंज में अपने प्रमुख समूह वेदांता की लिस्टिंग के एक दशक पूरे होने के उपलक्ष्य में, अग्रवाल ने अपनी 22,000 करोड़ रुपये से अधिक की संपत्ति का 75 प्रतिशत परोपकार के लिए दान करने का संकल्प लिया था।
‘क्या आपको लगता है कि हमें इससे कुछ फायदा होगा?’ गार्ड ने पूछा।
उनकी तनख्वाह कितनी थी?
उन्होंने कहा कि प्रति माह 6,000 रुपये।
मेरे जाने से पहले, मैंने उनसे कहा कि मैं प्रार्थना करूंगा कि अग्रवाल की लाभार्थियों की सूची में उनका नाम भी शामिल हो।

2015 की शुरुआत में एक और दोपहर, मैं गेवरा में था, जो भारत के उन गांवों में से एक है जहाँ विकास की पहचान वहाँ के लोगों से नहीं बल्कि एक विशाल खुली खदान से होती है। मैं और मेरे दो साथी तेज़ी से एक ढलानदार नाले से नीचे उतरे, सूखे पानी के रास्ते को पार किया और एक संकरी पहाड़ी पर चढ़ गए। हमारे सामने, जहाँ तक नज़र जाती थी, एशिया की सबसे बड़ी खुली कोयला खदानों में से एक थी। उस दोपहर हुए डायनामाइट विस्फोटों का धुआँ अभी भी उठ रहा था, और दर्जनों ट्रक खदान के अंधेरे भीतर से ऊपर आ रहे थे। खदान के चारों ओर अस्थायी सड़कें टेढ़ी-मेढ़ी बनी हुई थीं, जो दोपहर में भी लैंप पोस्ट से रोशन थीं। अंदर इतना अंधेरा था। एक खुदाई मशीन सड़क के किनारे खड़ी थी, जो ऊपर की बलुआ पत्थर की परत को खोद रही थी और कोयले की एक और परत को उजागर कर रही थी।
जब तक हम अपनी कार तक वापस पहुँचे, मुझे कुछ चोटें आ चुकी थीं और हम सब धूल से सने हुए थे। तभी गांधी गिरि गोस्वामी साइकिल पर तेज़ी से आते हुए दिखाई दिए। उनकी साइकिल के दाहिने हैंडल से एक बाल्टी लटकी हुई थी जिसमें साबुन, तौलिया और साफ कपड़े रखे थे। उनके भाई सुभाष चंद्र बोस और उनके दोस्त क्रिकेट खेल रहे थे। उनके पिता, जो स्थानीय अदालत में एक मामूली कर्मचारी थे, ने अपने बच्चों का नाम भारत के स्वतंत्रता संग्राम के इन दो महान नायकों के नाम पर रखा था।

उन्नीस वर्षीय गांधी गोस्वामी और उनका परिवार लगभग एक दशक पहले उस घर में रहने आया था, जो हमारे खड़े होने की जगह से लगभग 50 मीटर दूर है। उन्होंने खुली खदान के विशाल क्षेत्र की ओर इशारा करते हुए कहा, 'जब हम यहां आए थे, तब यहां चारों ओर घना जंगल था और कुछ घर थे।'
उनके घर की दो दीवारें उस मैदान की ओर खुलती हैं जहाँ वे खेलते हैं। उनके खेल के मैदान से कुछ मीटर की दूरी पर कंक्रीट की पटियाएँ लगी हैं जिन पर प्रतिबंधित क्षेत्र अंकित हैं, जिन्हें हम तीनों ने कुछ मिनट पहले अवैध रूप से पार किया था। यदि आप उन चेतावनियों को अनदेखा करते हुए कुछ सावधानी से कदम बढ़ाते हैं, तो आपको कोयले का वह विशाल गड्ढा दिखाई देगा जिसे हमने अभी देखा।
देश में कोयला खनन के अधिकांश हिस्से पर नियंत्रण रखने वाली सार्वजनिक क्षेत्र की विशाल कंपनी कोल इंडिया द्वारा संचालित खदान से काला धुआं उठ रहा था। एक बच्चे ने सहज भाव से कहा, 'यह धमाकों की वजह से है।' वे इसके आदी हो चुके हैं। उसने आगे कहा, 'हर दिन दोपहर दो बजे धमाके होते हैं।' गोस्वामी के परिवार और पड़ोसियों को 2014 में बताया गया था कि उन्हें कुछ महीनों में अपना घर खाली करना होगा, क्योंकि खदान का और विस्तार होना था। दोनों भाइयों ने कोई विरोध नहीं किया। यह उनकी नियति थी, और वे नई अर्थव्यवस्था के प्रत्यक्ष और अप्रत्यक्ष स्वामियों के फैसलों पर सवाल उठाने वाले भला कौन होते? 2016 की शुरुआत में जब मैंने किताब की अंतिम समीक्षा पूरी की, तो मेरे मन में यह सवाल उठा कि क्या खुली खदान ने उनके खेल के मैदान और घर को निगल लिया है, क्या वे दोनों लड़के एक नए घर की तलाश में हैं।
मेरे वकील मित्र सुदीप श्रीवास्तव ने कहा, 'हमारे शहर उनके आंसुओं से जगमगा रहे हैं।' भारत के आदिवासी क्षेत्रों में हो रही बेरहम लूट से नाराज़ सुदीप भारत के खनन क्षेत्र में चल रही गतिविधियों का अध्ययन और दस्तावेज़ीकरण कर रहे हैं। सितंबर 2014 में, जब सर्वोच्च न्यायालय ने जिंदल समूह और वेदांता सहित 214 कोयला ब्लॉकों के आवंटन को अवैध करार दिया, तो उसने सुदीप द्वारा प्रस्तुत दलीलों का बड़े पैमाने पर हवाला दिया।
सुदीप के कार्यकर्ता जीवन की शुरुआत तब हुई जब बिलासपुर के लोगों ने अपने शहर में रेलवे ज़ोन का मुख्यालय बनाने की मांग को लेकर विरोध प्रदर्शन

किए, जो अक्सर हिंसक भी होते थे। उनका तर्क था कि रेलवे ज़ोन से अधिक रोज़गार, यातायात और आर्थिक समृद्धि आएगी। आगे चलकर उन्होंने वकीली की और अब वे नई दिल्ली और छत्तीसगढ़ के विभिन्न मंचों पर सक्रिय हैं। उनसे बातचीत करते समय भारत के मध्य भाग में अंधाधुंध खनन के कारण पैदा हो रहे गंभीर पर्यावरणीय संकट का ज़िक्र ज़रूर होता है।
हमारी पूरी यात्रा के दौरान, सुदीप ने मुझे परिदृश्य में उभरी हुई कई पहाड़ियों और छोटी पहाड़ियों की ओर इशारा किया। ये बलुआ पत्थर और कोयला खदानों से निकाले गए अन्य पदार्थों से बनी थीं, और अब इन पर छोटे पेड़ और लहरदार घास के मैदान उग आए थे। कई बिजली संयंत्रों में, उन्होंने मेरा ध्यान चिमनियों से निकलते हुए घने सफेद धुएं के गुबार की ओर दिलाया। बिजली बचाने के लिए इन संयंत्रों ने अपने प्रदूषण नियंत्रण उपकरणों को बंद कर दिया है। उन्होंने अफसोस जताते हुए कहा, 'ये प्रदूषण को हमारे आसमान में फैला रहे हैं।' उन्होंने कहा कि उद्योगों द्वारा प्रदूषण नियंत्रण मानकों का पालन सुनिश्चित करना सबसे बड़ी चुनौती है।
भारत के खनिज भंडारों का एक बड़ा हिस्सा देश के पारिस्थितिक रूप से संवेदनशील और जैव विविधता से समृद्ध मध्य क्षेत्र में फैला हुआ है। यहाँ दो प्रकार की हिंसा और विरोध प्रदर्शन देखने को मिल रहे हैं। एक ओर इन क्षेत्रों के निवासी और कार्यकर्ता उन अनियंत्रित उद्योगों के खिलाफ विरोध कर रहे हैं जो जन स्वास्थ्य और पर्यावरण को नुकसान पहुँचाकर अपना भाग्य चमका रहे हैं, वहीं दूसरी ओर सशस्त्र वामपंथी उग्रवादियों और सरकारी बलों के बीच हिंसा हो रही है।
ये दोनों आंदोलन भारत के कुछ सबसे गरीब लोगों की हताशा को दर्शाते हैं। सरकारों और राजनीतिक व्यवस्थाओं ने नागरिक विरोध प्रदर्शनों को विदेशी वित्त पोषित गैर-सरकारी संगठनों (एनजीओ) द्वारा किए गए राष्ट्र-विरोधी प्रयास और सशस्त्र विद्रोह को आतंकवाद करार दिया है। जब सरकारों को बड़ी चुनौतियों का सामना करना पड़ता है, तो वे उन्हें कई छोटे-छोटे मुद्दों में बाँटकर आसानी से नाम दे देती हैं। इस बीच, लोग प्रदूषण से होने वाली बीमारियों से मर रहे हैं और देश के जंगल और प्राकृतिक संसाधन चिंताजनक दर से कम हो रहे हैं।
2016 में अमेरिकन एसोसिएशन फॉर द एडवांसमेंट ऑफ साइंस में दुनिया भर के वैज्ञानिकों द्वारा प्रस्तुत अनुमानों के अनुसार, 2013 में वायु प्रदूषण

से हुई पचपन लाख मौतों में से आधे से अधिक भारत और चीन में हुईं। इनमें से चौदह लाख मौतें अकेले भारत में हुईं। वैज्ञानिकों का कहना है कि उच्च रक्तचाप, खराब आहार और सिगरेट के बाद वायु प्रदूषण वैश्विक स्तर पर मृत्यु का चौथा सबसे बड़ा जोखिम कारक है। हम केवल यही आशा कर सकते हैं कि आदिवासी क्षेत्रों में मरने वाले गरीब लोगों को कम से कम इन आंकड़ों में शामिल किया जाए।
हालांकि भारतीय सरकार का दावा है कि 2013 और 2015 के बीच देश के वन क्षेत्र में 5,081 वर्ग किलोमीटर की वृद्धि हुई है, लेकिन आंकड़ों से परे एक कड़वी सच्चाई है: इसी अवधि में लगभग 2,510 वर्ग किलोमीटर घने और मध्यम घने वन नष्ट हो गए हैं। और 2,254 वर्ग किलोमीटर मध्यम घने वन अब गैर-वन भूमि में परिवर्तित हो चुके हैं।
नई दिल्ली लौटने के बाद, मैं लगभग हर दूसरे दिन कनॉट प्लेस जाता हूँ, जहाँ कई नए रेस्तरां खुल गए हैं जो युवाओं की एक नई पीढ़ी को इस पुराने बाज़ार की ओर आकर्षित कर रहे हैं। कनॉट प्लेस, जैसा कि इसे कहा जाता है, मेट्रो के शहर के बाकी हिस्सों से जुड़ने और पुराने किराया नियंत्रण अधिनियम में ढील दिए जाने के बाद एक तरह से पुनर्जीवित हो गया है, जिससे व्यवसायों को सुविधा मिली है।
मार्च 2014 में इसके केंद्रीय उद्यान में एक विशाल राष्ट्रीय ध्वज फहराया गया था और वह आज भी वहीं लहरा रहा है। यह ध्वज 60 फीट चौड़ा और 90 फीट लंबा है और एक ऊंचे खंभे पर फहराया गया है। रात में इसे आठ 2,000 वाट के बल्बों से रोशन किया जाता है; शहर के प्रदूषित रात के आकाश में यह बेहद खूबसूरत दिखता है। इस सुरक्षित ध्वज को नवीन जिंदल के फ्लैग फाउंडेशन ऑफ इंडिया द्वारा स्थापित किया गया था और यह देश के सबसे बड़े ध्वजों में से एक है। मैं अक्सर सोचता हूं कि क्या रायगढ़ के गरीबों को पता है कि उनके देश का सबसे बड़ा ध्वज अब जिंदल द्वारा फहराया और संरक्षित किया जा रहा है।

10

श्री अंबानी के लिए एक घर

सड़क के उस पार ऊंट के रंग की कई मीटर ऊंची दीवार है, जिस पर लोहे की जाली वाले दो विशाल दरवाजे हैं, जो जटिल नक्काशी और लकड़ी के फ्रेम से बने हैं। दरवाजे खुलने पर अंदर बड़े-बड़े गमले और हरे-भरे बगीचे दिखाई देते हैं। बाहर राख के रंग के सफारी सूट पहने कई निजी सुरक्षा गार्ड और एक पट्टा बंधा कुत्ता खड़ा है। दरवाजों के दोनों ओर, पहरेदारी करते हुए, स्वचालित बंदूकें लिए दो अर्धसैनिक कमांडो तैनात हैं। सुरक्षाकर्मियों के सामने, मेरे बाईं ओर, सादे कपड़ों में एक पुलिस गश्ती वाहन है। कुछ मीटर आगे वर्दी में और भी हथियारबंद लोग हैं। परिसर की दीवार के साथ-साथ एक संकरा रास्ता एक छोटे से दरवाजे तक जाता है, जो परिसर के अंदर ही खुलता है। मेरे दाईं ओर, जहां दीवार खत्म होती है, कुछ युवक सिगरेट पी रहे हैं। मुंबई में फरवरी की सुहावनी दोपहर है।
मैंने ऊपर देखा। टावर की कई मंजिलें हरी लताओं से ढकी हुई थीं। वास्तुकार ऊर्जा-कुशल इमारतें बनाने के लिए जाने जाते हैं, भले ही वे कांच और कंक्रीट की हों। बालकनियों से असली पौधों जैसी दिखने वाली लताएँ लटक रही थीं। कुछ बोगनविलिया के फूल भी दिखाई दे रहे थे। कई बड़ी बालकनियाँ, तिरछी बीम और ढेर सारा कांच था। दूर-दूर तक कोई इंसान नज़र नहीं आ रहा था। मैं इमारत का सबसे ऊपरी सिरा नहीं देख पा रहा था। मेरा दोस्त ज़ाकिर, जो ज़्यादा लंबा नहीं है, उसने तो और भी जल्दी हार मान ली। भारत के सबसे अमीर आदमी मुकेश अंबानी का निवास, 170 मीटर ऊँचा एंटिलिया, हमारे लिए पूरी तरह से देखने के लिए बहुत विशाल है। उनकी अनुमानित संपत्ति 1,50,000 करोड़ रुपये से अधिक है। अतिरिक्त ऊँची छतों के कारण इमारत में केवल सत्ताईस मंजिलें हैं; एक मानक निर्माण में, इसमें साठ मंजिलें होतीं।
उस दोपहर हम एंटिलिया के बाहर एकमात्र पर्यटक थे, लेकिन आसपास के दुकानदारों ने हमें बताया कि दुनिया के कोने-कोने से लोग इस घर को देखने आते हैं, जो शायद हाल के समय में बना सबसे महंगा घर है। बताया जाता है कि अंबानी परिवार ने शहर के दक्षिणी हिस्से में स्थित इस आलीशान घर को बनाने में लगभग 10,000 करोड़ रुपये खर्च किए हैं, जो मुंबई के आसमान को छूता है।

4,00,000 वर्ग फुट के इस घर को कई वैश्विक प्रकाशनों में दुनिया के सबसे शानदार आवासों में से एक के रूप में दिखाया गया है। लेखिका शोभा डे, जो नवंबर 2010 में गृहप्रवेश समारोह में विशेष रूप से चुने गए अस्सी मेहमानों में शामिल थीं, ने इसकी प्रशंसा करते हुए इसे इक्कीसवीं सदी का ताजमहल बताया। डे ने फिल्म निर्माता शेखर कपूर के हवाले से कहा, 'इतनी ऊंचाई पर ताजी हवा में सांस लेना और मुंबई के प्रदूषण को पीछे छोड़ देना कितना सुखद है।' कपूर की फिल्मी समझ को देखते हुए, उनके इस कथन में गहरा अर्थ छिपा हो सकता है। डे ने कहा कि वर्साय पैलेस का बॉलरूम भी एंटिलिया के भव्य बॉलरूम के सामने फीका पड़ जाएगा। उन्होंने उत्साह से कहा, 'एक पल के लिए तो ऐसा लगा जैसे हम सब सिंड्रेला के बॉल में हों।'
हर कोई इससे प्रभावित नहीं है। लेखिका अरुंधति रॉय ने 2012 में लिखे एक लेख में सवाल उठाया कि अंबानी परिवार ने अपनी इमारत का नाम एंटिलिया क्यों रखा। उन्होंने लिखा: ‘एंटिलिया पौराणिक द्वीपों के एक समूह का नाम है, जिसकी कहानी आठवीं शताब्दी की इबेरियाई कथा से जुड़ी है। जब मुसलमानों ने हिस्पानिया पर विजय प्राप्त की, तो छह ईसाई विसिगोथिक बिशप और उनके अनुयायी जहाजों पर सवार होकर भाग गए। कई दिनों या शायद हफ्तों तक समुद्र में रहने के बाद, वे एंटिलिया द्वीपों पर पहुँचे, जहाँ उन्होंने बसने और एक नई सभ्यता स्थापित करने का फैसला किया… क्या अंबानी परिवार अपने टावर का नाम एंटिलिया रखकर अपनी मातृभूमि की गरीबी और बदहाली से नाता तोड़ना और एक नई सभ्यता स्थापित करना चाहते हैं? क्या यह भारत के सबसे सफल अलगाववादी आंदोलन का अंतिम चरण है? क्या यह मध्यम और उच्च वर्गों का अंतरिक्ष में विलीन होना है?’
सिर्फ उदारवादी बुद्धिजीवी ही असहज नहीं हैं। अरबपति रतन टाटा ने मई 2011 में लंदन के द टाइम्स को दिए एक साक्षात्कार में कहा, 'मुझे आश्चर्य होता है कि कोई ऐसा क्यों करेगा। क्रांतियां तो इसी से बनती हैं। वहां रहने वाले व्यक्ति को अपने आसपास की चीजों के बारे में चिंतित होना चाहिए... अगर वह चिंतित नहीं है, तो यह दुखद है क्योंकि इस देश को ऐसे लोगों की जरूरत है जो अपनी अपार संपत्ति का कुछ हिस्सा लोगों की कठिनाइयों को कम करने के तरीकों को खोजने में लगाएं।'
जैसे ही भारतीय मीडिया में एंटीलिया के बारे में उनकी टिप्पणियों को लेकर हलचल मची, टाटा समूह ने स्पष्टीकरण जारी किया: 'हम श्री अंबानी के घर के

संबंध में भारतीय मीडिया में छपी खबरों पर भी स्पष्टीकरण देना चाहेंगे। रिपोर्ट संदर्भ से परे और तथ्यात्मक रूप से गलत है। धन के बारे में श्री टाटा की टिप्पणियां समाज में बढ़ती असमानता के व्यापक संदर्भ में हैं। ऐसा लगता है कि इन टिप्पणियों को जानबूझकर सनसनीखेज बनाया गया है।' एंटिलिया के सामने सड़क के उस पार छोटी-छोटी दुकानों की एक कतार है, जिनमें से प्रत्येक का क्षेत्रफल सौ वर्ग फुट से थोड़ा अधिक है। एक दुकान में सब्जियां बिकती हैं, दूसरी में रोटी और चीनी जैसी रोजमर्रा की जरूरत की चीजें, तीसरी दुकान ने दो दुकानों को मिलाकर एक डिजाइनर स्टोर खोला है, और एक एटीएम भी है। एटीएम के बाद वाली आखिरी दुकान बंद है, जिसका शटर हाल ही में रंगा गया है।
बाजार में यह चर्चा है कि अंबानी के लोग दुकानदारों से संपर्क कर रहे हैं ताकि उन्हें खरीदकर इस बदसूरत बाजार को हमेशा के लिए बंद किया जा सके। आखिरी दुकान के मालिक ने 4 करोड़ रुपये लेकर दुकान छोड़ दी। बाजार में प्रचलित एक कहानी के अनुसार, दुकान के बाहर एक छोटे से लकड़ी के स्टैंड पर सब्जियां बेचने वाले एक व्यक्ति को जगह खाली करने के लिए 1 करोड़ रुपये मिले। सब्जी विक्रेता ने अब इस इलाके से काफी दूर एक बड़ा घर खरीद लिया है और कहीं और सब्जियां बेचने लगा है - कम से कम लोग तो यही कहते हैं।
उन छोटी दुकानों ने संपत्ति की कीमतों में एक नया रिकॉर्ड स्थापित किया होगा, यहां तक कि सड़क के उस हिस्से पर भी जहां अंबानी और कुमार मंगलम बिरला जैसे अरबपतियों के घर हैं।
वहाँ के एक व्यापारी ने हमें बताया कि उन्हें 3 करोड़ रुपये की पेशकश की गई थी, 'लेकिन मैंने 5 करोड़ रुपये की मांग रखी है।' दुकानदार जाहिर तौर पर अपनी नई-नई प्रसिद्धि और अप्रत्याशित धन-दौलत की संभावना का आनंद ले रहे हैं।
एंटीलिया में लगभग 500 लोग काम करते हैं और इसके परिसर में कर्मचारियों के लिए एक बड़ी कैंटीन है। लेकिन इससे दुकान मालिकों को कोई सीधा लाभ नहीं हुआ है। मैंने उनमें से एक से पूछा कि क्या कभी ऐसा हुआ है कि अंबानी परिवार के किसी कर्मचारी को आपातकालीन स्थिति में ब्रेड का पैकेट या चीनी लाने के लिए भेजा गया हो।

‘आपको लगता है कि वे ये सब चीजें खाते हैं,’ वह अपनी दुकान में रखी चीजों की ओर तिरस्कारपूर्ण ढंग से इशारा करते हुए कहता है। ‘उनके कैंटीन से कोई बहुत कम ही ब्रेड खरीदता है।’
एक और व्यक्ति का कहना है कि एंटिलिया की वजह से बिक्री में निश्चित रूप से वृद्धि हुई है। मेरे जैसे पर्यटक पानी की बोतल या कोई कोल्ड ड्रिंक लेने के लिए यहाँ आते हैं। मुंबई के सुहावने मौसम में गगनचुंबी इमारत को ऊपर-नीचे देखने के लिए शरीर को फैलाना थोड़ा थका देने वाला हो सकता है। और एंटिलिया के बाहर ऐसी कोई जगह नहीं है जहाँ से पूरी इमारत को नज़दीक से देखा जा सके।
2002 में जब से इस इमारत का निर्माण शुरू हुआ, तब से यह छोटा सा बाज़ार कहानियों, लोककथाओं और अफवाहों की दुनिया में बदल गया है। एक दुकानदार का कहना है कि इमारत के अंदर 150 कुत्ते हैं और उनकी देखभाल के लिए बीस लोग हैं। एक बुजुर्ग व्यक्ति कहता है, 'यह अतिशयोक्ति है, शायद अंदर चालीस कुत्ते ही होंगे।' मुझे इमारत के बाहर एक कुत्ता पट्टे से बंधा हुआ साफ दिखाई दे रहा है।
एक अन्य व्यक्ति का कहना है कि अंदर बगीचे, स्विमिंग पूल, सिनेमा हॉल और ऐसी ही अन्य सुविधाएं हैं। लेकिन इसकी पुष्टि करना असंभव है, क्योंकि न तो एंटिलिया के निवासी और न ही उनके गार्ड या कर्मचारी बाजार में घूमते हैं। अंबानी परिवार का एकमात्र सदस्य जो कभी-कभार बाहर निकलता है, वह मुकेश और नीता अंबानी के तीन बच्चों में सबसे छोटा अनंत है। यह युवक, जो अपने वजन को लेकर काफी परेशान था - 2016 तक, जब उसने अपना वजन काफी कम कर लिया था और सार्वजनिक रूप से सामने आया था - कभी-कभी अंगरक्षकों के साथ सड़क पर टहलने निकल जाता है। उसके जुड़वां भाई-बहन ईशा और आकाश को कभी बाहर नहीं देखा गया है। स्थानीय लोगों का कहना है कि कभी-कभी उनके चाचा अनिल अंबानी, जो कुछ किलोमीटर दूर अपने पैतृक घर में रहते हैं, इलाके में दौड़ते हुए दिखाई देते हैं।
अंबानी परिवार के बच्चे जब भी बाहर निकलते हैं, खबर बन जाती है। 7 दिसंबर 2013 को, जब रिलायंस समूह की एक काली एस्टन मार्टिन रैपिड देर रात एंटिलिया से कुछ ही दूरी पर दो कारों से टकरा गई, तो मीडिया ने खबर दी कि आकाश अंबानी कार चला रहे थे। जल्द ही वेबसाइटों से उनका नाम गायब हो गया और टेलीविजन चैनलों ने इस बारे में बात करना बंद कर दिया। दुर्घटना के एक दिन

बाद, रिलायंस के एक पुराने ड्राइवर, पचपन वर्षीय बंसीलाल जोशी, पुलिस के सामने पेश हुए और दावा किया कि गाड़ी वही चला रहे थे। उन्होंने कहा कि वे अपनी कार के साथ चल रही दो एसयूवी में से एक में बैठकर दुर्घटनास्थल से भाग गए थे। दुर्घटना के रिकॉर्ड में अब युवा अंबानी का नाम नहीं मिलता। फिर भी, समूह से जुड़ी कई बातों की तरह, उनके बारे में भी सवाल उठते रहते हैं। बाज़ार में काम करने वाले एक कर्मचारी ने मुझे बताया कि एक पुजारी नियमित रूप से एंटिलिया आकर इमारत से बुरी आत्माओं को दूर करने के लिए विशेष प्रार्थनाएँ करते हैं। पुजारी ने इमारत के तहखाने में दस से बारह फीट नीचे खुदाई की है, जो वैसे भी ज़मीन से लगभग छह मंज़िल नीचे है। उन्होंने आगे बताया, 'प्रार्थनाओं का असर केवल दस प्रतिशत ही हो रहा है।'
बाज़ार के सबसे बुज़ुर्ग सदस्यों में से एक का कहना है कि हालांकि उन्हें विशेष प्रार्थनाओं और अंदरूनी आध्यात्मिक अशांति की अफवाहों के बारे में ज़्यादा जानकारी नहीं है, लेकिन वे जानते हैं कि लगभग पंद्रह साल पहले तक उस ज़मीन पर एक अनाथालय था। वहाँ एक पुरानी इमारत में लगभग साठ मुस्लिम बच्चे रहते थे, और वह वक्फ़ की संपत्ति थी। बुज़ुर्ग बताते हैं कि वे हर सुबह बस से पास के स्कूल जाते थे और शाम को लौट आते थे।
इस्लामी परंपराओं के अनुसार, धार्मिक या धर्मार्थ उद्देश्यों के लिए दान की गई भूमि, नकद या अन्य संपत्ति वक्फ कानूनों के तहत स्थायी रूप से रखी जाती है। भारत में वक्फ की एक लंबी परंपरा है और यहाँ एक केंद्रीय कानून, 1954 का वक्फ अधिनियम है, जिसके तहत प्रत्येक राज्य में हजारों एकड़ भूमि और सैकड़ों इमारतों का प्रबंधन वक्फ बोर्डों द्वारा किया जाता है। ‘अनाथालय बनने से पहले यहाँ एक कब्रिस्तान था,’ बूढ़ा व्यक्ति अपनी याददाश्त ताज़ा करते हुए कहता है। आखिर किस तरह कब्रिस्तान और वक्फ की ज़मीन, जिस पर अनाथालय बना था, भारत के सबसे धनी परिवार का घर बन गई? इसके विवरण सरकारी रिकॉर्ड, अदालती मामलों और कुछ हालिया शिकायतों में मौजूद हैं, जो इन्हें खोजना चाहते हैं।
अल्टामाउंट रोड पर स्थित 4,532 वर्ग मीटर के उस भूखंड के पीछे एक और कहानी है जहां एंटिलिया स्थित है - एक ऐसी कहानी जो मुंबई के ब्रिटिश बंदरगाह शहर से, जहां कपड़ा मिलें और अफीम का निर्यात होता था, देश की वित्तीय राजधानी में परिवर्तन का प्रतीक है।

कार्यकारी अधिकारी की नियुक्ति हुई और उन्होंने यह कहते हुए सूची वापस ले ली कि उन्हें संपत्तियों की सूची में संशोधन करने का अधिकार नहीं है। मामला लंबा खिंचता चला गया, इसी बीच एंटिलिया कमर्शियल प्राइवेट लिमिटेड ने ट्रस्ट से 21 करोड़ रुपये में वह प्लॉट खरीद लिया। मामले की जांच के लिए नियुक्त एक वरिष्ठ अधिकारी ने मुझे बताया कि उस समय उस सड़क के किनारे जमीन की कीमत भुगतान की गई राशि से कम से कम पच्चीस गुना अधिक रही होगी। अधिकारी ने बताया कि कुछ समय बाद अंबानी की कंपनी ने तथाकथित समझौते के तहत वक्फ बोर्ड को 16 लाख रुपये दान के रूप में दिए। इस संपत्ति से जुड़ा मामला वक्फ बोर्ड और बॉम्बे हाई कोर्ट के बीच घूमता रहा, यहां तक कि भारत के सर्वोच्च न्यायालय तक भी पहुंचा। सितंबर 2015 में महाराष्ट्र राज्य विधानसभा में प्रस्तुत एक कार्रवाई रिपोर्ट में, वक्फ बोर्ड ने कहा कि यह सौदा अमान्य था। सेवानिवृत्त न्यायाधीश ए.टी.ए.के. शेख, जिन्हें 2007 में हुए विरोध प्रदर्शनों के मद्देनजर इस सौदे की जांच करने के लिए कहा गया था, ने कहा, 'वक्फ बोर्ड की अनुमति के बिना अंबानी को जमीन बेची गई थी।' वक्फ बोर्ड के नियम 32 (2) जे के अनुसार, किसी भी भूमि की बिक्री करते समय बोर्ड को 2/3 सदस्यों की पूर्व स्वीकृति लेनी होती है और बैठक में ऐसा प्रस्ताव पारित होना आवश्यक है। इसलिए, भूमि देने का निर्णय अमान्य है।’ अधिकारी का कहना है कि आज भी इस मामले में कोई अंतिम निर्णय नहीं हुआ है।
नई दिल्ली में, जब इस लेन-देन के संबंध में केंद्रीय अल्पसंख्यक मामलों के मंत्रालय को शिकायत मिली, तो वरिष्ठ अधिकारियों के एक समूह ने कड़ा रुख अपनाया। सचिव ने 1 दिसंबर 2010 को महाराष्ट्र सरकार को पत्र लिखकर कहा: ‘प्रथम दृष्टया ऐसा प्रतीत होता है कि अल्टामाउंट रोड स्थित 4532 वर्ग मीटर की वक्फ संपत्ति को एंटिलिया कमर्शियल प्राइवेट लिमिटेड को बेचते समय वक्फ अधिनियम 1995 के कानूनों और नियमों का सही ढंग से पालन नहीं किया गया। इस प्रक्रिया में, समुदाय के जरूरतमंदों को वहां चल रहे अनाथालय से वंचित कर दिया गया और वक्फ संपत्ति को भी भारी वित्तीय हानि हुई है। अतः महाराष्ट्र सरकार इस मामले को केंद्रीय जांच ब्यूरो (सीबीआई) को जांच के लिए सौंपने पर विचार कर सकती है।’ इसका तात्पर्य यह था कि इस लेन-देन के पीछे एक आपराधिक साजिश थी।
'यह मामला दर्शाता है कि कैसे देश के कुछ शक्तिशाली और धनी लोग भ्रष्ट लोक सेवकों के साथ मिलीभगत करके कानून और संवैधानिक व्यवस्था का मजाक उड़ाने

में सक्षम हैं,' मंत्रालय में एक निदेशक आशीष जोशी ने 25 अक्टूबर 2010 को केंद्रीय सतर्कता आयोग को लिखे पत्र में यह बात कही।
लेकिन उन सिफारिशों का मामले पर कोई खास असर नहीं पड़ा। जोशी ने बताया कि उन्हें अपनी बात पर अड़े रहने के कारण प्रताड़ित किया गया और हरियाणा में एक गुमनाम पद पर भेज दिया गया। जब मैंने 2015 की शुरुआत में उनसे संपर्क किया, तो वे दिल्ली में बेघरों को रात्रि आश्रय प्रदान करने वाले विभाग में कार्यरत थे।
जोशी के पास मुकेश अंबानी के रिलायंस समूह के साथ अपने जुड़ाव के बारे में सोचने का अब बहुत कम समय था। लेकिन भारत में रिलायंस सर्वव्यापी है, इससे बचना असंभव है – तकिए, बिजली, मोबाइल नेटवर्क या पेट्रोकेमिकल्स, आपको हर मोड़ पर इसका सामना करना ही पड़ेगा। भारतीय राजनीति पर उनके अपार प्रभाव की अफवाहें खूब फैली हुई हैं। उनके कुछ कर्मचारी और करीबी सहयोगी सांसद रह चुके हैं। हालांकि, रिलायंस समूह द्वारा किसी भी राजनीतिक दल को बड़ी मात्रा में आधिकारिक चंदा देने का कोई सबूत नहीं है।
रिलायंस समूह का तेजी से उदय, जिसमें अंबानी भाइयों की अलग-अलग हिस्सेदारी है, इस बात का एक जीता-जागता उदाहरण है कि भारत उन लोगों के लिए क्या संभावनाएं प्रदान करता है जो सही लोगों को जानते हैं और निर्णयों को प्रभावित कर सकते हैं।
मुकेश और अनिल अंबानी उन उद्योगपतियों और अन्य प्रतिष्ठित व्यक्तियों में अग्रणी थे जिन्होंने नरेंद्र मोदी को 2002 के गुजरात नरसंहार के कलंक से अपनी छवि को साफ करने में मदद की। हालांकि, अंबानी परिवार पूरी तरह से हिंदू दक्षिणपंथी खेमे का वफादार नहीं है। मोदी की राजनीतिक कट्टर प्रतिद्वंद्वी सोनिया गांधी को 2005 में मॉस्को में रिलायंस के एक निजी जेट में देखा गया था, जिसकी काफी चर्चा हुई थी।
अंबानी परिवार की बदलती राजनीतिक निष्ठाएं आधुनिक भारतीय व्यवसायी के सामने आने वाली चुनौतियों का प्रतीक हैं। भले ही कोई कंपनी ईमानदारी से व्यापार करना चाहे, राजनीति उसे ऐसा करने नहीं देती।
एंटिलिया का निर्माण कार्य 2008 में सही मायने में शुरू हुआ। दुनिया भर में कई विश्वविद्यालयों और ऊंची इमारतों को डिजाइन करने वाली आर्किटेक्चर फर्म पर्किन्स+विल ने योजना तैयार की। ऑस्ट्रेलिया की

लेइटन होल्डिंग्स मुख्य ठेकेदार थी, और टावर के निर्माण के लिए कई अन्य कंपनियों को भी शामिल किया गया था।
समकालीन राजनीतिक इतिहास में वर्ष 2008 एक महत्वपूर्ण वर्ष है। इसी वर्ष केंद्र सरकार पर बड़े पैमाने पर भ्रष्टाचार, भाई-भतीजावाद और कदाचार के आरोप लगने शुरू हुए और कई भारतीय अरबपति चापलूस पूंजीपतियों के रूप में बेनकाब हुए। अर्थशास्त्री प्रधानमंत्री, जिन्हें कभी भारत के उदारीकरण का जनक माना जाता था, की छवि एक ऐसे अक्षम राजनीतिज्ञ की बन गई जो भ्रष्टाचार को बढ़ावा देता था, भले ही व्यक्तिगत रूप से वे बेदाग थे। उस वर्ष की शुरुआत में दूरसंचार कंपनियों को दिए गए 122 नई पीढ़ी के एकीकृत पहुंच सेवा लाइसेंसों में स्पष्ट रूप से नियमों का उल्लंघन किया गया था और उन 2G लाइसेंसों को प्राप्त करने के लिए विभिन्न लोगों को भारी रिश्वत दी गई थी।
2010 तक, जब एंटिलिया में बसने की तैयारी चल रही थी, सीएजी की एक रिपोर्ट में कहा गया कि 2 जी रेडियो स्पेक्ट्रम घोटाले में जनता को 1,76,000 करोड़ रुपये तक का नुकसान हो सकता है – यह राशि अधिकांश भारतीयों की समझ से परे थी। जल्द ही, विभिन्न एजेंसियों ने जांच शुरू कर दी और सर्वोच्च न्यायालय की एक पीठ नियमित रूप से मामले की निगरानी करने लगी। प्रमुख आरोपियों में अनिल अंबानी की कंपनियां भी शामिल थीं, जो मुकेश अंबानी के अलग रह रहे छोटे भाई हैं और अभी भी सी विंड नामक अठारह मंजिला पारिवारिक घर में रहते हैं, जहां से बड़े भाई और उनका परिवार एंटिलिया में स्थानांतरित हो गया था। पारिवारिक समझौते के तहत, जब जून 2005 में दोनों भाई कटुतापूर्ण तरीके से अलग हुए, तो अनिल को दूरसंचार व्यवसाय सौंप दिया गया और मुकेश ने इससे दूर रहने पर सहमति जताई। अब जब छोटे भाई को पूरी छूट मिल गई थी, तो उसने अपने समूह की सीडीएमए (कोड डिवीजन मल्टीपल एक्सेस) तकनीक के बजाय अधिक लोकप्रिय जीएसएम (ग्लोबल सिस्टम फॉर मोबाइल कम्युनिकेशंस) के माध्यम से मोबाइल टेलीफोनी सेवाएं प्रदान करके व्यवसाय का विस्तार करने के लिए आक्रामक रूप से काम किया। जांच एजेंसियों ने कहा कि अनिल के समूह ने एकाधिकार और क्रॉस ओनरशिप के खिलाफ प्रतिबंधों को दरकिनार करने के लिए बिचौलियों को बढ़ावा दिया था और 2 जी घोटाले में सक्रिय रूप से भागीदार था।

2010 में, जब 2G दूरसंचार घोटाले की बारीकियाँ समाचारों और प्राइम टाइम टेलीविजन की सुर्खियों में छाई हुई थीं, और उच्च स्तरीय भ्रष्टाचार के खिलाफ जनता का गुस्सा सड़कों पर उतरने लगा था, तब यह उम्मीद की जा रही थी कि भारत भ्रष्टाचार के खिलाफ निर्णायक कदम उठाएगा। लेकिन उस समय व्यापार जगत की कुछ ऐसी वास्तविकताएँ भी थीं, जिनकी जानकारी न तो जनता को थी और न ही मीडिया को।
23 मई 2010 को अंबानी बंधुओं ने गैर-प्रतिस्पर्धा समझौते को रद्द करने की घोषणा की, जिससे दोनों को अपनी इच्छानुसार कहीं भी स्वतंत्र रूप से काम करने की अनुमति मिल गई। इसका मतलब यह था कि मुकेश अंबानी दूरसंचार, वित्त और बिजली क्षेत्र में प्रवेश कर सकते थे, जबकि अनिल अंबानी पेट्रोकेमिकल्स क्षेत्र में। जल्द ही यह बात सामने आई कि मुकेश अंबानी की रिलायंस इंडस्ट्रीज लिमिटेड शुरू से ही दूरसंचार क्षेत्र में फिर से प्रवेश करने की दिशा में चुपचाप काम कर रही थी।
24 मई 2010 को, जब दूरसंचार विभाग ने मुख्य रूप से इंटरनेट ब्रॉडबैंड सेवाओं के लिए निर्धारित 4 जी स्पेक्ट्रम के आवंटन के लिए अपनी नीलामी साइट खोली, तो भारत की दूरसंचार दिग्गजों ने अपनी ऊर्जा और संसाधनों को मुंबई और दिल्ली जैसे आर्थिक रूप से आकर्षक क्षेत्रों पर केंद्रित किया। इसका एक अपवाद था: एक कम प्रसिद्ध इंटरनेट सेवा प्रदाता, इंफोटेल ब्रॉडबैंड सर्विसेज प्राइवेट लिमिटेड, जिसका वार्षिक कारोबार मात्र 18,00,000 रुपये था और जिसका केवल एक ग्राहक था।
इंफोटेल पूरे भारत में आक्रामक रूप से बोली लगा रही थी। इसके प्रमोटर महेंद्र नाहटा ने पहले भी दूरसंचार क्षेत्र में इसी तरह की ऊंची बोलियां लगाने के बाद सरकारी लाइसेंस शुल्क का भुगतान नहीं किया था। लेकिन अधिकारियों को इसकी कोई परवाह नहीं थी। जब बोली प्रक्रिया समाप्त हुई, तो इंफोटेल ने राष्ट्रीय लाइसेंस के लिए 12,847.77 करोड़ रुपये की भारी भरकम राशि का भुगतान करने पर सहमति जताई। यह कंपनी के वार्षिक कारोबार का 71,000 गुना था। किसी ने इस पर सवाल नहीं उठाया - ऐसा लग रहा था मानो सरकार यह जानना ही नहीं चाहती थी कि वह इतनी बड़ी रकम का भुगतान कैसे करेगी।
11 जून 2010 को नीलामी समाप्त होने के कुछ ही घंटों के भीतर, मुकेश अंबानी के आरआईएल समूह ने इंफोटेल का अधिग्रहण कर लिया। जैसे ही आरआईएल ने ब्रॉडबैंड क्षेत्र में प्रवेश किया, इस बात की अफवाहें फैलने लगीं कि उनके

समूह ने नीलामी में हेरफेर करके अपने लिए परोक्ष प्रवेश सुनिश्चित किया था। एक केंद्रीय ऑडिट में पूरी निविदा प्रक्रिया में कई अनियमितताएं पाई गईं, जिनमें बोली के लिए प्रस्तुत बैंक गारंटी दस्तावेजों की संभावित जालसाजी का मामला भी शामिल था। जब मैं 4 जी आवंटन की जांच कर रहा था, तब महेंद्र नाहटा ने मुझे बताया कि सीएजी, सीवीसी और अन्य जांच एजेंसियां किस तरह देश को अपनी पूरी वित्तीय क्षमता का एहसास करने से रोक रही हैं। उन्होंने मुझे इन एजेंसियों की नकारात्मक भूमिका के बारे में लिखने के लिए प्रेरित किया।
इसी दौरान, आरआईएल पूर्वी क्षेत्र के कृष्णा और गोदावरी बेसिनों से तेल और गैस निष्कर्षण से संबंधित सभी रिकॉर्ड उपलब्ध कराने की सीएजी की मांग को लेकर भी कानूनी लड़ाई लड़ रही थी। भारत में प्राकृतिक गैस का सबसे बड़ा भंडार एक दशक पहले इस क्षेत्र में मिलने के बाद आरआईएल को वहां निष्कर्षण की अनुमति दी गई थी। उसे सरकार के साथ लाभ साझा करना था, और आरोप था कि मुकेश अंबानी की कंपनी उत्पादन के आंकड़ों को छुपाते हुए खर्चों को बढ़ा- चढ़ाकर पेश कर रही थी। लंबे गतिरोध के अंत में, 8 सितंबर 2011 को सीएजी ने संसद में एक रिपोर्ट पेश की जिसमें आरआईएल और सरकार दोनों के इरादों पर सवाल उठाए गए। रिपोर्ट में कहा गया कि इस सौदे में सरकारी खजाने को सैकड़ों करोड़ रुपये का नुकसान हुआ है। भारत में बड़े व्यवसायों के संचालन में इस तरह के विवाद असामान्य नहीं हैं।
अंबानी परिवार को कोई खास चिंता नहीं थी। दरअसल, मुकेश अंबानी का परिवार उस समय अपने नए घर को अंतिम रूप देने में व्यस्त था। उन्होंने साल के अंत में गृह प्रवेश पार्टी की योजना बनाई थी। एंटिलिया में दो हाई-टेंशन बिजली लाइनें बिछाई गईं, जिनमें से कम से कम एक पास के अमेरिकी दूतावास से आती थी। इन लाइनों के अलावा, जो एक-दूसरे के बैकअप के रूप में थीं, वैश्विक इंजीनियरिंग कंपनी कैटरपिलर ने बिजली के बैकअप की दो और परतें प्रदान करने के लिए दो एफजी विल्सन डीजल जनरेटर लगाए। बिजली आपूर्ति बैकअप की यह चार-स्तरीय प्रणाली ऐसी है जो संभवतः किसी अन्य भारतीय इमारत में नहीं होगी।
मीडिया रिपोर्टों के अनुसार, नीता अंबानी ने श्रीलंका जाकर जापानी ब्रांड नोरीटेक के 25,000 चीनी मिट्टी के बर्तन खरीदे, जिनकी कीमत 6 करोड़ रुपये से अधिक थी। गृहप्रवेश समारोह 25 नवंबर 2010 को आयोजित किया गया था। दे के

लेख में यह घोषणा की गई थी: 'उस प्रभावशाली ऊंचाई और मनोरम दृश्यों के साथ, मुकेश और नीता स्पष्ट रूप से अपने दृष्टिकोण से हर क्षेत्र के निर्विवाद स्वामी हैं - पूर्व, पश्चिम, उत्तर, दक्षिण।' यह कोई अतिशयोक्ति नहीं थी। उस दिन से, एंटिलिया भारत की जानी-मानी हस्तियों की मेजबानी करता आ रहा है। जब भारत के क्रिकेट के दिग्गज सचिन तेंदुलकर ने अंतरराष्ट्रीय मैचों में अपना 100 वां शतक बनाया, तो अंबानी परिवार ने एक भव्य आयोजन किया। इस आयोजन में बॉलीवुड और भारतीय खेल जगत के बड़े सितारे, राजनेता और अन्य लोग शामिल हुए। एक अन्य दिन, परिवार ने डिजाइनर जोड़ी अबू जानी और संदीप खोसला के फैशन उद्योग में 25 साल पूरे होने पर एक शानदार पार्टी का आयोजन किया, और रैंप पर चलने वालों में नीता अंबानी और अभिनेता अमिताभ बच्चन भी शामिल थे।

प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी इस कुलीनतंत्र का मज़ाक उड़ाते हैं; वास्तव में, उन्होंने अपने बाहरी होने की स्थिति का प्रभावी राजनीतिक मंच तैयार किया है। मोदी का करियर उन लोगों के लिए एक बेहतरीन उदाहरण है जो आने वाली पीढ़ियों के लिए धन कमाने में रुचि नहीं रखते – भारतीय प्रधानमंत्री का अपनी उस पत्नी से कोई संबंध नहीं रहा जिसे उन्होंने त्याग दिया था, और उनकी कोई संतान नहीं है। उनकी मां अभी भी गुजरात में अपने पुराने घर में रहती हैं, जबकि मोदी दिल्ली में प्रधानमंत्री के आधिकारिक आवास में रहने लगे हैं।
16 मई 2014 को, 55 करोड़ लोगों द्वारा मतदान किए गए चुनाव के नतीजे ने एक दशक से शासन कर रही अनिर्णायक और ज्यादातर भ्रष्ट कांग्रेस सरकार को स्पष्ट रूप से नकार दिया। इसने विभाजनकारी प्रधानमंत्री पद के उम्मीदवार के नेतृत्व वाली भाजपा को सत्ता सौंप दी। सुप्रीम कोर्ट ने मोदी की गुजरात सरकार को दो बार दोषी ठहराया था - एक बार 2002 में गुजरात में हुए मुस्लिम विरोधी दंगों के संदर्भ में उन्हें आधुनिक नीरो करार दिया था, और दूसरी बार 2002 के अक्षरधाम आतंकी हमले पर फैसला सुनाते समय 'विवेक का प्रयोग न करने' के लिए - लेकिन उस समय भारत के मतदाताओं के लिए इसका कोई महत्व नहीं था। कई लोगों का मानना है कि गुजरात दंगों के दौरान मुसलमानों के खिलाफ हिंसा में सरकार की संलिप्तता थी। अक्षरधाम हमले में, राज्य पुलिस ने

निर्दोष मुसलमानों को फंसाया था जिनके खिलाफ कोई विश्वसनीय सबूत नहीं थे, और राज्य के गृह मंत्री, मोदी ने स्वयं, इस मामले में विवेक का प्रयोग नहीं किया, सर्वोच्च न्यायालय ने 2014 के आम चुनावों के परिणाम घोषित होने के उसी दिन यह बात कही थी।
फिर भी, गुजरात के मुख्यमंत्री ने अपनी पार्टी के लिए बहुमत हासिल किया, जो किसी भारतीय राजनीतिक दल के लिए तीन दशकों से अधिक समय में पहली बार हुआ है। भारत और दुनिया के अधिकांश हिस्सों ने मोदी की इस शानदार जीत को सराहा, वहीं यह दिन उनके एक करीबी सहयोगी के लिए भी एक महत्वपूर्ण उपलब्धि साबित हुआ।
नई दिल्ली से लगभग 1,400 किलोमीटर दूर मुंबई में, सबसे बड़ी व्यापारिक खबर यह थी कि अदानी पोर्ट्स एंड स्पेशल इकोनॉमिक ज़ोन लिमिटेड ने भारत के पूर्वी तट पर स्थित ओडिशा के धामरा बंदरगाह को 5,500 करोड़ रुपये में खरीदने के लिए एक समझौते पर हस्ताक्षर किए। भारत के दो सबसे प्रतिष्ठित व्यापारिक घराने, टाटा और लार्सन एंड टुब्रो, जो बंदरगाह में बराबर के भागीदार थे, एक दशक में बंदरगाह क्षेत्र के सबसे बड़े सौदे में विक्रेता थे। गौतम अदानी के नेतृत्व वाले गुजरात स्थित अदानी समूह के लिए, यह मोदी के गुजरात में एक दशक लंबे शासन के समानांतर हुई तीव्र वृद्धि में एक और रणनीतिक सफलता थी। 2014 में अपने शोरगुल भरे, खर्चीले और आक्रामक चुनावी अभियान के दौरान मोदी ने अदानी समूह के चार्टर्ड विमान से पूरे भारत का दौरा किया था। जैसे-जैसे मोदी का प्रचार अभियान आगे बढ़ा, अदानी की किस्मत चमक उठी। चुनाव से पहले के तीन महीनों में, अदानी समूह की तीनों सार्वजनिक रूप से सूचीबद्ध कंपनियों के शेयर मूल्य में 100 प्रतिशत से अधिक की वृद्धि हुई, हालांकि भारतीय शेयर बाजार में कुल मिलाकर मामूली वृद्धि हुई थी।
जैसे-जैसे मोदी का चुनावी अभियान तेज़ होता गया, भारतीय जांच एजेंसियों को अडानी समूह द्वारा किए गए एक बड़े अवैध कृत्य का पता चला। इस अवैध कृत्य में बिजली उपकरणों के बिलों में हेरफेर करके लगभग 5,468 करोड़ रुपये भारत से बाहर भेजे गए थे। राजस्व खुफिया निदेशालय (डीआरआई) ने पाया कि अडानी समूह ने बिजली और पारेषण उपकरणों के आयात के लिए 9,048.8 करोड़ रुपये का भुगतान किया था, जबकि चीन और दक्षिण कोरिया से आयात किए गए उपकरणों का वास्तविक मूल्य केवल 3,580.8 करोड़ रुपये था। जांच एजेंसी ने पाया कि

5,468 करोड़ रुपये की यह राशि अडानी समूह ने दुबई के रास्ते मॉरीशस स्थित इलेक्ट्रो जेन इंफ्रा होल्डिंग्स को भेजी थी। इलेक्ट्रो जेन इंफ्रा होल्डिंग्स का नियंत्रण अडानी भाइयों में सबसे बड़े, शांतिलाल अडानी के पास है और यह होल्डिंग्स टैक्स हेवन में स्थित है। डीआरआई ने पुख्ता सबूत होने का दावा किया, लेकिन अडानी समूह ने कहा कि यह मोदी से समूह की निकटता के कारण कांग्रेस द्वारा की गई राजनीतिक बदले की कार्रवाई है।
काले धन पर नज़र रखने वाली एसआईटी में मेरे संपर्कों के अनुसार - संयोगवश, यह मोदी द्वारा प्रधानमंत्री बनने के बाद घोषित की गई पहली प्रमुख नीतिगत पहलों में से एक थी - अडानी मामला उनके द्वारा संभाला जाने वाला सबसे बड़ा मामला है। संभावित रूप से, समूह को गबन की गई राशि के तीन गुना तक जुर्माना देना पड़ सकता है: लगभग 15,000 करोड़ रुपये। इन सब बातों का अडानी और मोदी के बीच घनिष्ठ संबंधों पर कोई असर नहीं पड़ा है। वास्तव में, वह प्रधानमंत्री की अधिकांश विदेश यात्राओं में उनके साथ रहे हैं।
हालांकि, मोदी का ध्यान सिर्फ अदानी पर ही नहीं है। एंटिलिया अस्पताल के बाहर भी मोदी की तस्वीरें लगी हुई हैं। स्थानीय दुकानदारों के अनुसार, उन्होंने अभी तक अस्पताल का दौरा नहीं किया है। ऐसा नहीं है कि वे अंबानी परिवार के कार्यक्रमों से दूर रहे हों। 25 अक्टूबर 2014 को वे मुंबई में एचएन रिलायंस फाउंडेशन अस्पताल का उद्घाटन करने आए थे। इस समारोह में मोदी ने दावा किया कि प्राचीन भारत में हजारों साल पहले प्लास्टिक सर्जरी और अन्य उन्नत चिकित्सा सुविधाएं उपलब्ध थीं - यह हिंदू दक्षिणपंथी विचारधारा का जाना-पहचाना जुमला है, जो मिथकों को इतिहास के रूप में पेश करती है। भाषण का सीधा प्रसारण हुआ, जिसमें मुकेश अंबानी, उनकी पत्नी नीता और अन्य लोग उनके साथ मंच पर मौजूद थे।

भ्रष्टाचार के खिलाफ बढ़ती आवाजें – जो मोदी के चुनाव में अहम भूमिका निभाती थीं – पूर्व प्रधानमंत्री मनमोहन सिंह के दूसरे कार्यकाल के दौरान शुरू हुईं। 2010 के अंत तक, कई भारतीय एजेंसियों ने 2G घोटाले की जांच शुरू कर दी थी। सिंह से लेकर नीचे तक, कई अधिकारियों पर लापरवाही और

जानबूझकर की गई गलतियों के आरोप लगे, और कई बड़े भारतीय व्यापारिक घरानों पर मुकदमा चला।
2011 की गर्मियों में, जब गांधीवादी नेता अन्ना हजारे और उनके समर्थकों ने नई दिल्ली में भ्रष्टाचार के खिलाफ भूख हड़ताल शुरू की, तो भारत की सड़कों पर लाखों लोग विरोध प्रदर्शन में शामिल हुए। कई लोगों का मानना था कि यह सरकारी भ्रष्टाचार से निपटने में एक महत्वपूर्ण मोड़ होगा, और अधिक पारदर्शी शासन का युग निकट ही था।
सीबीआई ने 2 अप्रैल 2011 को सुप्रीम कोर्ट द्वारा इंडिया गेट के पास एक जर्जर परिसर में स्थापित विशेष अदालत में 2 जी स्पेक्ट्रम घोटाले पर अपनी पहली चार्जशीट दाखिल की। इस मामले में आरोपी कई राष्ट्रीय हस्तियों और दर्जनों पत्रकारों की भीड़ हर दिन अदालत कक्ष में उमड़ती थी। भारत के कुछ बेहतरीन वकील भी जमानत मांगने और अपने मुवक्किलों का बचाव करने के लिए आते थे, निस्संदेह भारी फीस लेकर। आप अदालत कक्ष में कुछ मिनट भी नहीं खड़े रह सकते थे कि किसी राष्ट्रीय स्तर के राजनेता, प्रसिद्ध फिल्म निर्माता या अरबपति से आपका सामना न हो जाए। महंगे इत्र और डिजाइनर कपड़े हर जगह दिखाई देते थे। सत्ताधारी यूपीए और सिविल सेवा के कई महत्वपूर्ण सदस्यों के नाम बार-बार सामने आए। सीबीआई, प्रवर्तन निदेशालय और आयकर विभाग सभी 2 जी घोटाले से जुड़े रिश्वतखोरी, कर पनाहगाहों में धन की हेराफेरी और अन्य संदिग्ध गतिविधियों के विभिन्न पहलुओं की जांच कर रहे थे।
महीने बीतते गए, यूपीए सरकार दिशाहीन साबित हुई और देश ने भ्रष्टाचार के खिलाफ अभूतपूर्व आक्रोश व्यक्त किया। सीबीआई ने उच्च पदों पर कथित भ्रष्टाचार और कदाचार के कई मामलों की जांच शुरू कर दी थी। मुंबई में, उसके अधिकारी आदर्श अपार्टमेंट घोटाले की जांच कर रहे थे, जिसका निर्माण युद्ध विधवाओं के नाम पर किया गया था और जिसे राजनेताओं, सरकारी अधिकारियों और सैन्य जनरलों को वितरित किया गया था। सीबीआई 2010 में नई दिल्ली में आयोजित राष्ट्रमंडल खेलों के संचालन में कथित अनियमितताओं की भी जांच कर रही थी। खनन क्षेत्र में निजी कंपनियों को कोयला खदानों के अनियमित आवंटन की भी जांच चल रही थी - सीएजी की एक रिपोर्ट में कहा गया था कि आवंटन में कथित नुकसान 2 जी घोटाले के बराबर था और इसे 1,86,000 करोड़ रुपये आंका गया था।

फिर, 3 दिसंबर 2012 को, वरिष्ठ पुलिस अधिकारी रंजीत सिन्हा ने सीबीआई प्रमुख के रूप में पदभार संभाला और देश को आश्वासन दिया कि “संगठन का आदर्श वाक्य – “उद्योग, सत्यनिष्ठा, निष्पक्षता” – पूरी निष्ठा से कायम रखा जाएगा। ब्यूरो के अधिकारी और कर्मचारी उन्हें सौंपे गए मामलों की जांच निष्पक्ष और स्वतंत्र तरीके से, बिना किसी भय या पक्षपात के करेंगे।” सिन्हा ने आइजैक न्यूटन का हवाला देते हुए कहा कि वे दूर तक देख सकते हैं क्योंकि वे महान हस्तियों के कंधों पर खड़े हैं। उन्होंने तुरंत काम शुरू कर दिया। सिन्हा पत्रकारों के लिए आसानी से उपलब्ध थे और जोशीले बयान देते थे। महीनों तक, भ्रष्टाचारियों से निपटने के उनके साहसिक बयानों की मीडिया में खूब चर्चा हुई और वे मध्यम वर्ग के नायक के रूप में उभरे। वास्तव में, कुछ मीडिया संस्थानों ने तो उन्हें नायक घोषित भी कर दिया। इस बीच, सिन्हा स्वयं अपनी एजेंसी द्वारा जांच किए जा रहे कई आरोपियों से मिलने में व्यस्त थे। नई दिल्ली के मध्य में स्थित उनका आधिकारिक आवास बदमाशों का पसंदीदा अड्डा बन गया था। इन मुलाकातों का कोई आधिकारिक रिकॉर्ड नहीं था और वरिष्ठ सीबीआई अधिकारी बैठकों के दौरान मौजूद नहीं थे। हालांकि, सिन्हा के आलीशान घर के प्रवेश द्वार पर तैनात भरोसेमंद सुरक्षा गार्ड अपना काम बखूबी कर रहे थे। वे उनके आगंतुकों का रिकॉर्ड रखते थे, और ये रिकॉर्ड 2014 में सार्वजनिक हुए। मैंने आदर्श घोटाले से संबंधित सीबीआई की आधिकारिक फाइलें भी जुटाईं, जिनसे पता चला कि वे संभवतः उन्हीं मामलों को दबाने की कोशिश कर रहे थे जिनकी जांच उन्हें करनी थी। नवंबर 2014 में, सुप्रीम कोर्ट ने सिन्हा को 2 जी घोटाले की जांच से दूर रहने के लिए कहा, उनके आचरण को 'गंभीर' बताया, और बारह दिन बाद, 2 दिसंबर को, वे सेवानिवृत्त हो गए।
नरेंद्र मोदी सरकार भ्रष्टाचार विरोधी बयानबाजी के बावजूद सीबीआई प्रमुख के घिनौने कारनामों पर चुप्पी साधे रही है। क्या इसका कारण यह था कि जब मोदी गुजरात के मुख्यमंत्री थे, तब सिन्हा गुजरात में हुई कई गैर-कानूनी हत्याओं की जांच की निगरानी भी कर रहे थे? जांच के दायरे में आए लोगों में मोदी के भरोसेमंद सहयोगी और अब भारत के सबसे शक्तिशाली राजनेताओं में से एक अमित शाह भी शामिल थे। हत्या के आरोपी होने के बावजूद, शाह को 2014 के चुनाव में भाजपा की जीत के बाद राष्ट्रीय अध्यक्ष नियुक्त किया गया था।

मोदी की चुप्पी के असली कारण हमें कभी पता नहीं चल पाएंगे। सिन्हा की बात करें तो, वे अब शांतिपूर्ण सेवानिवृत्त जीवन जी रहे हैं।
वहीं भारत में स्थिति में कोई बदलाव नहीं आया है। खुफिया एजेंसियों के कई सूत्रों, बाजार अनुमानों और यहां तक कि औपचारिक अध्ययनों के अनुसार, राजनीति में शामिल काले धन का पैमाना और भ्रष्टाचार दोनों ही बढ़े ही हैं। लेकिन फिर भी, यह तो वही पुरानी बात है; भाजपा ऐसा कुछ नहीं करेगी जो कांग्रेस पहले ही न कर चुकी हो। सभी राजनीतिक दल अपने कामकाज के लिए काले धन पर बहुत हद तक निर्भर हैं।
मार्च 2014 में सेंटर फॉर मीडिया स्टडीज की एक रिपोर्ट में अनुमान लगाया गया था कि 2014 के आम चुनावों में राजनीतिक दल, सरकार और उम्मीदवार लगभग 30,000 करोड़ रुपये खर्च करेंगे। वास्तविकता में, चुनाव प्रचार समाप्त होने तक, सभी राजनीतिक दलों ने कुल मिलाकर 2,000 करोड़ रुपये से भी कम खर्च घोषित किया। भाजपा और उसके उम्मीदवारों ने अन्य सभी दलों की तुलना में कहीं अधिक खर्च किया। चुनाव के कुछ महीनों बाद, राजनीतिक दलों ने चुनाव आयोग को अपने आधिकारिक व्यय विवरण प्रस्तुत किए।
ये आंकड़े कैसे थे? भाजपा ने मात्र 714 करोड़ रुपये खर्च करने का दावा किया, जबकि कांग्रेस ने सिर्फ 516 करोड़ रुपये। कुछ ही कार्यकर्ताओं ने इस पर नाराजगी जताई। न तो राजनीतिक नेताओं ने और न ही भारत निर्वाचन आयोग ने इन स्पष्ट रूप से भ्रामक आंकड़ों पर कोई टिप्पणी की।
कई सांसदों ने निजी तौर पर मुझसे स्वीकार किया है कि वे अपने चुनाव प्रचार में आमतौर पर 50 करोड़ रुपये तक खर्च कर देते हैं, जबकि बड़े राज्यों में आधिकारिक तौर पर खर्च करने की सीमा 70 लाख रुपये है। कुछ को तो टिकट खरीदने के लिए भी पैसे देने पड़े। कई राज्यों में लगभग हर मतदाता को नकद, शराब और अन्य मुफ्त उपहार दिए जाते हैं। विज्ञापन एजेंसियों और मीडिया संस्थानों में राजनीतिक विज्ञापनों की भरमार रहती है; निर्माण जैसे कई क्षेत्रों में आर्थिक गतिविधि धीमी पड़ जाती है क्योंकि पैसा चुनावी मैदान में चला जाता है; और बाजार में नकदी प्रवाह में अचानक उछाल आ जाता है। इनमें से कोई भी बात राजनीतिक दलों की आधिकारिक घोषणाओं में नहीं झलकती। इसलिए, एकमात्र तार्किक निष्कर्ष यही निकलता है कि भारतीय राजनीतिक दल खुलेआम चलने की बजाय काले बाजार में ज्यादा सक्रिय हैं।

चलिए, एंटिलिया की हमारी यात्रा वाले दिन की बात करते हैं। शाम के लगभग 5 बज रहे हैं। कर्मचारी इमारत के बाईं ओर स्थित छोटे धातु के दरवाजे से बाहर निकल रहे हैं। वे निजी एसयूवी या शटल में सवार होकर पास के बस स्टॉप और रेलवे स्टेशनों की ओर जा रहे हैं। सुरक्षा गार्ड पूरी गतिविधि पर कड़ी नज़र रख रहे हैं।
मेरा दोस्त ज़ाकिर सिगरेट पीने चला गया है। मुंबई की शाम का सूरज तेज़ चमक रहा है, लेकिन मुझे समझ नहीं आ रहा कि एंटिलिया की परछाई किस तरफ पड़ रही है। ज़रूर उसकी परछाई इमारतों और सड़कों पर दूर तक फैली होगी। क्या यह मुंबईवासियों को अस्थायी आश्रय दे रही है?
चार युवक, जिनमें से दो के पास फटे-पुराने बैग हैं और कपड़े ठीक से फिट नहीं हो रहे, सड़क के किनारे चल रहे हैं। वे शायद शहर में नए आए प्रवासी हैं, या मुंबई में कहीं भीड़भाड़ वाले आवास में अपनी नौकरी छोड़कर लौट रहे हैं। या फिर वे मेरी तरह पर्यटक भी हो सकते हैं। जैसे ही समूह परिसर की दीवार के पास पहुँचता है, वे एक सीधी रेखा में खड़े हो जाते हैं और ऊपर देखते हैं, मानो सलामी दे रही सैन्य टुकड़ी हो।
जब वे इमारत के बाहर फुटपाथ के बीच में होते हैं, तो वे थोड़ा धीमे हो जाते हैं। जैसे ही वे कंपाउंड की दीवार के अंत तक पहुंचते हैं, उनमें से एक हिंदी में कहता है: 'क्या च—है, पूरा दिखता भी नहीं।' (गाली), तुम तो पूरा देख भी नहीं सकते।

उपसंहार

तिहाड़ जेल एशिया की सबसे बड़ी जेल है, जिसमें किसी भी समय 13,000 से अधिक कैदी बंद रहते हैं। इसे 6,250 कैदियों को रखने के लिए बनाया गया था। औसतन, इसकी कुल आबादी का 10,000 से अधिक, यानी लगभग 75 प्रतिशत, विचाराधीन कैदी हैं – जो भारत की धीमी न्यायिक प्रणाली के शिकार हैं – और इनमें से कम से कम कुछ निर्दोष होने की संभावना है। हत्यारों से लेकर दहेज उत्पीड़न के आरोपी महिलाओं और पुरुषों तक, और सशस्त्र आंदोलनों से जुड़े उग्रवादियों तक, तिहाड़ जेल स्वयं भारत का एक छोटा रूप है। यह देश के उदार लोकतंत्र के रूप में उभरने के संघर्ष का भी एक पैमाना है।
भारत के कुछ सबसे धनी और शक्तिशाली परिवार नियमित रूप से तिहाड़ जेल आते- जाते रहते हैं, क्योंकि भारतीय कानून प्रवर्तन एजेंसियां समय-समय पर आधुनिक युग के इन कुलीन वर्ग के लोगों को पकड़ लेती हैं। कोई विश्वसनीय अध्ययन या तुलनात्मक आंकड़े उपलब्ध नहीं हैं, लेकिन सभी इस बात को मानते हैं कि हाल के दिनों की तुलना में तिहाड़ जेल में पहले कभी इतने प्रतिष्ठित लोग नहीं देखे गए हैं।
सहारा इंडिया समूह के अध्यक्ष सुब्रता रॉय फरवरी 2016 में तिहाड़ जेल के कैदियों में शामिल थे। रॉय की कुल संपत्ति का ज्ञात आंकड़ा नहीं है, लेकिन उन्हें देश के सबसे धनी और प्रभावशाली व्यक्तियों में गिना जाता है। अपने कई साथियों की तरह, सहारा अध्यक्ष ने भी तीन दशक पहले उत्तर प्रदेश में साधारण पृष्ठभूमि से उठकर तेजी से समृद्धि हासिल की। रॉय 28 फरवरी 2014 से जेल में हैं क्योंकि उन्होंने सुप्रीम कोर्ट के उस आदेश का पालन नहीं किया जिसमें उन्हें खुदरा निवेशकों से उनके समूह द्वारा एकत्र किए गए 24,000 करोड़ रुपये जमा करने के लिए कहा गया था।
आपराधिक जांच की गुणवत्ता पर चर्चा किए बिना, यह निष्कर्ष निकालना सुरक्षित है कि शीर्ष पदों पर बैठे लोगों पर कड़ी निगरानी रखी जा रही है। कई निचली अदालतें सबसे शक्तिशाली लोगों को भी बिना दया दिखाए दंडित कर रही हैं; और उच्च न्यायालय भी ज्यादातर मामलों में कड़ा रुख अपना रहे हैं। कानूनी प्रक्रिया का यह लोकतंत्रीकरण ही तिहाड़ के कैदियों की जनसांख्यिकी को दर्शाता है: एक वरिष्ठ राजनीतिक नेता का बेटा, जो एक विशाल व्यापारिक साम्राज्य का मालिक है, एक वरिष्ठ पुलिस अधिकारी, जो कभी

प्रधानमंत्री कार्यालय में काम कर चुका है, हरियाणा के एक पूर्व मुख्यमंत्री, लाखों अनुयायियों वाले कुछ धर्मगुरु, और अन्य।
तमिलनाडु की सर्वशक्तिशाली मुख्यमंत्री जयललिता को पड़ोसी राज्य कर्नाटक की एक निचली अदालत में आय से अधिक संपत्ति के मामले में तलब किया गया और 27 सितंबर 2014 को उन्हें जेल की सजा सुनाई गई। वह किसी आपराधिक मामले में दोषी ठहराए जाने के कारण पद पर बने रहने के लिए अयोग्य घोषित होने वाली भारत के किसी राज्य की पहली मुख्यमंत्री बनीं। मई 2015 में, कर्नाटक उच्च न्यायालय ने उन्हें आरोपों से बरी कर दिया और उसी महीने उन्होंने पुनः मुख्यमंत्री का पदभार ग्रहण किया।
अपनी इस अपमानजनक स्थिति से कुछ महीने पहले, एक अन्य वरिष्ठ राजनेता, लालू प्रसाद यादव, जो केंद्रीय मंत्री और बिहार के मुख्यमंत्री रह चुके हैं, भ्रष्टाचार के आरोप में दोषी पाए गए और रांची की बिरसा मुंडा केंद्रीय जेल में कई महीने बिताए। उन्हें लोकसभा से अयोग्य घोषित कर दिया गया था। महाराष्ट्र में, मुख्यमंत्री अशोक चव्हाण को नवंबर 2010 में इस्तीफा देने के लिए मजबूर होना पड़ा, जब यह पता चला कि आदर्श घोटाले में शामिल अपार्टमेंट मालिकों में उनके परिवार के सदस्य भी थे।
डॉ. मनमोहन सिंह की सरकार और उनकी पार्टी के कई वरिष्ठ सदस्यों को हाल के वर्षों में गिरफ्तार कर जेल भेजा गया है, जबकि उस समय कांग्रेस पार्टी सत्ता में थी। नई दिल्ली में इंडिया गेट के पास स्थित एक अदालत परिसर में, भारत के कई धनी और शक्तिशाली लोगों पर 2 जी घोटाले में कथित संलिप्तता के आरोप में मुकदमा चल रहा है।
भारत के लोकतंत्र बनने के कई वर्षों बाद तक, इसकी कानून और न्याय व्यवस्था औपनिवेशिक मानसिकता से ग्रस्त रही। प्रभावशाली व्यक्तियों पर मुक़दमा बहुत कम ही चलाया जाता था। 1970 के दशक में जब प्रधानमंत्री इंदिरा गांधी को अदालतों का सामना करना पड़ा, तो यह एक असाधारण क्षण था। यदि कोई ईमानदार अधिकारी किसी शक्तिशाली भ्रष्ट व्यक्ति के खिलाफ़ खड़ा होता, तो लगभग निश्चित था कि उस अधिकारी का करियर बर्बाद हो जाएगा।
भारत धीरे-धीरे बदल रहा है, उसका लोकतंत्र परिपक्व हो रहा है। कई प्रगतिशील कानून शासन प्रक्रियाओं तक पहुंच को आसान बना रहे हैं, जिनमें सबसे महत्वपूर्ण सूचना का अधिकार अधिनियम, 2005 है। देश भर में दर्जनों कार्यकर्ता इस अधिनियम का उपयोग कर रहे हैं, भले ही कुछ अन्य लोगों ने इसके

लिए अपनी जान गंवाई हो। भ्रष्टाचार निवारण और मुखबिरों के संरक्षण से संबंधित कानूनों का आधुनिकीकरण किया जा रहा है। दृढ़ कार्यकर्ताओं के स्वयंसेवी समूह राज्य के खिलाफ आवाज उठा रहे हैं। असहमति की भावना गहरी और परिपक्व हो रही है।
2011 में भ्रष्टाचार विरोधी आंदोलन ने हजारों लोगों को सड़कों पर ला खड़ा किया और राजनीतिक व्यवस्था को उनकी कई मांगों को मानने के लिए मजबूर कर दिया। इससे एक नई राजनीतिक पार्टी का उदय हुआ, जो राजनीतिक वित्तपोषण में पारदर्शिता और शासन की एक नई अवधारणा का वादा करती है, जो भारत में गरीबों की चौंका देने वाली संख्या की वास्तविकता को ध्यान में रखेगी। बेशक, पार्टी के लिए अभी शुरुआती दौर है।
विश्लेषकों का कहना है कि समकालीन भारत में बड़े पैमाने पर भ्रष्टाचार की जड़ें राजनीतिक दलों के अपारदर्शी वित्तपोषण में निहित हैं। लगभग सभी मुख्यधारा की पार्टियां कॉरपोरेट जगत से प्राप्त काले धन पर अत्यधिक निर्भर हैं, जो अंततः उनसे अपना लाभ वसूलता है। इस प्रथा और इसके आम नागरिक पर पड़ने वाले प्रभावों के प्रति असंतोष बढ़ता जा रहा है, जो सामाजिक व्यवस्था में सबसे निचले पायदान पर है।
दीर्घकालिक रुझानों और अकादमिक विश्लेषणों से परे, भारत की तात्कालिक वास्तविकताएँ चिंताजनक हैं। हर बार जब कोई घोटाला सामने आता है, तो लोग आशा करते हैं कि इससे सार्वजनिक जीवन में अधिक पारदर्शिता आएगी। लेकिन हर बार, बिचौलिए, राजनेता, सरकारी अधिकारी और अन्य लोग घोटाले के बाद अपने करियर को आगे बढ़ाने के नए-नए तरीके खोज लेते हैं। फिर नए बिचौलिए सामने आते हैं, रिश्वतखोरी बढ़ती है और कुकर्मों को छिपाने के नए-नए तरीके सामने आते हैं। ऐसा लगता है कि ये घोटाले भ्रष्ट व्यवस्था को फिर से मजबूत करने के लिए एक नई गति प्रदान करते हैं।
युवा राजीव गांधी की ईमानदारी पर पड़े कलंक से लेकर उनके बाद आए गठबंधनों और राजनेताओं के पतन तक, हिंदू दक्षिणपंथियों द्वारा बाबरी मस्जिद पर हमले से लेकर 2002 में गुजरात में हुए मुस्लिम विरोधी नरसंहार तक, मांस रखने पर नागरिकों की हत्या करने वाले हिंसक समूहों से लेकर अकादमिक महत्व की पुस्तकों पर प्रतिबंध तक, महिलाओं को उनके मौलिक अधिकारों से वंचित करने वाली स्त्री-द्वेषी धार्मिक मान्यताओं से लेकर भारत की अशांत परिस्थितियों का फायदा उठाने वाले धार्मिक आंदोलनों तक – भारत की एक अरब

से अधिक आबादी इस अनुदार लोकतंत्र का बोझ उठा रही है। हाँ, बदलाव आ रहा है।
दीर्घकाल में, हम शायद एक ऐसे राष्ट्र के निर्माण की दिशा में काम कर रहे हैं जो अपने लोगों के लिए काम करे।
लेकिन वह दीर्घकालिक समय अभी बहुत दूर है। उस समय तक हम सब मर चुके होंगे।
अल्पकाल में, बहुत से भारतीय एक पक्षपातपूर्ण पूंजीवादी राज्य में निराशा में जी रहे हैं। संसाधनों और राज्य की इच्छा पर कुछ मुट्ठी भर लोगों का यह एकाधिकार समाप्त होना चाहिए।

नोट्स

1. यह अनुमान 2010 में आंध्र प्रदेश उच्च न्यायालय के एक न्यायाधीश द्वारा लगाया गया था।
न्यायमूर्ति वी.वी. राव। कई आधिकारिक अध्ययन हुए हैं जिन्होंने एक अलग ही तस्वीर पेश की है।
भारत में लंबित मामलों की भयावह तस्वीर। इनमें से दो मामले यहां देखे जा सकते हैं: थोराट
प्रतिवेदन:
http://www.mha.nic.in/hindi/sites/upload_files/mhahindi/files/pdf/criminal_justic
e_system.pdf; विधि आयोग की 2014 की रिपोर्ट: http://lawcommissionofindia.nic.in/reports/Report_No.245.pdf
2. अनिरुद्ध कृष्णा, ‘सार्वजनिक सेवाओं तक पहुंच प्राप्त करना और लोकतांत्रिक राज्य’
भारत में: मध्य में संस्थाएँ’, तुलनात्मक अंतर्राष्ट्रीय अध्ययन
विकास, खंड 46, अंक 1, 2011, पृष्ठ 98-117।

[redacted]

[redacted]

विशेष रूप से प्रोफेसर डेबोरा विंसलो नटर का आभारी हूं, जो नेतृत्व की एक दयालु और दृढ़ प्रोफेसर हैं, जिन्होंने यह सुनिश्चित किया कि मैं फ्लेचर में दाखिला लूं। डीन नटर ने हर महाद्वीप में, हर दूसरे देश में नेताओं को प्रशिक्षित किया है।
दिल्ली में इतिहास की शिक्षिका और शोधकर्ता सरोज रथ ने पुस्तकालयों और अभिलेखागारों में मेरे साथ काम किया और हमने भारतीय लोकतंत्र की विभिन्न संस्थाओं पर सैकड़ों पृष्ठों की फोटोकॉपी और नोट्स एकत्र किए। मैंने इस पुस्तक में उस सामग्री का लगभग न के बराबर ही उपयोग किया है। मैंने जो शुरू किया था - भारतीय संस्थाओं का अकादमिक मूल्यांकन - वह अंत में लिखी गई पुस्तक नहीं है। लेकिन वह सामग्री बहुत सहायक रही है और सरोज आज भी मेरी करीबी सहयोगी हैं।
भारत भर की यात्रा के दौरान कई लोगों ने मेरी सहायता की। छत्तीसगढ़ में, अधिवक्ता सुदीप श्रीवास्तव ने मुझे भारतीय लोकतंत्र के गुप्त पहलुओं से रूबरू कराया; रायगढ़ में, अनिल अग्रवाल ने मुझे होटल का बिल नहीं चुकाने दिया; और कोरबा में, लक्ष्मी चौहान मुझे राख के उन कई तालाबों की एक अनोखी यात्रा पर ले गईं, जहाँ भारत अपने गंदे रहस्यों को छुपाता है।
जब भी मैं मुंबई पहुँचता, ज़ाकिर अहमद मुझे लेने के लिए हवाई अड्डे पर मौजूद होते, और हम दोनों, प्रेम शुक्ला के साथ, लंबी बातचीत करते हुए अपना दिन समाप्त करते। हालाँकि वे भारतीय राजनीतिक विचारधारा के दो चरम छोरों पर हैं, फिर भी उन्होंने आपराधिक दुनिया को समझने में मेरी मदद करने के लिए अपने मतभेदों को एक तरफ रख दिया। वाणिज्यिक राजधानी में राकेश मारिया और महेश नायर सहित कई अन्य लोगों ने भी मेरी बहुत सहायता की। मुझे केरल और दिल्ली जैसे स्थानों पर भी कई लोगों से निस्वार्थ सहायता मिली। यह एक लंबी सूची है, और मैं यहाँ सभी का नाम नहीं ले सकता, लेकिन मैं उन सभी को कृतज्ञता के साथ याद करता हूँ।
यह पुस्तक कई मायनों में एक पत्रकार के रूप में मेरे जीवन की कहानी भी है। मेरे पहले संपादक, जॉन दयाल ने पत्रकारों की एक पीढ़ी को सिखाया कि वे बाहर जाकर असुविधाजनक सच्चाइयों की खोज करें। मुझे अपनी पीढ़ी के कई अन्य उत्कृष्ट संपादकों के साथ काम करने का सौभाग्य प्राप्त हुआ है - एम.जे. अकबर, निखिल लक्ष्मण, गौतम अधिकारी, आर. जगन्नाथन, अयाज़ मेमन, विनय कामत, आरती आर. जेरथ, सीमा मुस्तफा, शेखर भाटिया और अन्य।

टाइम्स ऑफ इंडिया में जयदीप बोस एक उदार बॉस थे। टाइम्स ऑफ इंडिया और इकोनॉमिक टाइम्स के राष्ट्रीय ब्यूरो और अन्य विभागों में स्वर्गीय अरिंदम सेनगुप्ता, दिवाकर और सहकर्मियों ने मेरे तर्कों को निखारने में बहुत मदद की। सितंबर 2015 में मैंने द हिंदू में काम करना शुरू किया, जहाँ एन. राम, मुकुंद पद्मनाभन, मालिनी पार्थसारथी, एन. रवि और अन्य सहकर्मी एक ऐसी अनूठी संस्था चलाते हैं जो मुझे उन सच्चाइयों को खोजने की स्वतंत्रता देती है जिन्हें प्रकाशित करना मुश्किल होता है। दोनों अखबारों में दर्जनों सहकर्मियों और दोस्तों ने इस किताब को लिखने में मेरी मदद की। इस लंबी सूची में शामिल सभी लोगों को मेरा हार्दिक धन्यवाद।
बशारत पीर ने मुझे शुरुआत में ही पुस्तक की संरचना में सुधार के लिए कई सुझाव दिए, जोनाथन शाइनिन ने कथा शैली और पुस्तक के अन्य पहलुओं पर बहुमूल्य सुझाव दिए, और विनोद के. जोस का मुझ पर हमेशा सकारात्मक प्रभाव रहा। वाशिंगटन डीसी में मेरी सहपाठी और वरिष्ठ पत्रकार गेरी स्मिथ, और स्टाइल मैटर्स की टीम - रॉबर्ट मरे, सुज़ैन मरे और क्रिस्टोफ़ लेरॉय - ने मुझे अंतिम संरचना तय करने में मदद की।
मेरे बचपन के कई दोस्त हैं जो आज भी मेरे वाद-विवाद के साथी और बौद्धिक सहयोगी हैं। उनकी सूची बनाना संभव नहीं है, लेकिन मैं बायजू सुकुमारन, सोनी सोमराजन, सीजो थॉमस, श्याम कुमार, रॉबिन पी.आर., उल्लेख करना चाहूंगा, जो इस पुस्तक की यात्रा का हिस्सा रहे हैं। इनके अलावा, मेरे शिक्षण संस्थान, सैनिक स्कूल कझाकूटम, जो भारत के समाजवादी अतीत द्वारा निर्मित कई सरकारी स्कूलों में से एक है, के व्यापक समुदाय का भी मेरे लेखन पर गहरा प्रभाव पड़ा है।
मेरे पत्रकार मित्रों अनिरुद्ध बहल, परंजय गुहा ठाकुरता, के.एन. अशोक, जयंत जैकब, जिगीश ए.एम., डी. धनसुमोद, सुधी रंजन सेन, गौतम दत्त, अजमेर सिंह और दलीप सिंह; और जीवन के अन्य क्षेत्रों से जुड़े मित्रों, जिनमें अनीसा द्राबू, राजीव जैन, रियास कोमू और कई अन्य शामिल हैं, ने निस्वार्थ भाव से अपना समय देकर मेरी सहायता की है। उनके सुझावों, विशेषज्ञ रिपोर्टों और अनेक टिप्पणियों से मुझे बहुत लाभ हुआ है।
मैं डॉ. ज्ञानेंद्र बदगैयन के प्रति विशेष आभार व्यक्त करना चाहता हूँ, जो मेरे परिचितों में सबसे तेज दिमाग वाले व्यक्तियों में से एक हैं, जिनकी

टिप्पणियों ने पिछले कुछ वर्षों में मेरे लेखन में महत्वपूर्ण गुणात्मक परिवर्तन लाया है।
मेरे सहपाठी पी.एन. शनावास, जो एक सफल उद्यमी और प्रतिभाशाली फोटोग्राफर हैं, एक ऐसे व्यक्ति हैं जिनसे मैं हर तरह की मदद और समस्या निवारण के लिए बिना किसी झिझक के बार-बार संपर्क करता हूं।
जब से मेरे एजेंट गिलोन ऐटकेन और श्रुति देवी को कॉन्सेप्ट नोट मिला, तब से वे किताब के हर चरण में मेरा उत्साहपूर्वक समर्थन कर रहे हैं। उन्होंने मुझे केंद्रित रहने और सही दिशा में आगे बढ़ने में मदद की।
मैं हार्परकॉलिन्स पब्लिशर्स इंडिया, इसकी प्रकाशक और मुख्य संपादक कार्तिका वी.के. का बहुत आभारी हूं, जिन्होंने पहले प्रस्ताव को देखने के समय से ही मेरे प्रयासों में सहयोग दिया, और अजिथा जी.एस. का भी, जिन्होंने पुस्तक की अंतिम संरचना का सुझाव दिया और इसका संपादन किया। पांडुलिपि के एक संस्करण को पढ़ने के लिए शाम्या दासगुप्ता का भी धन्यवाद।
अंत में, मेरी अनूठी बचपन की यादों के बिना यह पुस्तक संभव नहीं हो पाती, जो अनुभवों का एक गहन सैलाब था। मेरे माता-पिता, के.एम. जोसेफ और अन्नाम्मा ने परिवार की आर्थिक तंगी के बावजूद मुझे बोर्डिंग स्कूल में भेजने का साहसिक निर्णय लिया; मेरे भाई-बहन - जॉय, सिबी और सोजी - ने बचपन की कई सुख-सुविधाओं का त्याग किया ताकि मुझे सर्वोत्तम शिक्षा और बेहतर जीवन मिल सके। मेरे कई विचार, जो मैंने यहाँ लिखे हैं, उनके साथ वर्षों की बातचीत से और भी पुख्ता हुए हैं।
उम्र बढ़ने के साथ-साथ हमारी भावनाएं और मूल्य भी विकसित होते हैं, और परिवार शुरू करने और बुढ़ापा गुजारने के लिए प्रिया से बेहतर साथी की मैं कल्पना भी नहीं कर सकता था। हमारी बेटी, सुप्रिया, हमारे लिए अब तक का सबसे बड़ा उपहार है।
यह किताब सुप्रिया, उसके कई चचेरे भाई-बहनों और दोस्तों के लिए भारत को एक बेहतर जगह बनाने की मेरी एक छोटी सी कोशिश है। प्रिया और सुप्रिया ने मेरी साधारणता और अनियमित व्यवहार के खिलाफ संघर्षों को सहन किया है, और हमेशा मेरी मांगों को मानकर मुझे लाड़-प्यार दिया है। मेरी सास, डॉली सोलोमन, हर कदम पर मेरा मजबूत सहारा बनी हुई हैं।
अगर आप भारत जैसे देश में दो दशकों से पत्रकार हैं, तो आपको जनगणना की सूची प्रकाशित करके उन सभी लोगों का आभार व्यक्त करना होगा जिन्होंने आपकी

सहायता की है। इस देश की अराजकता में भी कुछ बेहद दयालु हृदय नज़र आते हैं। मैं भारत की अवधारणा से हमेशा अचंभित रहूंगा और आशा करता हूं कि एक दिन ऐसा आएगा जब इस देश में कोई भी भूखा या डरा हुआ नहीं सोएगा। अंततः, यह पुस्तक मेरे देशवासियों की पीड़ा और हताशा की अभिव्यक्ति है, जो अक्सर इसलिए हार मान लेते हैं क्योंकि भारत ने उन्हें निराश किया है।

किताब के बारे में

‘वह चाहते थे कि मैं आपसे अनुरोध करूं कि आप उनके संबंधों के बारे में और कुछ न लिखें क्योंकि आपके लेख के कारण प्रत्यक्ष विदेशी निवेश (एफडीआई) बढ़ाने के हमारे प्रयासों को भारी झटका लगा है।’ वह एक ऐसी कंपनी के प्रवक्ता थे जिसने हेराफेरी करके दूसरी पीढ़ी के मोबाइल नेटवर्क संचालित करने के लिए लाइसेंस और रेडियो स्पेक्ट्रम हासिल किया था, और जो आपराधिक जांच का सामना कर रही थी — और अरब जगत के एक निवेशक से लगभग 3,000 करोड़ रुपये जुटाने की कोशिश कर रही थी।
उसने आस-पास की मेजों पर नज़र डाली, और माथे से पसीना टपकते हुए फुसफुसाया: 'मालिक चाहते हैं कि मैं आपको बताऊँ कि आपकी जो भी ज़रूरत हो, वो उसका ख्याल रख सकते हैं - गाड़ी, घर, कुछ भी।' मैंने चुप्पी को कुछ देर तक रहने दिया, फिर सड़क के उस पार एक विशाल औपनिवेशिक बंगले की ओर इशारा किया। 'क्या आपका मतलब उन घरों में से एक से है?' परिचित माहौल में लौटकर उसने जवाब दिया: 'मेरे मालिक को कम मत समझो। वो किसी भी चीज़ का ख्याल रख सकते हैं।' www.AFeastOfVultures.com

लेखक के बारे में

जोसी जोसेफ नई दिल्ली में रहने वाले एक पुरस्कार विजेता खोजी पत्रकार हैं। उनकी कहानियों ने बार-बार सार्वजनिक बहस को जन्म दिया है और भारत में महत्वपूर्ण नीतिगत और व्यवस्थागत परिवर्तनों में उनका योगदान जारी है। उनकी खोजी कहानियों में आदर्श अपार्टमेंट घोटाला, नौसेना युद्ध कक्ष रिसाव मामला, राष्ट्रमंडल खेलों के आयोजन से जुड़े हालिया घोटालों के कई पहलू, 2 जी स्पेक्ट्रम आवंटन घोटाला और अन्य सरकारी निर्णय शामिल हैं जिन्होंने शासन में हर स्तर पर भाई-भतीजावाद और भ्रष्टाचार को उजागर किया है।
प्रेम भाटिया ट्रस्ट ने उन्हें 2010 का भारत का सर्वश्रेष्ठ राजनीतिक पत्रकार चुना, 'उनकी उन सनसनीखेज खबरों और खुलासों के लिए, जिनमें घोटालों की एक सूची शामिल है जो राजनीतिक जगत में जाने-माने नाम बन चुके हैं।' जुलाई 2013 में, इंडियन एक्सप्रेस समूह द्वारा संचालित रामनाथ गोयनका फाउंडेशन ने उन्हें प्रिंट मीडिया में वर्ष का सर्वश्रेष्ठ पत्रकार पुरस्कार से सम्मानित किया।
जोसेफ दिल्ली मिड डे, द एशियन एज, द ब्लिट्ज, रेडिफ डॉट कॉम, इंडिया अब्रॉड के साथ काम कर चुके हैं और अगस्त 2015 तक द टाइम्स ऑफ इंडिया में विशेष परियोजनाओं के संपादक थे। वर्तमान में वे द हिंदू के राष्ट्रीय सुरक्षा संपादक हैं।
जोसेफ ने टफ्ट्स विश्वविद्यालय के फ्लेचर स्कूल ऑफ लॉ एंड डिप्लोमेसी से अंतरराष्ट्रीय संबंधों में मास्टर डिग्री और केरल विश्वविद्यालय से गणित में बैचलर ऑफ साइंस की डिग्री प्राप्त की है।
वह अपनी पत्नी प्रिया और बेटी के साथ नई दिल्ली में रहते हैं।
सुप्रिया द्वारा लिखित और www.josyjoseph.in पर उपलब्ध।

हमसे बात करें

ट्विटर पर बातचीत में शामिल हों
http://twitter.com/HarperCollinsIN
हमारी किताबों के बारे में पोस्ट ढूंढने और उन्हें अपने दोस्तों के साथ शेयर करने के लिए हमें फेसबुक पर लाइक करें।
दोस्त
http://www.facebook.com/HarperCollinsIndia
इंस्टाग्राम पर हमारी फोटो स्टोरीज़ को फॉलो करें http://instagram.com/harpercollinsindia/
Tumblr पर हमारी किताबों से जुड़ी मज़ेदार तस्वीरें, उद्धरण और बहुत कुछ पाएं।
http://www.tumblr.com/blog/harpercollinsindia

भारत में पहली बार 2016 में प्रकाशित।
हार्परकॉलिन्स पब्लिशर्स इंडिया
कॉपीराइट © जोसी जोसेफ 2016
पी-आईएसबीएन: 978-93-5029-751-3
ईपब संस्करण © अगस्त 2016 ई-आईएसबीएन: 978-93-5029-752-0

2 4 6 8 10 9 7 5 3 1

जोसी जोसेफ इस कृति के लेखक के रूप में पहचाने जाने के नैतिक अधिकार पर जोर देती हैं।
इस पुस्तक में व्यक्त विचार और मत लेखक के अपने हैं और
तथ्य उनके द्वारा दी गई जानकारी के अनुसार हैं, और प्रकाशक किसी भी प्रकार से इसके लिए उत्तरदायी नहीं हैं।
जो उसी।
कॉपीराइट अधिनियम, 1957 के तहत सभी अधिकार सुरक्षित हैं। आवश्यक भुगतान करने पर
शुल्क के संबंध में, आपको गैर-अनन्य, गैर-हस्तांतरणीय पहुंच का अधिकार प्रदान किया गया है।
और इस ईबुक का पाठ स्क्रीन पर पढ़ें। इस पाठ का कोई भी भाग निःसंकोच नहीं किया जा सकता है।
पुनरुत्पादित, प्रसारित, डाउनलोड, डीकंपाइल, रिवर्स-इंजीनियर या
किसी भी सूचना संग्रहण एवं पुनर्प्राप्ति प्रणाली में संग्रहीत या उसमें डाली गई कोई भी जानकारी, किसी भी स्थिति में
किसी भी रूप में या किसी भी माध्यम से, चाहे इलेक्ट्रॉनिक हो या यांत्रिक, जो अब ज्ञात हो या
इसके बाद आविष्कार किए गए किसी भी उत्पाद को हार्परकॉलिन्स की स्पष्ट लिखित अनुमति के बिना नहीं बनाया जा सकता है।
पब्लिशर्स इंडिया।
Cover design: Saurav Das
www.harpercollins.co.in
हार्परकॉलिन्स पब्लिशर्स
ए-75, सेक्टर 57, नोएडा, उत्तर प्रदेश 201301, भारत
1 लंदन ब्रिज स्ट्रीट, लंदन, SE1 9GF, यूनाइटेड किंगडम

□□□□□□□□□ □□□□□□, 55 □□□□□□□□ □□□, □□□□□ 2900, □□□□□□□, □□□□□□□□□ M5R 3L2
□□ 1995 □□□□□□□ □□□□, □□□□□□□□□□, □□□□□□□□□ M1B 5M8, □□□□□□
25 □□□□□ □□□□, □□□□□□□, □□□□□□, □□□□□ □□□□□ □□□□□□ 2073, □□□□□□□□□□□□□
195 □□□□□□□□, □□□□□□□□□□, □□□□□□ 10007, □□□□□□

विषयसूची

शीर्षक पेज

विषयसूची

परिचय
प्रस्तावना
बिचौलिए
1. गली के उस पार रहने वाला मरम्मत करने वाला
2. द माइटी टाइपिस्ट
3. हथियार और बिचौलिए
4. अंदरूनी लोग और अपराधी
भाग दो
अत्यंत निजी निजी क्षेत्र
5. आसमान के लिए लड़ाई
6. हत्या का विश्लेषण
7. अस्थायी ऑपरेटर
भाग तीन
बड़ी लीग
8. खेल के उस्ताद
9. असाधारण सज्जनों की लीग
10. श्री अंबानी के लिए एक घर उपसंहार
नोट्स
स्वीकृतियाँ
किताब के बारे में
लेखक के बारे में
कॉपीराइट